PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor : 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Adv.
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor : 7.834

Gina Shodh SANGAM

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES MONTHLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

सानिया प्रकाशन एवं गिना प्रकाशन द्वारा
संयुक्त रूप से नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2394-6458
Impact Factor :

RESEARCH JOURNAL OF MEEMANSHA

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES HALF YEARLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Editor-in-Chief : Dr. Lata S. Patil
Managing Editor : Dr. Jaivir Langyan M. 9728790909

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी (रजि.) के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2348:5639

SHODH SAMALOCHAN Jan-March : 2026 Dr. Versha Rani, Dr. Naresh Sihag, Adv.

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा भारत-नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Vol. : 13, Issue : 1 Jan-March : 2026

Executive Editor :
Dr. Varsha Rani

Editor :
Dr. Naresh Sihag
Advocate

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.) द्वारा प्रकाशित

संस्थापक संपादक
स्व. फतेहचंद

SHODH SAMALOCHAN

शोध-समालोचन (त्रैमासिक)

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REREREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वर्ष-13, अंक-1 जनवरी-मार्च / 2026 (भाग-1) आईएसएसएन : 2348-5639

संरक्षक
• डॉ. इस्पाक अली, बैंगलुरु

संपादक
• डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' एडवोकेट

कार्यकारी संपादक
• डॉ. वर्षा रानी

प्रबंध संपादक
• डॉ. मुकेश 'ऋषिवर्मा'

सह-संपादक
• डॉ. लता एस. पाटिल,
• डॉ. सुलक्षणा अहलावत

अक्षर संयोजन
• मो. सलीम

कानूनी सलाहाकार
• डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
• अजीत सिहाग, एडवोकेट

अंतरराष्ट्रीय सम्पादक मंडल

• आशीष कुमार, गाजियाबाद
• डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी, नेपाल
• डॉ. निशीथ गौड, आगरा
• डॉ. राजेश शर्मा, श्रीगंगानगर
• श्री शियोन छन श्यू, चीन
• डॉ. ऋतु शर्मा ननंन पांडे, नीदरलैंड
• डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट, श्रीनगर
• डॉ. दीपशिखा, पटियाला
• डॉ. सुनीता शर्मा, ऑस्ट्रेलिया
• श्री राकेश शंकर भारती, युक्रेन
• डॉ. के.के. मल्होत्रा, कैनेडा
• डॉ. आशीष कुमार दीपांकर, मेरठ
• डॉ. कामिनी कौशल, गाजियाबाद
• डॉ. रवि शंकर सिंह, आरा

1. 'शोध-समालोचन' का प्रबंधन और संपादन पूर्णतः अवैतनिक है।
2. 'शोध-समालोचन' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के अपने हैं। उनके प्रति वे स्वयं उत्तरदायी है।
3. पत्रिका से संबंधित प्रत्येक विवाद का न्याय क्षेत्र भिवानी न्यायालय ही मान्य होगा।
4. प्रकाशक/ स्वामी डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से मुद्रित करवाया।

'शोध समालोचन' की सदस्यता का शुल्क भुगतान राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है। बैंक का विवरण निम्नानुसार है–**बैंक :** PUNJAB NATIONAL BANK **Branch :** Yamuna Vihar, Delhi-110053 **IFSC :** PUNB0225600 **Account Holder :** SANIA PUBLICATION **Current Account No.** 2256002100405546 भुगतान की मूल रसीद, शोध-पत्र पत्रिका की ई-मेल पर भेजना अनिवार्य है।

नोट :- इस अंक की प्रिंट कॉपी खरीदने के लिए सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से सम्पर्क करें मो. 9818128487

मूल्य : 650/- रु. एक प्रिंट प्रति वार्षिक 2500/- रु.

विषय विशेषज्ञ सलाहकार समिति/ संपादकीय मंडल :

- **Dr. Mudita Popli**
  Principal, Maa Karni B Ed College Nal, Bikaner
- **Dr. Tapasya Chauhan**
  Assistant Professor, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (Utter Pradesh)
- **Dr. Om Prakash Mehrara**
  Director, Shri Ramnarayan Dixit PG College, Srivijaynagar, Distt. Anupgarh (Rajasthan)
- **PRINCE KUMAR**
  UGC NET-JRF, History, Senior Researcher, University History Department, B.R.A.Bihar University Muzaffarpur, Bihar
- **Dr Kanta Verma**
  Assistant professor, Political science, Govt College Lanji Balaghat, District Balaghat, M.P.
- **Dr. Sainath Kabade**
  Assistant Professor, Department of Educational Social Sciences, NIE, NCERT, New Delhi.
- **Mr. Sagar Gopal Rathod**
  Assistant professor, School of Social Science, Punyashlok Ahilyadevi Holkar Solapur University, Maharashtra.
- **Dr (Smt.) Manjulata Kashyap**
  Professor (Economics),Govt.T.C.L.P.G. College Janjgir, Chhattisgarh
- **Dr. AMBILI V. S.**
  Assistant Professor, Department of Hindi,
  N.S.S. College, Pandalam, Pathanamthitta Distt. University of Kerala.
- **Dr. Anju Bala**
  Assistant Professor Hindi, Guru Nanak Girls College, Yamunanagar-135001
- **Dr. Tikaram Sarthi**
  Hasmukh, Lecturer, Govt H.S.S.Churteli, Dist. Sakti (Chhattisgarh)-495688
- **Dr. Atul Chand**
  Hod Defence & Strategic Studies/ ex Principal in-charge "Government Degree college Baluwakote Pithoragarh "Uttarakhand
- **Dr. Vimal Parmar**
  Assistant Prof. Rajasthan P.G. Law College, Chirawa , Rajasthan
- **Dr. Archana Tiwari** , Assistant Professor , History and Indian Culture, Uni. Rajasthan, Jaipur
- **Sneha Deepak Wankhede**
  Assistant professor Hindi Department, Rajkumar Kewalramani College Jaripatka Nagpur, Maharashtra
- **डॉ. श्रीमती अभिलाषा सैनी**
  प्राचार्य, स्व. रामनाथ वर्मा शासकीय महाविद्यालय, मोपका, जिला–बलौदा बाजार, छत्तीसगढ़
- **डॉ. मोहित शर्मा**
  श्री सर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय, निम्बार्क तीर्थ किशनगढ़, जिला अजमेर (राजस्थान)
- **रजनी प्रिया**
  राँगाटाँड़ रेलवे कॉलोनी, क्वा.सं. 502/136, तरुण संघ क्लब दुर्गा मंदिर, धनबाद, पोस्ट जिला–धनबाद, झारखंड

- **डॉ. मीरा चौरसिया,** चमनलाल महाविद्यालय लंढौरा, रुड़की, हरिद्वार, उत्तराखण्ड-247664
- **डॉ. आँचल कुमारी,** असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी
  राम चमेली चड्ढा विश्वास गर्ल्स कॉलेज गाजियाबाद चौधरी चरणसिंह युनिवर्सिटी, मेरठ (उ. प्र.)
- **डॉ. प्रमोद नाग**
  सहायक प्राध्यापक, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेजुएट स्टडीज, बेंगलुरु-560107
- **डॉ. चन्द्रशेखर सिंह**
  समाज कार्य विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी
- **लेफ्टि. डॉ. सन्दीप भांभू**
  शारीरिक शिक्षा विभाग, टॉटिया वि.वि. श्रीगंगानगर
- **डॉ. सरिता भवानी मालवीय**
  असिस्टेंट प्रोफेसर, फैकल्टी ऑफ लॉ., आर.के.डी.एफ. विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)
- **डॉ. संदीप कुमार,** असि. प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, कन्हैयालाल मानिकलाल मुंशी हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **पल्लवी आर्य**
  असि. प्रोफेसर, भाषाविज्ञान विभाग, के.एम.आई. डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **डॉ. अमित कुमार सिंह**
  डी. लिट्., असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, के.एम. आई., डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
- **कोकिला कुमारी**
  शोद्यार्थी, हिंदी विभाग, राँची वि.वि. राँची, झारखंड
- **डॉ. तनु श्रीवास्तव**
  असिस्टेंट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र), स्कूल ऑफ सोशल साइंस, देवी अहिला विश्वविद्यालय, इन्दौर
- **डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी**
  उप-प्राध्यापक, केंद्रीय हिन्दी विभाग, त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल
- **डॉ. जगदीप दुबे**
  सहायक प्राध्यापक वाणिज्य (म.प्र.), शासकीय आदर्श महाविद्यालय, डीनडोरी (म.प्र.)
- **डॉ. श्रीकांत राठोड**
  सहायक प्राध्यापक हिंदी विभाग, श्री शांतेश्वर शिक्षा संस्थान, श्री जी.आर. गांधी कला, श्री वाय ए पाटील वाणिज्य एवं श्री एम पी दोशी विज्ञान महाविद्यालय, इंडी, जिला विजयपुर, कर्नाटक
- **डॉ. मंजू देवी**
  सहायक आचार्य श्री बालाजी टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, जयपुर
- **डॉ. सुनीता सारस्वत**
  सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग), सिंघानिया विश्वविद्यालय, पचेरी बड़ी झुंझनू, राजस्थान
- **प्रा. डॉ. बोईनवाड कृष्णा बाबुराव**
  सहा. प्रा. दिगंबरराव बिंदू कला वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, भोकर. जिला नांदेड, महाराष्ट्र
- **डॉ. माया गोला,** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)
- **श्रीराम**
  एसोसिएट प्रोफेसर हिंदी, राजकीय आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, बीकानेर

Request to Writers

Send quality original and unpublished works written on language, literature, society, science and culture. For publication, along with the translated works, also send the letters of consent received from the original authors. Compositions should be typed in Hindi Unicode Mangal font, English Time Roman. At the beginning of the article, a summary of the article is required which should be between 150 to 200 words maximum. The abstract must reflect the purpose of writing the article. Also write 5 to 7 'key words' (seed words) according to the article.

Write the article by dividing it appropriately into subheadings. Be sure to give a conclusion at the end of the article. The word limit should be 2000 to 2500 words. List of bibliographies at the end of the article APA Be in the format of. While sending the article, please write your name, address, phone number and title of the article in the e-mail. Submit a declaration to the effect that the article is original, unpublished, the author and not the editorial board will be responsible for any dispute related to it in future.

At the end of the composition, mention your complete postal address, mobile number and e-mail address.

- Editor

लेखकों से निवेदन

भाषा, साहित्य, समाज, विज्ञान एवं संस्कृति पर लिखी गयी स्तरीय मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएं भेजें। प्राकशनार्थ अनूदित रचनाओं के साथ मूल लेखकों से प्राप्त सहमति पत्र भी भेजें। रचनाएँ हिंदी यूनिकोड मंगल फान्ट अंग्रेजी टाइम रोमन में टंकित होनी चाहिए। लेख के प्रारंभ में लेख का सार अपेक्षित है जो अधिकतम 150 से 200 शब्दों के मध्य हो। सार में लेख लिखने का उद्देश्य अवश्य परिलक्षित होना चाहिए। लेख के अनुरूप 5 से 7 (की वर्ड) (बीज शब्द) भी लिखें। लेख को यथोचित उपशीर्षकों में विभाजित करके लिखें। लेख के अंत में निष्कर्ष अवश्य दें। शब्द सीमा 2000 से 2500 शब्दों की हो। आलेख के अंत में संदर्भ ग्रंथों की सूची ए.पी.ए. के प्रारूप में हो। लेख भेजते समय अपने नाम, पता, फोन नंबर एवं लेख का शीर्षक ई-मेल में अवश्य लिखें। इस आशय का एक घोषणा-पत्र प्रस्तुत कर दें कि लेख मौलिक है, अप्रकाशित है, भविष्य में इससे संबंधित किसी भी विवाद के लिए लेखक उत्तरदायी होंगे संपादक मंडल नहीं।

रचना के अंत में अपना पूरा डाक पता, मोबाइल नंबर और ई-मेल पता अंकित करें।

-संपादक

प्रकाशित पत्रिका प्राप्त करने के लिए संपर्क करे :

सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094

मोबाइल : 9818128487, 8383042929

ISSN : 2348-5639

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

[भाग III—खण्ड 4] भारत का राजपत्र : असाधारण 105

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

संपादकीय

प्रिय पाठको,

शोध, समालोचना और विचार—ये तीनों किसी भी सशक्त बौद्धिक परंपरा के आधार स्तंभ हैं। शोध समालोचन त्रैमासिक पत्रिका का जनवरी-फरवरी-मार्च 2026 अंक इन्हीं स्तंभों को केंद्र में रखकर पाठकों, शोधार्थियों और विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत है। यह पत्रिका केवल शोध आलेखों के प्रकाशन तक सीमित नहीं, बल्कि ज्ञान की आलोचनात्मक परख, वैचारिक संवाद और समकालीन यथार्थ की गहन समझ को विकसित करने का सतत प्रयास है।

आज का समय तेज़ी से बदलते सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक परिदृश्य का समय है। एक ओर तकनीक और सूचना क्रांति ने ज्ञान को सुलभ बनाया है, तो दूसरी ओर सतही अध्ययन, जल्दबाज़ी में निष्कर्ष और शोध की औपचारिकता जैसे खतरे भी सामने आए हैं। ऐसे समय में शोध समालोचन जैसी पत्रिकाओं की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है, जो शोध को केवल सूचना-संग्रह न मानकर, विवेकपूर्ण विश्लेषण और आलोचनात्मक दृष्टि से जोड़ती हैं।

शोध का वास्तविक उद्देश्य सत्य की खोज, समाज की समझ और मानवीय मूल्यों की रक्षा है। समालोचना इस प्रक्रिया को संतुलन प्रदान करती है। बिना समालोचना के शोध दिशाहीन हो सकता है और बिना शोध के समालोचना आधारहीन। शोध समालोचन पत्रिका इन दोनों के संतुलित समन्वय को अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता मानती है। इस त्रैमासिक अंक में प्रकाशित आलेख इसी समन्वय का सशक्त उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

जनवरी-फरवरी-मार्च 2026 के इस अंक में साहित्य, समाज, संस्कृति, इतिहास, शिक्षा, मीडिया और समकालीन विमर्श से जुड़े विविध विषयों पर केंद्रित शोध आलेख शामिल हैं। हिंदी साहित्य की आलोचना परंपरा, आधुनिक और उत्तर-आधुनिक विमर्श, स्त्री विमर्श, दलित चेतना, लोक-संस्कृति, पर्यावरणीय प्रश्न तथा डिजिटल युग में साहित्य और आलोचना की बदलती भूमिका जैसे विषयों पर गंभीर और विचारोत्तेजक लेख इस अंक को वैचारिक गहराई प्रदान करते हैं। इन आलेखों की विशेषता यह है कि वे केवल सैद्धांतिक बहस तक सीमित नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ से गहरे जुड़े हुए हैं।

शोध समालोचन शोध की गुणवत्ता, मौलिकता और संदर्भ-सटीकता को सर्वोपरि मानती है। आज जब शोध प्रकाशन की संख्या बढ़ी है, वहाँ यह आवश्यक हो गया है कि शोध नैतिकता, उद्धरण-पद्धति और बौद्धिक ईमानदारी पर विशेष ध्यान दिया जाए। इस पत्रिका में अपनाई गई पियर-रिव्यू प्रक्रिया इसी उद्देश्य की पूर्ति करती है, जिससे प्रकाशित सामग्री अकादमिक दृष्टि से विश्वसनीय और उपयोगी सिद्ध हो सके।

यह पत्रिका अनुभवी विद्वानों के साथ-साथ नवोदित शोधार्थियों को भी समान मंच प्रदान करती है। नव शोधकर्ताओं की नई दृष्टि और वरिष्ठ विद्वानों के अनुभव का संगम ही किसी भी अकादमिक परंपरा को जीवंत और गतिशील बनाता है। इस अंक में यह संतुलन स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है, जो शोध समालोचन की समावेशी और लोकतांत्रिक सोच को रेखांकित करता है।

समकालीन समय में भाषा और संस्कृति के प्रश्न भी अत्यंत महत्वपूर्ण हो गए हैं। भारतीय भाषाओं में गंभीर शोध और आलोचना को बढ़ावा देना आज की आवश्यकता है। शोध समालोचन हिंदी भाषा के माध्यम से न केवल राष्ट्रीय, बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विचार-विमर्श को सशक्त करने का प्रयास कर रही है। यह प्रयास भारतीय ज्ञान परंपरा को आधुनिक संदर्भों में पुनःस्थापित करने की दिशा में एक सार्थक कदम है।

यह भी उल्लेखनीय है कि यह पत्रिका विचारधारात्मक संकीर्णता से बचते हुए विविध दृष्टिकोणों को स्थान देती है।

स्वस्थ वैचारिक असहमति और तर्कपूर्ण संवाद किसी भी बौद्धिक समाज की पहचान होते हैं। शोध समालोचन इस लोकतांत्रिक बौद्धिक संस्कृति को बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध है, जहाँ शोध और समालोचना संवाद के माध्यम से आगे बढ़ते हैं, न कि टकराव के माध्यम से।

अंततः, हम जनवरी-फरवरी-मार्च 2026 के इस अंक में योगदान देने वाले सभी लेखकों, समीक्षकों, संपादकीय सहयोगियों और पाठकों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं। उनके विश्वास, परिश्रम और वैचारिक सहभागिता के बिना यह यात्रा संभव नहीं होती। हमें पूर्ण विश्वास है कि शोध समालोचन का यह त्रैमासिक अंक पाठकों को गहन चिंतन, विवेकपूर्ण विश्लेषण और सार्थक संवाद के लिए प्रेरित करेगा तथा शोध और समालोचना की परंपरा को नई ऊर्जा प्रदान करेगा।

सादर,

संपादक

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

विषयानुक्रमणिका

संपादकीय 6

धर्म और राजनीति का सम्बन्ध 11
अमरनाथ साकेत
डॉ. संगीता मुखर्जी

Mathematical Modeling and Computational Approaches in Biological Systems: A Biomathematical Exploration 16
Monjoy Das

माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के मध्य संबंध: एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन 28
रश्मि नामदेव
डॉ. सुनील कुमार

मण्डला जिले से प्राप्त प्रागैतिहासिक कालीन अवशेष 45
डॉ. चन्द्र भूषण गुप्त

Employer-sponsored Skill Development And Workforce Outcomes In Indian Public Sector Enterprises: A Critical Review With Special Reference To National Fertilisers Limited 50
Radha
Prof.(Dr.) Sandeep Shandilya

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और हिंदी भाषा का भविष्य 58
सुनील

'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य का व्याकरण-विचार परक अध्ययन 62
कैलास बबन माने
डॉ. राजेंद्र पी. भोसले

Shiva's Communication Style and Its Relevance in Today's Scenario 67
Sangeeta Shrivastava

श्री गुरुनानक देव जी के विचारों की वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता का अध्ययन 76
डॉ. प्रीती ग्रोवर
गगनदीप कौर

बाल विकास में ज्योतिष का महत्व 79
डॉ. चंद्रकांता कुमावत
डॉ. अलकनंदा शर्मा

यात्रा साहित्य में सामाजिक यथार्थ : बादलों में बारूद के संदर्भ में 86
श्रीरेषा टी. ए.

Play Lower Depths - A Study 91
Dr. Sanyukta Thorat

उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन 98
डॉ. प्रीति ग्रोवर
कृष्णा कुमारी

शिक्षा स्नातक संस्थानों में अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की साम्प्रदायिकता तथा जातिवाद के प्रति अभिवृत्ति : एक अध्ययन 104
डॉ. सुमन रानी
पवनप्रीत कौर

Financial Inclusion 2.0: Bridging the Access-to-Usage Gap Through Digital Infrastructure and Policy Convergence in India and Africa 107
Jagdish Rai
Dr. Aman Gupta

डिजिटल युग में स्मार्ट क्लासरूम और प्रभावी शिक्षक के गुण : शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का विश्लेषणात्मक अध्ययन 114
Dr. Vaishali Singh

शिक्षा और बेरोज़गारी की समस्या : शिक्षकों के व्यावसायिक विकास की भूमिका 119
Dr. Mahesh Chand Gurjar

ग्रामीण भारत में हिंदी का विकास और शुद्ध लेखन की आवश्यकता : व्याकरण, शिक्षा और भाषा के दृष्टिकोण से 124
Dr. Vaishali Singh

A Comparative Study of Two Different Cultures: The Gaddi and the Khasi Tribes 129
Suresh Kumar
Teiborlang Dkhar

समुदायों की राजनीतिक सहभागिता और प्रतिनिधित्व : लोकतांत्रिक भारत में समावेश की दिशा में एक विश्लेषण 140
डॉ. अर्चना

अंतरिक्ष एवं खगोल विज्ञान अनुसंधान में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (।ए) भारतीय वेधशालाओं पर विशेष दृष्टि 148
Ravi Kumar
Dr. Mukesh Kumar

Imperial Perceptions of Nature and Animals: Study of Hunting Culture During Mughal Emperor Jahangir (r. 1605-27) 155
Shivendra Srivastava

वैदिक युग में यज्ञ पर्यावरण संरक्षण का प्राचीन उपाय 159
सीमा देवी

नई शिक्षा नीति की समस्याएं एवं चुनौतियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन 162
डिम्पल अग्रवाल

कबीर की सामाजिक प्रासंगिकता 167
डॉ. अलका शर्मा

स्त्री चेतना के विकास में हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाओं का योगदान 171
रंजना
प्रो. चंद्रभान सिंह यादव
Ecological Memory in Contemporary French Literature 177
Dr. Ravi Shankar Kumar
आदिवासी साहित्य में लोकजीवन 183
प्रमोद कुमार गोंड
डॉ. रश्मि जैन
अरुण कमल की कविताओं में अभिव्यक्त पारिस्थितिक संकट की पहचान 185
डॉ. राखी क्लेमन्ट
भारत में संगीत शिक्षा के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन 190
Savita Gill
पत्रकारिता, विज्ञापन और गांधी 194
डॉ. मोहित कुमार नागर
"Divyavânî to Digital Screens" highlights Sanskrit's journey from sacred speech to popular visual narrative 198
Dr. Gurbasppa Neelkanth Karpe

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

धर्म और राजनीति का सम्बन्ध

अमरनाथ साकेत
शोधार्थी

डॉ. संगीता मुखर्जी
निर्देशक, विभाग-राजनीति विज्ञान,
पं. दीनदयाल उपाध्याय शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जिला-सागर (म0प्र0)

सारांश

भारतीय दर्शन मे धर्म की अवधारणा काफी व्यापक है व्यक्ति जीवन में जो धारण करता है वही धर्म है। वैसे धर्म एवं राजनीति का सम्बन्ध सदियों पुराना है यह कोई नई अवधारणा नही है। आदिम व्यवस्था मे सबसे पहले उसे धर्म की आवश्यकता महसूस हुयी, वह या तो प्रकृति के ताण्डव से डर गया, उसे जो सुख प्रदान किया वह उसी की पूजा करने लगा यहीं से धर्म की उत्पत्ति हुई बाद में इसमें समय-समय पर पैगम्बरों का आगमन हुआ। दुनिया हिन्दू, मुस्लिम, सिख, इसाई, पारसी आदि में बंट गए। इन पैगम्बरों ने शान्ति, अहिंसा का मार्ग दिखलाया, लोगों को नैतिकता का पाठ पढ़ाया।

मानव सभ्यता के साथ धर्म की उत्पत्ति के साथ ही कानून की आवश्यकता महसूस हुई। जिससे एक सभ्य समाज स्थापित किया जा सके। कानून के निर्माण, लागू एवं व्याख्या हेतु सत्ता एवं सत्य का विकास हुआ इसी विकास मे कड़ी धर्म एवं राजनीति में कभी सामंजस्य कभी संघर्ष देखने को मिला। यह समय एवं परिस्थियों के अनुसार अपने मे परिवर्तन लाता रहता है। वर्तमान समय मे समाज के ठेकेदारों एवं नेताओं ने धर्म का इस्तेमाल अपने स्वार्थ के लिए किया, तो यहीं पर धर्म में कट्टरता आयी। आज हमें इसका विस्तृत रूप देखने को मिलता है। धर्म एक प्रकार की छुरी है, अगर इसका इस्तेमाल स्वार्थ के वशीभूत होकर किया जाय तो यह विनाश का कारण भी बनती है जैसे-साम्प्रदायिकता कट्टरता आदि।

भारतीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में धर्म और राजनीति की अंतः क्रियाओं को राजनीतिक दलों का निर्माण, चुनाव में प्रत्याशियों का चयन मत प्रबंधन की राजनीति आदि के प्रसंग मे स्पष्ट देखा जा सकता है। मतदान व्यवहार का निर्माण एवं राजनीतिक व्यवहार को किसी विशेष दिशा में मोड़ने में धर्म की भूमिका काफी प्रमुख होती है। भारतीय राजनीति के प्रसंग मे धर्म से प्रासंगिक विविध आयामों को भारत में धर्म निरपेक्ष राजनीतिक सांस्कृति की मौजूदगी के बाबजूद स्वतन्त्र भारत में धार्मिक आधार पर कई राजनीतिक दलों का गठन हुआ है, मसलन-शिरोमणि अकाली दल, हिन्दू महासभा, बजरंग दल, विश्व हिन्दू परिषद, रामराज्य परिषद, शिवसेना, मुस्लिम लीग आदि।

इन दलों के अस्तित्व-निर्माण के धार्मिक एवं सामुदायिक तत्वों की प्रधान भूमिका रही है। ये दल चुनाव मे धार्मिक पक्षों को प्रधानता देते हैं और प्रत्याशियों के चयन से लेकर वोट मागने और मत प्रबंधन करने तक में धर्म को बुनियादी तत्व के रूप में मान्यता देते हैं। इन दलों द्वारा अपने साम्प्रदायिक हितवर्द्धन के नाम पर चुनावी राजनीति का संचालन किया जाता है। चुनावी मुद्दों के रूप में जहॉ हिन्दू धार्मिक दलों द्वारा राममंदिर का निर्माण, गौ हत्या बंद कराओं, गंगा सफाई योजना जैसे धार्मिक प्रसंगों को प्रमुखता से उभारा जाता है, वही मुस्लिम लीग द्वारा चुनावी मुद्दों में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा तथा सभी मामलों मे उनकी उपेक्षा की बाते मुख्य रूप से उठायी जाती है।

प्रस्तावना

धर्म का राजनीति पर असाधारण प्रभाव रहा है यही कारण है कि पहले धर्म विरोधी व्यक्ति का न कोई सुनना चाहता था, न देखना चाहता था, धर्म के नाम पर धर्माचार्य राजाओं से कुकृत्य कराते थे। मध्य कालीन यूरोप में धर्म शोषण एवं दमन का पर्यायवाची बन गया था इस काल को अंध युग के नाम से भी जाना जाता है। इसमे पाखण्ड, झूठ, कर्मकाण्ड, कट्टरता आदि ने बुरी तरह से पैर पसार रखा था। धर्म के विरुद्ध एवं विपरीत कुछ भी कहने वालों को मौत की सजा दे दी जाती थी तथा अनेक विचारकों को धर्म विरोधी कह कर मौत के घाट उतार दिया जाता था। इसाई धर्म के प्रचार के नाम पर अंग्रेजों ने संसार के बहुत बड़े भाग पर अपना दमन चक्र लगाया, लैटिन अमेरिका, अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका एवं एशिया महाद्वीपों मे धर्म के आड़ मे इन्होंने अनेक कुकृत्य किए और इसाई पदरियों मे उनका समर्थन किया। उत्तरी अमेरिका में रेड इण्डियनों का सफाया करवाने हेतु इसाई पादरी बाइबिल का हौव्वा देकर करोड़ों की हत्या कराकर ईश्वरीय आदेश कहते थे। वास्तविकता यह है कि धर्म की चादर ढक कर समस्त जघन्य कार्यों को धार्मिक बनाया जाता है। उसका प्रयोग सभी धर्मों ने अपने दायरे में खुलकर किया। इस्लाम धर्म के कट्टरपंतियों ने धर्म के नाम पर काफिरों की हत्याएँ की वह किसी से छिपी नही है यही कारण है कि कार्ल मार्क्स ने धर्म को अफीम बतलाया एवं तीखी आलोचना की एवं धर्म को पीड़ित मानवता का करुण क्रन्दन कहा।

धर्म आधारित लगभग सभी दलों की सक्रियता देश के किसी खास हिस्से में केन्द्रित है, जैसे मुस्लिम लीग का कार्यक्षेत्र दक्षिण भारत के केरल प्रदेश में है जो मालावर मलापा समुदाय के बल पर जीवित है। ऐसे ही सिक्खों के अकाली दल की सक्रियता पंजाब में और शिवसेना का कार्यक्षेत्र महाराष्ट्र में है। हिन्दू महासभा सैद्धान्तिक स्तर पर तो एक राष्ट्रीय पार्टी है, लेकिन व्यवहार में यह मुख्य रूप से मध्यप्रदेश तथा उसके आसपास के इलाकों में सक्रिय है। जनसंघ के साम्प्रदायिक आयाम पर टिप्पणी करते हुए मॉरिस जोन्स ने कहा है, ''जब तक कट्टरता की अभिवृत्ति से पूर्ण आर.एस.एस जिसमे हिन्दू सांस्कृतिक जोश और सैन्यवादी ट्रेनिंग दोनों का संयोग है। जनसंघ की आड़ में एक जुट होकर काम करता रहेगा। तब तक साम्प्रदायिकता इस राजनीतिक दल का महत्वपूर्ण पक्ष बना रहेगा।''

धर्म और राजनीति अभिन्न है वे एक जटिल रूप मे हमेशा से ही आपस मे जुड़े रहे हैं। धर्म शब्द का प्रयोग वेबर द्वारा दिये गए अर्थ मे किया जा रहा है इस बात पर बल दिया जाता है कि ''पावन'' धारणाओं ने धर्म निरपेक्ष क्षेत्र मे सदैव अपनी उपस्थिति अनुभव करायी है। इस दृष्टि से, धर्म को धर्म निरपेक्ष जगत की ओर उन्मुखता के एक प्रकार के रूप मे इस अर्थ मे देखा जाता है कि यह ज्ञान, और समाज के मूल्यों तथा प्रतिमानों का स्त्रोत है।

रोमिला थापर के अनुसार, धर्म और राजनीति के भी बीच अतीत मे जटिल आयाम थे और उन्हें किसी ऐसी सरल एकार्णात्मक व्याख्या द्वारा व्यक्त नही किया जा सकता जो हर चीजों के न्यूनतमवादी धार्मिक प्रयोजनों मे बदल देती है, धर्म जब तक व्यक्ति के विचारों के अन्दर रहता है तब तक यह एक निजी मामला होता है। जब इन विचारों को सार्वजनिक रूप से व्यक्त किया जाता है और इनसे सार्वजनिक क्रियाओं जैसे पूजा के लिए स्मारक बनाना और समान विश्वास वाले लोगों के राजनीतिक और सामाजिक समारोह को संगठित करना आदि के लिए प्रेरित किया जाता है धर्म एक विशिष्ट व्यक्तिगत मामला नही रह जाता है। जिनकी अभिव्यक्ति मठों, मंदिरों, मस्जिदों, सरायों, चर्च, यहूदी उपासना गृह, गुरुद्वारे जैसी संस्थाओं द्वारा होती है उनकी भूमिका का निर्धारण केवल उस धर्म के संदर्भों मे नही होता जिनसे ये सम्बन्धित होते हैं। बल्कि समाज की संस्थाओं के रूप मे उनके कार्यों के संदर्भ मे भी होता है।

उद्देश्य

भारत में एक तत्व जो इसके पूरे इतिहास के दौरान प्रचलित रहा है, यद्यपि इसकी मात्रा भिन्न-भिन्न रही है, वह है राजनीतिक उद्देश्यों और आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए धर्म का प्रयोग भारत मे धर्म ने हमेशा राजनीति की सेवा और राजनीति ने अक्सर धर्म की सेवा की। धर्म कभी भी खुद को राजनीति से बिलग नही कर पाया और न ही राजनीति खुद को कभी

धर्म से मुक्त रख सकी। इस प्रकार, हमारे इतिहास की सभी अवस्थाओं मे धर्म के राजनीतीकरण को किसी न किसी प्रत्यक्ष या अप्रकट रूप मे देखते हैं। उनका कहना है कि भारत में धर्म और राजनीति के बीच यह अन्तः क्रिया ऐतिहासिक रूप से चार चरणों मे देखी जा सकती है-

पहला चरण :- सिन्धु घाटी सभ्यता से इस्लाम के आगमन तक विस्तारित हुआ।

दूसरा चरण :- इस्लाम के आगमन से 1857 के भारतीय विद्रोह तक।

तीसरा चरण :- 1857 से 1947 मे भारत की स्वतन्त्रता तक।

चौथा चरण :- 1947 से वर्तमान तक।

इन चारों ही चरणों के दौरान धर्म और राजनीति के बीच घनिष्ठ अन्तः क्रिया थी लेकिन इन चरणों के दौरान इस अन्तः क्रिया की प्रवित्ति, गहनता और स्वरूप में अंतर था। भारत मे पवित्र और धर्म निरपेक्ष परिप्रेक्ष्य विकट रूप से अन्तग्रथित (गूँथे हुए) थे, भारतीय समाज निरन्तर होने वाले परिवर्तनों का साक्षी रहा है। जिन्होंने राजनीतिक पद्धतियों, व्यावसायिक संरचनाओं, संस्कृति और धर्म को प्रभावित किया। भारत ने धर्म तनाव, नवीनता और यहाँ तक कि आधुनिकीकरण का भी प्रमुख स्त्रोत रहा है। बेणु गोपाल 1998 भारत में परिवर्तन प्रारम्भ करने में खास तौर से राजनीतिक आन्दोलनों और सुधार आन्दोलनों में परिवर्तन लाने में धार्मिक मुहावरों का प्रयोग महत्वपूर्ण रहा है। इसी समय बंगाल मे राममोहन राय, उत्तर में दयानन्द सरस्वती, महारास्ट्र में ज्योतिराव फुले ने शिक्षा मे सुधार और सामाजिक-धार्मिक लक्ष्य प्रारम्भ किए और राष्ट्रीय जीवन के बारे में नजरिया भी प्रदान किया। उन्होंने भारतीय परम्परा तथा पश्चिमी ज्ञान दोनो से ही प्रेरणा ली।

स्वाधीनता संग्राम प्रारम्भिक अवस्थाओं में बंगाल, पंजाब, महाराष्ट्र और तमिलनाडु आदि राज्यों के शिक्षित मध्यम वर्गो का उत्पाद था। उदार शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक लहर ने भी महाराष्ट्र में बाल गंगाधर तिलक ने गणपति पूजा को बड़े पैमाने पर दुबारा प्रचलित किया। यह तब राजनीतिक बैठकों के लिए मिलन स्थान के रूप मे काम करने लगा। बंगाल में रासबिहारी घोष, विपिन चन्द्रपाल और उनके साथियों ने राजनीतिक चेतना विकसित करने के लिए दुर्गा पूजा के इर्द-गिर्द केन्द्रित धार्मिक प्रतीकों का प्रयोग किया। इसके अतिरिक्त भारत के इन प्रान्त और अन्य प्रान्तों में सामाजिक-धार्मिक नाटकों द्वारा जनता को राजनीतिक संदेश प्रदान किए गए। भारतीय जनता को एकीकृत और संगठित करने तथा गतिशील बनाने के लिए ''रामराज्य'' की हिन्दू-धारणा को प्रयुक्त किया।

परिकल्पना

भारत में हिन्दू समुदाय के कुछ कट्टर संगठन जैसे-हिन्दू महासभा, विश्व हिन्दू परिषद आदि ऐसे संगठन हैं जो संकीर्ण धर्मान्धता के पोषक हैं जो समय-समय पर अपनी अभिव्यक्तियों तथा कार्यशैली के माध्यम से हिन्दू समाज की भावनाओ को उत्तेजित करने में महती भूमिका निभाते रहते हैं। सत्ताधारी भाजपा के कुछ नेता भी आज कल सार्वजनिक मंच, रेडियो, टेलीवीजन व समाचार पत्रों के माध्यम से भड़काऊ बयान देने से गुरेज नहीं करते हैं। इनके सोच ये कहती है कि भारत हिन्दुओं का देश है इसलिए सिर्फ हिन्दू धर्म धर्मावलम्बियों को यहॉ रहने का अधिकार है। हिन्दू धर्माचारियों की ये अभियुक्तियॉ मुस्लिम समुदाय मे साप्प्रदायिकता के तथ्यों को बढ़ावा देने मे तथा साम्प्रदायिक भावना से मजबूतीकरण मे अहम भूमिका अदा करती है।

भारत के मुसलमानों मे साम्प्रदायिकता की भावना को जिन्दा रखने में पाकिस्तानी संगठनों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण रही है। भारत मे हिन्दू-मुसलमान के बीच तनाव की छोटी घटनाओं को भी पाकिस्तानी टेलीवीजन, अखबारों एवं रेडियों में काफी बढ़ा-चढ़ा कर प्रचार किया जाता है। ऐसा करके पाकिस्तान अपने को भारतीय मुसलमानो का परोपकार, हिमायती और हितरक्षक साबित करना चाहता है और भारत की धर्म निरपेक्षतावादी स्वरूप को चोट पहुँचाना चाहता है।

धर्म के आधार पर संगठित, साप्प्रदायिक संगठन व्यवस्थागत राजनीति में शक्तिशाली दबाव समूह की भूमिका निभाते हैं। ये धार्मिक नीतियों की आलोचना करते हैं तथा अपने संगठन के बैनर तले धर्ना प्रदर्शन, रैली व सभाओं का आयोजन

करके धार्मिक नीतियों व निर्णयों के विरुद्ध जोरदार आवाज उठाते हैं और कभी-कभी धार्मिक निर्णयों को अपनी ओर मोड़ने मे सफल भी हो जाते हैं। उदाहरण- मुस्लिम संगठनों में जीमयत-उल-उलेमा-ए-हिन्द, इमारते शरिया, जमायते इस्लामी द्वारा एक शक्तिशाली दबाव समूह की भूमिका अदा करते हुए तीन विषयों के मामले मे धार्मिक नीतियों को प्रभावित किया गया है; ये विषय है-अलीगढ़ विश्वविद्यालय का अल्पसंख्यक स्वरूप स्थापित करना, उर्दू को संवैधानिक संरक्षण दिलाना तथा मुस्लिम पर्सनल लॉ के सम्बन्ध में कोई तब्दील न होने देना। वहीं विश्व हिन्दू परिषद द्वारा दिये जाने वाले दबाव की बजह से अयोध्या मसले पर केन्द्र सरकार द्वारा लिये जाने वाले कई महत्वपूर्ण निर्णयों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

निष्कर्ष

धर्म और राजनीति में यह कहा जा सकता है कि भारतीय राजनीति मे साम्प्रदायिकता मूलतः ब्रिटिश हुकूमत द्वारा अपनाई गयी फूट डालो और शासन करो की नीति का परिणाम है। यह एक विघटनकारी प्रवित्ति है यह दोनों सम्प्रदायों मे आपसी द्वेष पैदा करती है जो यदा-कदा भीषण रूप धारण करके साम्प्रदायिक रूप मे सामने आती है। इससे देश को जहॉ एक ओर हानि होती है वही यह राजनीतिक अस्थिरता की परिस्थितियॉ भी उत्पन्न कराता है। धार्मिक, राष्ट्रीय एकता व अखण्डता का दुश्मन है और राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से एक गंभीर राजनीतिक समस्या है। भारतीय राजनीति को स्वस्थ रहने के लिए धर्म की प्रवित्ति का समूल उन्मूलन करना समय की मांग है।

धर्म निरपेक्ष राष्ट्रवाद भारत की स्वीकृत विचारधारा है। इसका आधार राष्ट्रीय आन्दोलन है इसके अनुसार सभी धर्मो से समानता का व्यवहार किया जाता है। जिसका अभिप्राय है कि राज्य की कार्यप्रणाली पर किसी भी धर्म का प्रभुत्व नही होगा लेकिन ''धर्म निरपेक्ष'' शब्द का अर्थ यह नही है कि राजनीति का धर्म से अलगाव है। बल्कि इसका अर्थ है कि राजनीति सभी धर्मो के प्रति तटस्थ है। भारत मे धर्म निरपेक्षता का धार्मिक समदूरी है, लेकिन अलग रहना (बिलग्नता) न ही यहॉ धर्म भारतीय नागरिकता का निर्धारक नही है। यह उनका जन्म सिद्ध अधिकार है।

भारतीय दर्शन में धर्म की अवधारणाा अति व्यापक है। व्यक्ति जीवन में जो कुछ धारण करता है वैसे धर्म और राजनीति का संबंध सदियो पुराना है। यह कोई नई अवधारणा नहीं है। आदिम व्यवस्था मे सबसे पहले उसे धर्म की आवश्यकता महसूस हुई वह या तो प्रकृति के ताण्डव से डर गया या उसे जो सुख प्रदान किया वह उसी की पूजा करने लगा यही से धर्म की उत्पत्ति हुई बाद मे इसमे समय-समय पर पैगम्बरों का आगमन हुआ और दुनिया हिन्दू, मुस्लिम, सिख, इसाई, पारसी आदि मे बट गयी। इन पैगम्बरों ने शान्ति अहिंसा का मार्ग दिखलाया लोगों को नैतिकता का पाठ पढ़ाया।

सुझाव

धर्म और राजनीति व्यवहार पर धर्म प्रभाव को समझना आवश्यक है क्योंकि व्यक्ति के साथ जटिल संबंध है। जिस प्रकार नमक का धर्म खारापन, पानी का धर्म तरलता, शीतलता, अग्नि का धर्म उष्मा एवं प्रकाश तथा पृथ्वी की दृढ़ता है, वैसे ही मानव का धर्म मानवता होता है। अपने इस धर्म से निरपेक्ष होने पर उनकी उपयोगिता और महत्व स्वतः नष्ट हो जाती है। धर्म एवं राजनीति का मेल घातक माना जाता है इसे तथाकथित पढ़े-लिखे लोगों द्वारा भ्रम के रूप मे लाया गया है। इसे हम एक भय के रूप में पाल पोष रहे हैं।

गॉधी जी के इस सम्यक दर्शनपूर्ण आग्रह की भी परवाह नहीं की ''धर्म विहीन राजनीति'' मधुमक्खी के छत्ते की तरह है जिसमें मधु को कुछ नहीं होता किन्तु वहां काटने वाले विषैले बर्रे के झुण्ड जरूर होते हैं। समस्या का हल भ्रम द्वारा नही अपितु केवल सम्यक दर्शन, सम्यक ज्ञान और सम्यक चरित्र से ही होता है। वर्तमान मे धर्म एवं राजनीति के स्वरूप को धर्म दर्शन, धर्म ज्ञान और धर्म चरित्र की जरूरत है। भ्रमित ज्ञान के आधार पर हम धर्म एवं राजनीति और इनके मेल जोल पर सम्यक निश्चय नहीं कर सकते। इसके लिए धर्म और राजनीति तथा इनके परस्पर सम्बन्धों का ऐतिहासिक सन्दर्भ मे सही विवेचन करना आवश्यक है।

धर्म और राजनीति की बात की जाय तो हम कह सकते हैं कि राजनीति सामाजिक व्यवस्था का एक ही रूप है। अर्थ सत्य, अहिंसा, अक्रोध, ईश्वर, धैर्य, क्षमा अन्दर और बाहर की शुद्धि, अस्तेय, विद्या एवं विवेक धारण मनुष्य मात्र के धर्म माने जाते हैं। धर्म रूपी व्यवस्था के पालन से व्यक्ति एवं समाज दोनो की उन्नति साथ-साथ होती है एवं किसी का अहित भी नही होता। यह सत्य है कि धार्मिक सुरक्षा एवं सुव्यवस्था मे जितना स्थान पुलिस और प्रशासन का होता है उससे कही ज्यादा योगदान धर्म के मूलभूत तत्वों एवं सिद्धान्तों का होता है।

शोध प्रविधि

राजनीति में धर्म का मेल धातक नहीं अपितु मंगलकारी ही होता है, धार्मिक सुव्यवस्था स्थापित करने वाले ही राजनीति में मान्य सिद्धान्तों का समावेश अनावश्यक है। तभी इस दिशा मे व्याप्त भ्रम दूर हो सकेगा। समावेशन न होने की स्थिति मे हिंसा, अलगाव, दंगे, हाथापाई, हिंसक प्रदर्शन, हड़ताल, भ्रष्टाचार आदि मे दिनो-दिन वृद्धि होगी। धर्म का प्रभाव न रहने से अधर्म का प्रभाव बढ़ेगा जैसा कि विधित है प्रकाश की अनुपस्थिति में अंधकार का प्रभुत्व हो जाता है। धर्म कोई छोटा नही होता है चाहे वह जैन धर्म हो या हिन्दू धर्म हो, मुस्लिम हो या इसाई हो। कहने का तात्पर्य यह है कि सभी धर्म अपने आप मे श्रेष्ठ होते हैं। सभी की आस्था अपने धर्म में होती है, किन्तु मेरा मानना यह है कि मानव धर्म ही सभी धर्मों में श्रेष्ठ है। इस सयम देश के जो हालात है उसमे किसी भी राजनीतिक दल को गलत राजनीति नही करनी चाहिए।

इस महामारी में गंदी राजनीति, कोई भी चाहे घर में करे या राजनीति में कटाक्ष करे गलत है सभी धर्म अहिंसा का पाठ पढ़ाते है और अहिंसा से ही देश आजाद हुआ है। इस कलयुग में हम सभी हिंसा कर ऊँचा उठने की कोशिश कर रहे हैं। धर्म का किसी राजनीतिक दल से सम्बन्ध नही है क्योंकि इस महामारी मे जो भी राजनीतिक दल शासन कर रहे होते तो कुछ न कुछ कमी रहती। वर्तमान समय के हालात में जो देश के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी मानव धर्म का पालन करते हुए सभी धर्मों सहित मानव लोगों की सेवा कर रहे हैं। धर्म में राजनीति जैसे गुटवाजी, एक दूसरे के आरोप प्रत्यारोप लगाना तर्कहीन है और अपने धर्म को नीचे की ओर ले जा रहे हैं।

धर्म एवं राजनीति का सामंजस्य मानवीय सभ्यता के युग से ही देखने को मिलता है धर्म सदैव कहता है कि जो कुछ इस धर्म में पाता है वह उसके पूर्व जन्मों के कृत्यों का फल है। इसी का आश्रय लेकर धर्म ने सदैव निरीह जनता पर अत्याचारों को पनपाया है। राजा धरती पर ईश्वर का प्रतिनिधि है। उसका विरोध करना या उसके विरुद्ध कुछ सुनना ईश्वर का अपमान है।

संदर्भ सूची

1. दुर्खाइम, इमाइल 1965 (1915), एलीमेंटरी फॉर्म्स ऑ रिलीजियस लाइफ, जो उब्ल्यू, स्वेन, एफड्री प्रेस, न्यूयार्क द्वारा अनुवादित।
2. मदान, टी.एन. (संपा.) (1991), रिलीजियन इन इण्डिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली
3. मिश्र हृदयनारायण डॉ. सामाजिक, राजनीतिक दर्शन, शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद
4. मिश्र हृदयनारायण डॉ. तुलनात्मक धर्म, शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद 2008
5. राधाकृष्णन डॉ. प्राच्य धर्म और पाश्चात्य विचार, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
6. राधा कमल मुखर्जी, हिन्दू सभ्यता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
7. रामनाथ मिश्र, प्राचीन भारतीय समाज, अर्थव्यवस्था एवं धर्म, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
8. जीवन मेहता, भारतीय राजनीतिक चिन्तक, एस.बी.पी.डी. पब्लिसिंग हाउस, आगरा
9. डॉ. जीवन मेहता, डॉ. वी.एन. खन्ना, राजनीति विज्ञान, एस.बी.पी.डी. पब्लिसिंग हाउस, आगरा
10. गूगल सर्च इंजन।

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Mathematical Modeling and Computational Approaches in Biological Systems: A Biomathematical Exploration

Monjoy Das
Department of Mathematics,
Sona Devi University, Ghatshila, Jharkhand

Abstract

Mathematical biology, or biomathematics, has evolved as an essential interdisciplinary field at the intersection of mathematics, biology, and computer science. This paper explores how mathematical modeling and computational techniques serve as powerful tools to study, simulate, and predict biological phenomena. The focus is on understanding how deterministic, stochastic, and agent-based models capture the complexity of real-world biological systems—from population dynamics and infectious disease spread to gene regulation and biochemical pathways. Recent advances in computational power and algorithmic sophistication have enabled the handling of nonlinear dynamics and large biological datasets. This paper systematically reviews key modeling approaches including differential equations, network models, and machine learning frameworks. It also discusses the significance of parameter estimation, sensitivity analysis, and model validation. Case studies from epidemiology, ecology, and systems biology are presented to demonstrate the real-world applications of biomathematics. The study concludes by reflecting on current limitations, the importance of interdisciplinary collaboration, and the future potential of mathematical modeling in personalized medicine, synthetic biology, and global health policy.

Keywords: Biomathematics, Mathematical Modeling, Computational Biology, Systems Biology, Differential Equations, Stochastic Processes

1. Introduction

Biological systems are inherently complex, driven by numerous interacting components at multiple scales of time and space. From the firing of neurons in the brain to the interaction of predator and prey in ecosystems, biology presents rich, dynamic behavior that often resists simple qualitative description. Mathematical modeling provides a structured framework to abstract, analyze, and simulate these dynamics.

Biomathematics has grown rapidly in recent decades, particularly due to advancements in computational methods and the increasing availability of biological data. Traditional experimentation in biology is now routinely complemented by in silico models that offer cost-effective, replicable, and predictive insights. Mathematical models have become crucial in diverse domains: understanding

cancer growth, predicting the spread of pandemics, deciphering gene networks, and optimizing drug dosage.

The core of mathematical modeling in biology lies in the development of equations or rules that capture the behavior of systems. These models may be deterministic, where outcomes are fully determined by parameter values and initial conditions, or stochastic, incorporating elements of randomness to represent uncertainty or variability in biological processes. With the rise of systems biology, holistic models integrating genomics, proteomics, and metabolomics are now achievable, further highlighting the synergy between computational power and biological theory.

This paper aims to provide a comprehensive overview of the types of models used in biological research, their computational implementations, strengths and limitations, and emerging directions in the field. Through illustrative examples, it reveals how mathematics is not merely a descriptive language for biology but an active instrument in biological discovery.

2. Types of Mathematical Models in Biology

Mathematical models in biology are categorized based on the nature of the system they represent and the mathematical techniques employed. The following are the major types of models frequently used in biomathematical research:

2.1. Deterministic Models

Deterministic models operate under the assumption that outcomes are determined by initial conditions and system parameters without any randomness. These models are particularly useful for systems where behavior is predictable and repeatable. The most common form of deterministic models in biology involves ordinary differential equations (ODEs), which describe how the state of a biological system changes over time.

For example, the classical Lotka-Volterra model describes predator-prey interactions using coupled ODEs:

$$\frac{dx}{dt} = \alpha x - \beta xy \frac{dy}{dt} = \delta xy - \gamma y$$

where and represent prey and predator populations, respectively.

2.2. Stochastic Models

Biological systems often exhibit inherent randomness due to fluctuations at the molecular or individual level. Stochastic models incorporate probabilistic elements to represent such uncertainty. These models are particularly relevant in cellular biology, gene expression, and epidemiology.

A common framework for stochastic modeling is the use of continuous-time Markov chains or Gillespie algorithms, which simulate chemical reactions or infection events based on random sampling of reaction times and outcomes.

2.3. Discrete-Time and Agent-Based Models (ABMs)

Discrete-time models update the state of the system at distinct time intervals, which can be useful in ecological modeling and disease progression studies. Agent-based models simulate the actions and

interactions of individual agents (e.g., cells, organisms, or humans) to assess their collective effects on the system. These models are often used to study complex adaptive systems where individual variability and spatial interactions play crucial roles.

2.4. Partial Differential Equation (PDE) Models

PDE models are employed when biological processes vary both in space and time, such as in pattern formation, morphogenesis, or diffusion processes in tissues. Reaction-diffusion systems, a class of PDE models, are widely used to describe phenomena like Turing patterns in developmental biology.

2.5. Network Models

Many biological systems can be viewed as networks—whether it be metabolic pathways, neural circuits, or ecological food webs. Network theory offers tools for analyzing the structure and dynamics of these interconnected systems. Graph-based models and adjacency matrices help study the topological and functional properties of these networks.

2.6. Machine Learning and Data-Driven Models

With the advent of big data in biology, machine learning models are increasingly used to find patterns, classify phenotypes, and predict outcomes without necessarily deriving underlying biological mechanisms. Supervised learning (e.g., decision trees, support vector machines) and unsupervised learning (e.g., clustering, dimensionality reduction) have found applications in genomics, diagnostics, and personalized medicine.

Each of these modeling approaches has its own strengths, assumptions, and limitations, making them suitable for specific kinds of biological problems. In many cases, hybrid models that combine multiple approaches offer more accurate and comprehensive insights into biological phenomena.

3. Literature Review

Mathematical modeling in biology has a rich and evolving literature that spans classical ecological systems to modern molecular and cellular biology. Early foundational work by Lotka (1925) and Volterra (1931) introduced predator-prey models, which became cornerstones in population ecology. These were among the first applications of differential equations in biology and remain relevant in ecological studies (Murray, 2002).

The SIR model, developed by Kermack and McKendrick (1927), marked a turning point in epidemiology, offering a mathematical framework to understand disease dynamics. Since then, extensions of the model have been used to study a range of diseases including COVID-19 (Li et al., 2020).

Stochastic processes gained attention in the 1960s and 1970s, particularly in molecular biology, where randomness plays a key role. McAdams and Arkin (1997) demonstrated that stochastic gene expression could lead to variability in cell behavior, an insight that challenged deterministic thinking.

With the emergence of systems biology in the early 2000s, researchers like Kitano (2002) emphasized the need for integrative models combining biochemical networks, feedback regulation, and modular design. This led to the rise of network-based modeling approaches (Barabási & Oltvai, 2004) and stimulated large-scale biological data collection.

Recent advances have expanded the modeling toolkit to include machine learning. For instance,

Libbrecht and Noble (2015) provided a comprehensive review of machine learning applications in genomics, while Angermueller et al. (2016) explored deep learning methods for phenotype prediction.

Agent-based modeling has also seen growth, especially in immunology and cancer modeling. An example is the work of An (2008), who used agent-based systems to simulate inflammatory responses and potential treatment strategies.

Across all domains, challenges remain in model validation and interpretation. According to Saltelli et al. (2020), sensitivity analysis and uncertainty quantification are essential to ensuring that models are not only accurate but also robust and interpretable.

Thus, the literature reflects a shift from isolated, linear models to integrated, multiscale, and data-driven frameworks capable of capturing the complexity of living systems.

4. Computational Approaches and Simulation Techniques

The execution of mathematical models in biology increasingly depends on computational methods. These techniques enable researchers to simulate dynamic systems, explore parameter spaces, analyze nonlinear interactions, and integrate complex datasets. Below are some of the major computational approaches used in biomathematical modeling.

4.1. Numerical Solutions of Differential Equations

Many biological models are based on systems of ordinary or partial differential equations that lack closed-form solutions. In such cases, numerical techniques like the Euler method, Runge-Kutta methods, and finite difference or finite element methods are used. These approaches approximate solutions over discrete time or space intervals, allowing simulation of time evolution in models of disease transmission, enzyme kinetics, or ecological systems.

4.2. Stochastic Simulations

Stochastic models require specialized simulation algorithms that handle randomness and probabilistic transitions. The Gillespie algorithm, also known as the stochastic simulation algorithm (SSA), is widely used to simulate biochemical reactions. It determines both the next reaction and the time until it occurs based on reaction propensities, enabling the exploration of cell-to-cell variability in gene expression or signaling pathways.

4.3. Monte Carlo Methods

Monte Carlo simulations use random sampling to estimate the statistical properties of systems. They are especially useful for parameter estimation, uncertainty quantification, and sensitivity analysis. Applications include drug binding affinity modeling, population dynamics, and evolutionary processes. These methods also aid in Bayesian inference for model calibration.

4.4. Optimization Algorithms

Model fitting often involves optimization, particularly when estimating parameters from data. Common algorithms include gradient descent, genetic algorithms, simulated annealing, and particle swarm optimization. These methods search for parameter values that minimize the error between model predictions and observed data, enhancing model accuracy.

4.5. Machine Learning and Artificial Intelligence (AI)

Recent advancements in machine learning have transformed biomathematics. AI models are capable

of learning patterns from high-dimensional biological data such as genomics, proteomics, or medical imaging. Neural networks, support vector machines, and ensemble methods can classify disease states, predict gene function, or identify biomarkers. Deep learning architectures like convolutional neural networks (CNNs) and recurrent neural networks (RNNs) are increasingly employed for time-series and spatial biological data.

4.6. Software Tools and Platforms

Numerous software platforms support computational biology and biomathematical modeling. Some notable ones include:

- **MATLAB**: Offers built-in solvers for ODEs, PDEs, and statistical functions.
- **R**: Extensively used for statistical analysis, data visualization, and modeling.
- **Python**: Popular for its open-source libraries like SciPy, NumPy, Pandas, and TensorFlow.
- **COPASI**: Specifically designed for biochemical network simulation.
- **NetLogo**: Widely used for agent-based modeling.
- **SBML and CellML**: Standards for representing and sharing biological models.

4.7. High-Performance and Parallel Computing

Complex biological models, especially those involving large systems or extensive simulations, benefit from high-performance computing (HPC). Techniques such as parallel computing and GPU acceleration allow for faster computation, which is crucial in areas like whole-brain simulation or large-scale genomic analysis.

4.8. Visualization Techniques

Effective visualization enhances model interpretation and communication. Time-series plots, phase-plane diagrams, heatmaps, and network graphs help to understand system dynamics. 3D visualization and interactive dashboards are used in medical diagnostics, anatomical modeling, and spatial simulations.

In conclusion, computational techniques have become indispensable in mathematical biology. They facilitate rigorous analysis, enhance predictive accuracy, and open new avenues for hypothesis generation and data integration.

5. Case Studies and Applications

Mathematical and computational modeling have been successfully applied across diverse biological domains. Below are illustrative case studies demonstrating the power and flexibility of biomathematical approaches.

5.1. Infectious Disease Modeling: COVID-19

The COVID-19 pandemic highlighted the indispensable role of mathematical modeling in real-time decision-making. Variants of the classical SIR (Susceptible–Infectious–Recovered) model were employed globally to forecast infection peaks, evaluate the impact of lockdowns, and guide vaccination strategies. These compartmental models, particularly SIR and its extensions such as SEIR (Susceptible–Exposed–Infectious–Recovered), divide populations into different health states and simulate transitions between them over time. For instance, Li et al. (2020) used a modified SEIR

model with time-dependent transmission rates to simulate Wuhan's outbreak, capturing the dynamic impact of public health interventions.

In addition to compartmental approaches, network-based models gained attention for their ability to simulate heterogeneous contact structures and localized transmission patterns. Such models incorporate data on social networks, mobility patterns, and individual behavior to better predict outbreak trajectories at a finer spatial resolution. For example, contact network models that integrate Bluetooth-based proximity data have been used in Europe and South Korea to understand clustering events and to design localized containment zones.

Agent-based models (ABMs) further enhanced realism by simulating the behavior and interactions of individuals in specific environments. The Imperial College London team developed spatially explicit ABMs to simulate household, workplace, and community transmission, thereby informing government policy. These models were particularly useful in testing hypothetical scenarios—such as school closures, mask mandates, or phased re-openings—before implementation.

Another critical aspect of infectious disease modeling during COVID-19 was the integration of real-time data streams. Epidemiological models were frequently updated with mobility data from smartphones, case counts from surveillance systems, and serological survey results to improve forecast accuracy. Data assimilation techniques, such as the Ensemble Kalman Filter, were employed to refine model parameters dynamically.

Importantly, the diversity of regional strategies and data availability influenced the choice of models. For example, countries with robust surveillance infrastructure relied on data-rich Bayesian hierarchical models, while low-resource settings often used simpler deterministic models calibrated with historical outbreak data. Despite their differences, these modeling efforts provided crucial insights into transmission dynamics, healthcare capacity, and policy effectiveness.

Thus, infectious disease modeling during COVID-19 was a multidimensional endeavor—balancing biological realism, computational feasibility, and policy relevance. It underscored the value of interdisciplinary collaboration between epidemiologists, statisticians, data scientists, and public health officials in managing global health crises.

5.2. Tumor Growth and Cancer Therapy

Biomathematical models have helped elucidate tumor growth dynamics and optimize cancer therapy. Models based on reaction-diffusion partial differential equations (PDEs) simulate the spatial spread and invasion of tumors in tissue environments, enabling a better understanding of how cancer cells infiltrate healthy tissue. On the other hand, ordinary differential equation (ODE) models are widely used to represent time-dependent interactions between cancer cells, immune cells, and therapeutic agents, providing valuable insights into treatment strategies.

A foundational contribution in this area is the Hahnfeldt et al. (1999) model, which incorporated tumor angiogenesis and its regulation through anti-angiogenic therapy. Their model predicted tumor volume as a function of vascular carrying capacity, offering quantitative guidance on optimal drug dosing schedules. This model established the groundwork for integrating biological mechanisms into therapeutic optimization.

Recent advances have introduced multi-scale models that bridge cellular, tissue, and organismal levels, incorporating pharmacokinetics and pharmacodynamics (PK/PD) to tailor therapies to

individual patients. For instance, hybrid models combining agent-based approaches with differential equations have been developed to simulate tumor heterogeneity and microenvironmental interactions. These models capture emergent behaviors such as treatment resistance and tumor relapse, which are difficult to predict with traditional models.

Patient-specific modeling has become a growing focus, leveraging clinical imaging and molecular profiling data to calibrate models for personalized therapy planning. Tools such as digital twin models simulate an individual patient's tumor dynamics and response to treatment in silico, enabling virtual trials and risk assessment before real-world intervention. Such personalized approaches are increasingly employed in designing immunotherapies and targeted drug delivery systems.

Computational oncology is also advancing through machine learning integration, which helps identify predictive biomarkers, classify tumor subtypes, and infer hidden model parameters from complex datasets. Techniques like support vector machines and neural networks are used to refine model predictions and select optimal therapeutic regimens.

Despite these advances, challenges remain. Data sparsity, model identifiability, and biological variability introduce uncertainty. Nonetheless, these models continue to evolve with improved validation protocols and integration with clinical workflows. Ultimately, mathematical modeling offers a promising path to more effective, individualized, and adaptive cancer treatment paradigms.

5.3. Gene Regulatory Networks

Understanding how genes interact is essential for deciphering cellular behavior. Boolean network models, differential equation systems, and Bayesian networks have been used to model gene regulation.

For example, the repressilator—an artificial genetic regulatory network consisting of three genes inhibiting one another in a loop—was mathematically modeled by Elowitz and Leibler (2000). Their model used delay differential equations to simulate oscillatory gene expression in E. coli, demonstrating the feasibility of synthetic biological circuits.

Stochastic models have also been used to explore noise in gene expression. Such models help explain cell fate variability and robustness in developmental biology.

5.4. Ecological Systems and Population Dynamics

Mathematical models have long been foundational in ecology. Predator-prey systems (e.g., Lotka–Volterra), competition models, and age-structured population models offer insights into species survival and resource dynamics. The Lotka–Volterra model uses coupled differential equations to describe oscillatory dynamics between predator and prey populations, providing insights into how these species influence each other's abundance over time. Competition models, such as the logistic growth equation and the Ricker model, are used to simulate interspecific competition and population carrying capacity.

More advanced techniques in theoretical ecology include matrix population models like the Leslie matrix, which analyze age-structured population growth and reproductive value. These models are particularly useful in conservation biology for predicting the long-term viability of endangered species. Bifurcation analysis, a nonlinear mathematical tool, is used to explore how changes in parameters such as birth rates or mortality lead to shifts in population stability, including transitions to extinction, chaos, or limit cycles.

In a real-world application, models of wolf and moose populations on Isle Royale have been used to study predator-prey cycles over decades. These models help manage conservation strategies by analyzing how disease outbreaks, climate change, and human interventions affect population stability. In another example, mathematical modeling has been applied to understand the collapse and recovery of Atlantic cod populations due to overfishing and environmental variability.

Spatial ecology has also benefited from modeling approaches such as reaction-diffusion equations and cellular automata to simulate species dispersal, habitat fragmentation, and biodiversity patterns. Metapopulation models allow researchers to examine how species persist across fragmented landscapes by modeling colonization-extinction dynamics in habitat patches.

Collectively, these modeling frameworks not only enhance our theoretical understanding of ecological interactions but also support decision-making in wildlife management, habitat restoration, and climate change adaptation.

5.5. Biochemical Pathways and Systems Biology

Modeling biochemical networks such as metabolic pathways and signal transduction cascades allows for a systems-level understanding of cellular function. Tools like COPASI and CellDesigner are used to simulate enzyme kinetics, pathway crosstalk, and dynamic steady states. These platforms support visual construction of reaction networks, parameter estimation, sensitivity analysis, and numerical integration of differential equations.

A classic case is the mitogen-activated protein kinase (MAPK) cascade, involved in cell proliferation. Huang and Ferrell (1996) modeled this system using Michaelis-Menten kinetics and demonstrated ultrasensitivity—a form of switch-like behavior crucial to signal transduction. Their model highlighted how feedback and cooperativity within signaling cascades can lead to threshold responses and bistability.

Additional examples include feedback inhibition in glycolysis, where the accumulation of ATP inhibits phosphofructokinase activity, creating negative feedback that stabilizes energy production. Positive feedback loops in calcium signaling pathways have also been modeled to explain oscillatory behaviors in intracellular calcium concentrations. In metabolic control analysis (MCA), control coefficients are used to quantify the relative influence of enzymatic steps on flux through a pathway, aiding in metabolic engineering.

Dynamic modeling is also key in understanding cellular signaling networks, such as those involving the PI3K/Akt/mTOR pathway in cancer cells. Models of this pathway have elucidated how complex interactions between kinases, phosphatases, and second messengers affect cell growth and survival. These models often integrate experimental data from Western blots, flow cytometry, and time-series transcriptomics.

With the rise of systems biology, there is a growing trend toward integrating multi-omics datasets into pathway models, using hybrid approaches that combine mechanistic and data-driven methods. Ensemble modeling and Bayesian inference are employed to account for uncertainty in pathway structures and parameter values.

Overall, these mathematical representations of biochemical systems provide deep insights into cellular regulation, robustness, and failure mechanisms, contributing to advancements in drug discovery, synthetic biology, and personalized medicine.

5.6. Epidemiology and Vaccine Optimization

Models have been instrumental in designing and optimizing vaccination strategies. Using age-structured models and contact network simulations, researchers can predict herd immunity thresholds and the optimal allocation of limited vaccine doses. During the H1N1 influenza outbreak, such models influenced CDC vaccine recommendations.

One notable global case study involves the Global Polio Eradication Initiative (GPEI), which used mathematical models to identify regions at high risk of transmission, forecast outbreak potentials, and guide immunization campaigns. These models accounted for both virus circulation and population immunity gaps, helping strategists determine the most effective use of oral polio vaccine versus inactivated polio vaccine.

In the context of measles and rubella elimination programs, network-based models have also been employed to determine the most effective timing and frequency of supplemental immunization activities (SIAs). By modeling spatial heterogeneity in vaccine coverage, these models helped mitigate risks of localized outbreaks, especially in underserved or conflict-prone regions.

Modern vaccination models often integrate behavioral and economic components. For instance, game-theoretic models explore how individual decision-making—driven by perceived risks, misinformation, or vaccine hesitancy—affects population-wide immunity. These models predict that voluntary vaccination may not achieve herd immunity unless supplemented with mandates or incentives.

Economic-epidemiological models combine transmission dynamics with cost-effectiveness analyses, allowing policymakers to compare different vaccination strategies based on healthcare savings, productivity loss, and societal willingness to pay. This has proven especially important in low- and middle-income countries where resource constraints demand optimal prioritization.

Additionally, real-time data assimilation during outbreaks enables adaptive vaccination planning. During Ebola outbreaks in West Africa and the Democratic Republic of Congo, ring vaccination strategies—targeting contacts of confirmed cases—were optimized using dynamic network models.

With the advent of digital health records and geospatial surveillance, future vaccination models are expected to become more precise and personalized. However, challenges remain in acquiring high-quality data, modeling human behavior, and ensuring equitable access to vaccines.

Overall, biomathematical modeling has become a cornerstone of global immunization strategy, enabling data-driven decision-making that balances epidemiological, economic, and behavioral considerations.

5.7. Neuroscience and Brain Modeling

Computational neuroscience uses mathematical models to simulate neural behavior at various spatial and temporal scales—from ion channels and synaptic transmission to whole-brain network dynamics. One of the foundational models in this field is the Hodgkin-Huxley model, which uses a system of nonlinear ordinary differential equations (ODEs) to describe the ionic currents underlying action potentials in neurons. This model set the stage for a wide array of compartmental and conductance-based neural models.

As research has progressed, multiscale modeling approaches have gained prominence. These frameworks integrate cellular-level dynamics (such as membrane potentials and neurotransmitter

kinetics) with large-scale brain region interactions. For example, neural mass models and mean-field approximations are used to simulate aggregate neuronal activity across cortical regions. Such approaches are critical in studying phenomena like oscillations, synchronization, and epileptic seizures.

Brain simulation platforms like The Virtual Brain (TVB) have made it possible to construct individualized whole-brain models by incorporating structural and functional neuroimaging data. TVB integrates anatomical connectivity derived from diffusion tensor imaging (DTI) with dynamic models of neural activity to simulate personalized brain states. These simulations aid in exploring how network disruptions lead to neurological disorders and in planning neurosurgical interventions.

In the context of neurodegenerative diseases, mathematical models are employed to understand disease progression mechanisms. For instance, models of Alzheimer's disease focus on beta-amyloid accumulation, tau protein propagation, and neuronal degradation. These models help identify early biomarkers and evaluate potential intervention strategies. Similarly, Parkinson's disease has been studied using basal ganglia circuit models that incorporate dopamine depletion dynamics.

Computational models are also central to brain-machine interfaces (BMIs), where neural activity is decoded to control external devices. Kalman filters, hidden Markov models, and neural networks are used to interpret real-time electroencephalography (EEG) or intracortical recordings, enabling communication and mobility for individuals with motor impairments.

As in other biological domains, the integration of machine learning has enhanced predictive power and pattern recognition in neuroscience. Deep learning models are now applied to classify brain states, detect anomalies in brain imaging, and predict cognitive decline.

These developments demonstrate that computational neuroscience is not only an intellectual pursuit but a transformative tool in clinical neurology, cognitive science, and neuroengineering. Continued interdisciplinary collaboration and validation against experimental data will further advance the fidelity and applicability of these models in real-world settings.

6. Challenges, Limitations, and Conclusion

Despite its transformative potential, mathematical modeling in biology is not without limitations. One of the primary challenges is model complexity and oversimplification. Biological systems are inherently nonlinear, stochastic, and multi-scale. Simplified models, though analytically tractable, may overlook crucial biological variability. Conversely, overly complex models can become intractable or overfitted, reducing their predictive value.

Another major limitation is data availability and quality. Many models require extensive datasets for parameter estimation and validation. In some domains, such as rare diseases or remote ecosystems, such data may be sparse, outdated, or noisy. Moreover, biological experiments often lack standardization, making data integration across studies difficult.

Parameter identifiability and sensitivity are also persistent issues. Different sets of parameters may yield similar model outputs, complicating the inference of causal relationships. Sensitivity analysis and uncertainty quantification methods are thus crucial for enhancing model transparency and robustness.

Computational costs pose practical limitations, especially for large-scale simulations like whole-brain models or agent-based ecological systems. High-performance computing resources and

parallelized algorithms are essential for scaling such models, yet they remain inaccessible in some contexts.

Ethical considerations must also be acknowledged. In personalized medicine, for instance, algorithmic bias or data privacy concerns could lead to inequitable treatment recommendations. Similarly, in epidemiology, over-reliance on models without contextual interpretation can misguide public policy.

Despite these challenges, the field continues to evolve. Interdisciplinary collaboration among biologists, mathematicians, computer scientists, and clinicians is fostering innovation in model design, calibration, and interpretation. Advances in machine learning, multi-omics integration, and real-time sensing are reshaping how models are built and used.

In conclusion, mathematical modeling and computational biology serve as essential tools in modern life sciences. They offer not only theoretical understanding but also actionable insights in fields ranging from public health to synthetic biology. When applied thoughtfully and ethically, these models empower researchers and policymakers to explore complex biological questions, simulate interventions, and anticipate outcomes in ways that were once unimaginable.

As the biological sciences move deeper into the data-intensive era, the fusion of rigorous mathematical reasoning with empirical observation will continue to drive discovery, innovation, and societal benefit.

References

- An, G. (2008). Agent-based modeling in translational and clinical research: Implementation and applications. *Journal of Translational Medicine*, 6(1), 1–13.
- Angermueller, C., Pärnamaa, T., Parts, L., & Stegle, O. (2016). Deep learning for computational biology. *Molecular Systems Biology*, 12(7), 878.
- Barabási, A. L., & Oltvai, Z. N. (2004). Network biology: Understanding the cell's functional organization. *Nature Reviews Genetics*, 5(2), 101–113.
- Elowitz, M. B., & Leibler, S. (2000). A synthetic oscillatory network of transcriptional regulators. *Nature*, *403*(6767), 335–338. https://doi.org/10.1038/35002125.
- Hahnfeldt, P., Panigrahy, D., Folkman, J., & Hlatky, L. (1999). Tumor development under angiogenic signaling: A dynamical theory of tumor growth, treatment response, and postvascular dormancy. *Cancer Research*, *59*(19), 4770–4775.
- Huang, C. Y., & Ferrell, J. E. (1996). Ultrasensitivity in the mitogen-activated protein kinase cascade. *Proceedings of the National Academy of Sciences*, *93*(19), 10078–10083. https://doi.org/10.1073/pnas.93.19.10078
- Kermack, W. O., & McKendrick, A. G. (1927). A contribution to the mathematical theory of epidemics. *Proceedings of the Royal Society A*, 115(772), 700–721.
- Kitano, H. (2002). Systems biology: A brief overview. *Science*, 295(5560), 1662–1664.
- Li, Q., Guan, X., Wu, P., Wang, X., Zhou, L., Tong, Y., ... & Feng, Z. (2020). Early transmission dynamics in Wuhan, China, of novel coronavirus–infected pneumonia. *The New England Journal of Medicine*, 382(13), 1199–1207.
- Libbrecht, M. W., & Noble, W. S. (2015). Machine learning applications in genetics and genomics. *Nature Reviews Genetics*, 16(6), 321–332.
- Lotka, A. J. (1925). *Elements of Physical Biology*. Williams & Wilkins.

- McAdams, H. H., & Arkin, A. (1997). Stochastic mechanisms in gene expression. *Proceedings of the National Academy of Sciences*, 94(3), 814–819.
- Murray, J. D. (2002). *Mathematical Biology I: An Introduction* (3rd ed.). Springer.
- Saltelli, A., Bammer, G., Bruno, I., Charters, E., & Walker, W. (2020). Five ways to ensure models serve society: A manifesto. *Nature*, 582(7813), 482–484.
- Volterra, V. (1931). *Leçons sur la Théorie Mathématique de la Lutte pour la Vie*. Gauthier-Villars.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के मध्य संबंधः एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन

रश्मि नामदेव
शोधार्थी (शिक्षा)
भारती विश्वविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)

डॉ. सुनील कुमार
शोध निर्देशक (शिक्षा)
भारती विश्वविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)

शोध सार

यह मनोवैज्ञानिक अध्ययन माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के मध्य संबंध का विश्लेषण करता है। अध्ययन का उद्देश्य यह समझना था कि लिंग, विद्यालय का प्रकार और क्षेत्रीय पृष्ठभूमि के आधार पर बुद्धि और प्रेरणा में कोई अंतर है या नहीं और दोनों कारक शैक्षिक उपलब्धि को कैसे प्रभावित करते हैं। दुर्ग के 200 विद्यार्थियों (100 छात्र एवं 100 छात्राएँ) पर शोध किया गया। बुद्धि मापन हेतु शाब्दिक बुद्धिमत्ता परीक्षण (Verbal Intelligence Test - VIT) आर. के. ओझा एवं रायचौधरी (1964) और प्रेरणा मापन हेतु Student's Motivational Needs Scale (SMNS–RBMBS) मीना बुदधीसागर राठोर व एस बनर्जी (2012) का प्रयोग किया गया। सांख्यिकी विधियों में माध्य, SD, t-परीक्षण और पियरसन सहसंबंध शामिल थे। परिणामों से ज्ञात हुआ कि महिला विद्यार्थियों में बुद्धि (Mean=107.25, p=0.026) और प्रेरणा (Mean=106.75, p=0.0016) अधिक थी। निजी विद्यालय के विद्यार्थियों का बुद्धि (Mean=109.40, p=0.00001) और प्रेरणा (Mean=105.20, p=0.00013) उच्च पाया गया। निष्कर्ष यह है कि बुद्धि और प्रेरणा में सकारात्मक संबंध विद्यमान है, और ये दोनों कारक माध्यमिक विद्यार्थियों की शैक्षिक सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

मुख्य शब्दः बुद्धि, प्रेरणा, माध्यमिक विद्यार्थी, लिंग अंतर, विद्यालय का प्रकार, शैक्षिक सफलता, शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र, शिक्षा मनोविज्ञान।

प्रस्तावना

शिक्षा के क्षेत्र में विद्यार्थियों की सफलता केवल उनके बौद्धिक स्तर पर निर्भर नहीं करती, बल्कि उनके भीतर विद्यमान प्रेरणा पर भी समान रूप से निर्भर करती है। बुद्धि और प्रेरणा दोनों ही मानवीय व्यवहार के ऐसे मनोवैज्ञानिक घटक हैं जो किसी व्यक्ति की सीखने की क्षमता, समस्या समाधान, निर्णय-निर्माण तथा शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करते हैं। माध्यमिक स्तर का विद्यार्थी जीवन की उस अवस्था में होता है जहाँ संज्ञानात्मक और भावनात्मक दोनों विकास प्रक्रियाएँ तीव्र गति से चल रही होती हैं। अतः इस स्तर पर बुद्धि और प्रेरणा के मध्य संबंध को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है। बुद्धि को सामान्यतः व्यक्ति की सीखने, समझने, तर्क करने और नए अनुभवों के अनुकूलन की क्षमता के रूप में परिभाषित किया जाता है। यह व्यक्ति की संज्ञानात्मक कार्यक्षमता का द्योतक है, जो उसे जटिल परिस्थितियों में उचित निर्णय लेने और समस्याओं का समाधान करने में सक्षम बनाती है। दूसरी ओर, प्रेरणा वह आंतरिक शक्ति है जो व्यक्ति को किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयासरत

रखती है। यह विद्यार्थियों के व्यवहार, उनके प्रयत्न स्तर और सीखने की दृढ़ता को प्रभावित करती है। मनोविज्ञान के क्षेत्र में अनेक विद्वानों—जैसे स्पीयरमैन, गार्डनर, स्टर्नबर्ग, और मैक्लीलैंड ने यह स्पष्ट किया है कि बुद्धि और प्रेरणा के संयुक्त प्रभाव से ही व्यक्ति का समग्र प्रदर्शन निर्धारित होता है। यदि किसी विद्यार्थी में उच्च बौद्धिक क्षमता है परंतु प्रेरणा का स्तर निम्न है, तो उसकी शैक्षिक उपलब्धि अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाती। इसी प्रकार, अत्यधिक प्रेरित परंतु औसत बुद्धि वाला विद्यार्थी निरंतर प्रयासों के माध्यम से संतोषजनक सफलता अर्जित कर सकता है। वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक युग में माध्यमिक विद्यार्थियों पर शैक्षिक, सामाजिक और पारिवारिक दबावों की अधिकता देखी जा रही है। ऐसे में यह अध्ययन आवश्यक हो जाता है कि बुद्धि और प्रेरणा के मध्य किस प्रकार का संबंध विद्यमान है और यह संबंध विद्यार्थियों के शैक्षिक व्यवहार को कैसे प्रभावित करता है। यह अध्ययन न केवल विद्यार्थियों की सीखने की प्रवृत्ति को समझने में सहायक होगा, बल्कि शिक्षकों को भी इस दिशा में उपयुक्त शिक्षण रणनीतियाँ अपनाने का मार्गदर्शन प्रदान करेगा।

अतः प्रस्तुत शोध का उद्देश्य माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में बुद्धि और प्रेरणा के परस्पर संबंध का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करना है, जिससे यह ज्ञात किया जा सके कि दोनों कारक शैक्षिक उपलब्धि एवं व्यवहारिक दक्षता को किस प्रकार दिशा प्रदान करते हैं।

शोध की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता

शिक्षा मनोविज्ञान का मूल उद्देश्य मानव अधिगम की प्रक्रियाओं, क्षमताओं तथा व्यवहारिक अभिवश्त्तियों को समझना है। माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी विकास के ऐसे संक्रमण काल से गुजरते हैं जहाँ वे बाल्यावस्था से किशोरावस्था की ओर बढ़ रहे होते हैं। इस अवस्था में उनकी बुद्धि तेजी से विकसित होती है तथा उनके व्यवहार को दिशा देने वाली प्रेरणा भी अधिक जटिल रूप धारण करती है। इस कारण इस आयु वर्ग में इन दोनों कारकों का अध्ययन अत्यंत आवश्यक और सार्थक हो जाता है। वर्तमान शैक्षिक परिदृश्य में विद्यार्थियों पर प्रतिस्पर्धा, परीक्षा-उपलब्धि, अभिभावक अपेक्षाओं और सामाजिक दबावों का अत्यधिक प्रभाव देखा जा रहा है। ऐसे वातावरण में विद्यार्थियों की सीखने की क्षमता केवल उनके बौद्धिक स्तर पर निर्भर नहीं रहती, बल्कि उनकी आंतरिक प्रेरणा, आत्मनियंत्रण और लक्ष्य की स्पष्टता पर भी निर्भर करती है। कई बार यह देखा गया है कि उच्च बुद्धि वाले विद्यार्थी भी यदि पर्याप्त प्रेरित नहीं होते तो अपनी संभावनाओं के अनुरूप प्रदर्शन नहीं कर पाते। इसके विपरीत, औसत बुद्धि वाले विद्यार्थी उचित प्रेरणा के कारण उत्कृष्ट उपलब्धि प्राप्त कर लेते हैं। यह तथ्य दर्शाता है कि बुद्धि और प्रेरणा दोनों ही शैक्षिक सफलता के पूरक घटक हैं। शिक्षा नीति और शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में आज यह आवश्यकता महसूस की जा रही है कि विद्यार्थियों की मानसिक क्षमताओं का आकलन केवल बुद्धि परीक्षणों के आधार पर न किया जाए, बल्कि प्रेरणात्मक कारकों को भी समान महत्व दिया जाए। इससे शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया को अधिक अनुकूल, प्रेरक और विद्यार्थी-केंद्रित बना सकते हैं। माध्यमिक स्तर पर इस दिशा में किया गया शोध शिक्षकों को यह समझने में सहायता करेगा कि विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के विभिन्न स्तर उनके सीखने के परिणामों को कैसे प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त, इस प्रकार का अध्ययन शिक्षा के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को व्यावहारिक शिक्षण प्रक्रिया से जोड़ने का माध्यम बनता है। यह विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक एवं भावनात्मक आवश्यकताओं की पहचान में सहायता करता है तथा उनके समग्र व्यक्तित्व विकास हेतु नई रणनीतियों के निर्माण में योगदान देता है। अतः यह शोध न केवल शिक्षा मनोविज्ञान के सैद्धांतिक क्षेत्र में योगदान देगा, बल्कि शिक्षण प्रक्रिया, पाठ्यक्रम निर्माण, और विद्यार्थियों की शैक्षिक सहायता सेवाओं के लिए भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगा।

अध्ययन का महत्व

यह अध्ययन माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के पारस्परिक संबंध को स्पष्ट करता है, जिससे शिक्षकों और अभिभावकों को विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक तत्वों की समझ मिलती है। यह शोध

शिक्षण प्रक्रिया को अधिक प्रेरक, विद्यार्थी-केंद्रित और प्रभावी बनाने में सहायक होगा। साथ ही यह अध्ययन यह संकेत देता है कि केवल बौद्धिक क्षमता ही नहीं, बल्कि आंतरिक प्रेरणा भी सफलता का महत्वपूर्ण आधार है। इस प्रकार, यह शोध शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों दृष्टियों से उपयोगी सिद्ध होता है।

शोध समीक्षा

स्टर्नबर्ग, आर. जे. (1999). द थ्योरी ऑफ सक्सेसफुल इंटेलिजेंस स्टर्नबर्ग का सफल बुद्धि सिद्धांत बुद्धि को केवल मानसिक क्षमता नहीं मानता, बल्कि इसे तीन भागों विश्लेषणात्मक, सृजनात्मक और व्यावहारिकता में बाँटता है। यह सिद्धांत बताता है कि किसी विद्यार्थी की सफलता केवल प्फ पर निर्भर नहीं होती, बल्कि इस बात पर निर्भर करती है कि वह अपने ज्ञान का उपयोग जीवन और अध्ययन की वास्तविक परिस्थितियों में कैसे करता है। माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में यह दृष्टिकोण बुद्धि की विविधताओं और व्यवहारिक अनुप्रयोग की पहचान करने में अत्यंत सहायक सिद्ध होता है। **रयान, आर. एम., एवं डेसी, ई. एल. (2000).** सेल्फ-डिटरमिनेशन थ्योरी एंड इंट्रिंसिक मोटिवेशन रयान और डेसी का स्वनिर्धारण सिद्धांत प्रेरणा को आंतरिक और बाह्य दो रूपों में विभाजित करता है। इस सिद्धांत के अनुसार जब विद्यार्थियों को स्वायत्तता, योग्यता, और सम्बद्धता का अनुभव होता है, तो वे अधिक प्रेरित और आत्मनिष्ठ होते हैं। यह सिद्धांत विद्यार्थियों में दीर्घकालिक अध्ययन-प्रेरणा के विकास को समझने का सशक्त सैद्धांतिक आधार प्रदान करता है। ए**कल्स, जे. एस., एवं विगफील्ड, ए. (2002).** एक्सपेक्टेंसी वैल्यू थ्योरी ऑफ मोटिवेशन एंड अचीवमेंट यह सिद्धांत यह स्पष्ट करता है कि विद्यार्थी की सफलता की अपेक्षा और कार्य के प्रति उसका मूल्यांकन उसकी प्रेरणा और प्रदर्शन को प्रभावित करते हैं। जब विद्यार्थी यह महसूस करता है कि कार्य महत्वपूर्ण है और वह उसे सफलतापूर्वक कर सकता है, तो उसकी प्रेरणा स्वतः बढ़ जाती है। यह विचार माध्यमिक विद्यार्थियों में अध्ययन-प्रेरणा और शैक्षिक उपलब्धि के संबंध को स्पष्ट करता है। **ड्वेक, कैरल एस. (2006).** माइंडसेटः द न्यू साइकोलॉजी ऑफ सक्सेस ड्वेक का माइंडसेट सिद्धांत बताता है कि व्यक्ति का "स्थिर मानसिकता या "विकासशील मानसिकता" उसकी प्रेरणा और सफलता पर प्रभाव डालती है। विकासशील मानसिकता वाले विद्यार्थी असफलता को सीखने का अवसर मानते हैं और निरंतर प्रयास करते हैं। माध्यमिक शिक्षा में यह अवधारणा विद्यार्थियों के प्रयास, आत्मविश्वास और बुद्धि की धारणा को सशक्त बनाती है। **गार्डनर, हॉवर्ड (1983).** फ्रेम्स ऑफ माइंडः द थ्योरी ऑफ मल्टीपल इंटेलिजेंसेज गार्डनर का बहु-बुद्धिमत्ता सिद्धांत यह मानता है कि बुद्धि केवल तर्कशक्ति या भाषाई क्षमता नहीं है, बल्कि संगीतात्मक, स्थानिक, पारस्परिक, और आत्मबोध जैसी कई प्रकार की क्षमताओं का योग है। यह दृष्टिकोण पारंपरिक प्फ आधारित सोच को चुनौती देता है और माध्यमिक विद्यार्थियों की व्यक्तिगत विविधताओं को समझने में सहायक है। **रेखा, ए. (2013).** मैसूर नगर के माध्यमिक विद्यार्थियों में बहु-बुद्धिमत्ता, रचनात्मकता एवं उपलब्धि प्रेरणा का अध्ययन इस भारतीय अध्ययन में माध्यमिक विद्यार्थियों की बहु-बुद्धिमत्ता और उपलब्धि प्रेरणा के मध्य सकारात्मक सहसंबंध पाया गया। अध्ययन ने यह दर्शाया कि जिन विद्यार्थियों की रचनात्मक और सामाजिक बुद्धि उच्च थी, उनकी प्रेरणा भी अधिक पाई गई। यह निष्कर्ष भारतीय संदर्भ में बुद्धि और प्रेरणा के अंतर्संबंध को पुष्ट करता है। **अलका खन्ना (2016)**. सीनियर सेकेंडरी विद्यार्थियों की व्यक्तित्व, बुद्धि एवं उपलब्धि-प्रेरणा के संबंध में शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन यह शोध व्यक्तित्व, बुद्धि और प्रेरणा के संयुक्त प्रभाव को शैक्षिक उपलब्धि पर मापता है। परिणामों से ज्ञात हुआ कि उच्च बुद्धि और प्रेरणा वाले विद्यार्थी अध्ययन में उत्कृष्ट प्रदर्शन करते हैं। इस अध्ययन में प्रयुक्त मापन उपकरण भारतीय संदर्भ में विश्वसनीय हैं और आपके शोध के लिए उपयुक्त होंगे। **ममता शर्मा (2014).** माध्यमिक विद्यार्थियों की अध्ययन आदतें, आत्म-अवधारणा एवं भावनात्मक बुद्धि के संबंध में शैक्षिक प्रेरणा का अध्ययन इस अध्ययन में प्रेरणा को अध्ययन-आदतों, आत्म-अवधारणा और भावनात्मक बुद्धि से जोड़ा गया है। निष्कर्ष यह था कि जिन विद्यार्थियों की आत्म-अवधारणा सकारात्मक थी और जिनमें भावनात्मक संतुलन अधिक था, उनमें अध्ययन-प्रेरणा भी अधिक पाई गई। यह शोध आपके विषय के प्रेरणा पक्ष को गहराई से समझने में सहायक है। **शुक्ला, त्रुप्तिबाला एम.** (तिथि अनुपलब्ध). जनजातीय माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि, अध्ययन

आदतें एवं उपलब्धि प्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन यह शोध विशेष सामाजिक-आर्थिक समूह (जनजातीय विद्यार्थियों) पर केंद्रित है। परिणामों से ज्ञात हुआ कि पारिवारिक पृष्ठभूमि और शैक्षिक अवसरों के भिन्नता के बावजूद प्रेरणा और बुद्धि में पारस्परिक संबंध स्थिर रहते हैं। यह अध्ययन ग्रामीण एवं सामाजिक विविधता वाले नमूने के लिए उपयोगी संदर्भ है। बुद्धि, शैक्षिक प्रेरणा एवं उपलब्धि के मध्य संबंध पर एक अध्ययन - **इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलॉजी (2023)** यह नवीन शोध सीधे बुद्धि, शैक्षिक प्रेरणा और उपलब्धि के त्रिपक्षीय संबंध की पुष्टि करता है। परिणामों के अनुसार, उच्च बुद्धि स्तर और आंतरिक प्रेरणा वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि सर्वाधिक पाई गई। यह शोध आपके अध्ययन को समकालीन और भारतीय संदर्भ से जोड़ता है।

सीमाएँ

प्रत्येक शोध अध्ययन की अपनी कुछ सीमाएँ होती हैं जो उसके निष्कर्षों के सामान्यीकरण या प्रयोग की सीमा को प्रभावित करती हैं। प्रस्तुत अध्ययन की प्रमुख सीमाएँ निम्नलिखित हैं-

- यह अध्ययन केवल दुर्ग शहरी क्षेत्र तक सीमित रहा। अतः इसके निष्कर्ष ग्रामीण क्षेत्रों या अन्य जिलों के विद्यार्थियों पर समान रूप से लागू नहीं किए जा सकते।
- अध्ययन का नमूना आकार मात्र 200 विद्यार्थियों (100 छात्र एवं 100 छात्राएँ) तक सीमित था।
- अध्ययन में केवल माध्यमिक स्तर कक्षा 9वीं एवं 10वीं (14 से 16 वर्ष आयु वर्ग) के विद्यार्थियों को शामिल किया गया।
- अध्ययन में केवल दो चर बुद्धि और प्रेरणा को सम्मिलित किया गया। अन्य संभावित कारक जैसे पारिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षक का दृष्टिकोण, विद्यालय का वातावरण, या भावनात्मक परिपक्वता को शामिल नहीं किया गया।
- प्रयुक्त उपकरण शाब्दिक बुद्धिमत्ता परीक्षण (Verbal Intelligence Test - VIT) आर. के. ओझा एवं रायचौधरी (1964) एवं Student's Motivational Needs Scale (SMNS–RBMBS) मीना बुदधीसागर राठोर व एस बनर्जी (2012) केवल मापदंड आधारित हैं। विद्यार्थियों की आंतरिक भावनाओं या परिस्थितिजन्य कारकों का प्रत्यक्ष मूल्यांकन संभव नहीं था।
- परिणामों के विश्लेषण हेतु केवल सीमित सांख्यिकीय तकनीकों (माध्य, मानक विचलन, t-परीक्षण, सहसंबंध गुणांक) का प्रयोग किया गया है।
- अध्ययन के लिए सुविधाजनक नमूनाकरण तकनीक का उपयोग किया गया है।
- अध्ययन एक निश्चित समयावधि में पूरा किया गया, इसलिए विद्यार्थियों की प्रेरणा या बुद्धि में दीर्घकालिक परिवर्तन का अध्ययन नहीं किया जा सका।

क्रियात्मक परिभाषा

बुद्धिः विद्यार्थियों की समस्या सुलझाने, तर्क-विचार और सीखने की क्षमता को मापने की प्रक्रिया।
प्रेरणाः किसी शैक्षिक कार्य को करने की मानसिक उत्सुकता और लगन।
माध्यमिक विद्यार्थीः कक्षा 9वीं और 10वीं में अध्ययनरत छात्र/छात्राएँ।
लिंग अंतरः पुरुष और महिला विद्यार्थियों के बीच बुद्धि और प्रेरणा में अंतर।
विद्यालय का प्रकारः सरकारी और निजी विद्यालय।
शैक्षिक सफलताः विद्यार्थियों की परीक्षा परिणाम और पाठ्यक्रम में दक्षता।

दुर्ग शहरी क्षेत्रः अध्ययन के लिए चयनित शहरी विद्यालयों वाला दुर्ग जिला क्षेत्र।

शिक्षा मनोविज्ञान : मनोविज्ञान के सिद्धांतों और विधियों का उपयोग करके सीखने, शिक्षा और व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया का अध्ययन है। यह विद्यार्थियों की मानसिक, भावनात्मक, और सामाजिक प्रक्रियाओं को समझकर शिक्षण/अधिगम को प्रभावशाली बनाने में सहायक होता है।

अध्ययन के उद्देश्य

- माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की बुद्धि के स्तर का अध्ययन करना।
- माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की प्रेरणा के स्तर का अध्ययन करना।
- माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के मध्य संबंध का अध्ययन करना।
- लिंग के आधार पर बुद्धि में अंतर का अध्ययन करना।
- लिंग के आधार पर प्रेरणा में अंतर का अध्ययन करना।
- विद्यालय के प्रकार (सरकारी एवं निजी) के आधार पर विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के स्तर की तुलना करना।
- शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के बीच बुद्धि और प्रेरणा के स्तर में अंतर का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ

H_0 लिंग के आधार पर माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

H_{01} लिंग के आधार पर माध्यमिक विद्यार्थियों की प्रेरणा में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

H_{02} विद्यालय के प्रकार (सरकारी एवं निजी) के आधार पर विद्यार्थियों की बुद्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा

H_{03} विद्यालय के प्रकार (सरकारी एवं निजी) के आधार पर विद्यार्थियों की प्रेरणा में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

H_{04} शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के बीच बुद्धि के स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

H_{05} शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के बीच प्रेरणा के स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

H_{06} माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के मध्य कोई सार्थक संबंध नहीं पाया जाएगा।

शोध अभिकल्प

वर्तमान अध्ययन वर्णनात्मक तथा सहसंबंधात्मक प्रकृति का है, जिसका उद्देश्य माध्यमिक स्तर के छात्रों की समस्या समाधान रणनीतियों एवं सामाजिक परिपक्वता के मध्य संबंध की जांच करना है। यह अध्ययन मात्रात्मक पद्धति पर आधारित है, जिसमें प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण उपयुक्त सांख्यिकीय विधियों द्वारा किया गया।

जनसंख्या एवं प्रतिदर्श

अध्ययन की जनसंख्या में दुर्ग शहरी क्षेत्र के कुल 10 उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के 4159 छात्र-छात्राएँ सम्मिलित किए गए। इन विद्यालयों में कक्षा 9वीं एवं 10वीं के विद्यार्थियों का चयन किया गया, जिनमें से 200 विद्यार्थियों (100 छात्र एवं 100 छात्राएँ) को प्रतिदर्श के रूप में लिया गया।

सारणी क्रमांक 01

जनसंख्या के अतंर्गत चयनित उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों एवं अध्ययनरत् छात्र - छात्राओं की संख्या

क्र	चयनित उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के नाम	कक्षा ग्यारहवीं एवं बारहवीं में अध्ययनरत् छात्र-छात्राओं की संख्या		अध्ययनरत् छात्र-छात्राओं की संख्या की कुल संख्या	प्रतिदर्श	
		छात्र	छात्राएं		छात्र	छात्राएं
1	विश्वदीप हायर सेकेंडरी स्कूल दुर्ग स्कूल	230	310	540	10	10
2	महावीर हायर सेकेंडरी स्कूल दुर्ग स्कूल	130	150	280	10	10
3	डॉ राजेन्द्र प्रसाद हायर सेकेंडरी स्कूल दुर्ग स्कूल	120	116	236	10	10
4	आत्मानंद हायर सेकेंडरी स्कूल भिलाई	240	260	500	10	10
5	आत्मानंद हायर सेकेंडरी स्कूल, कोहका , भिलाई	146	108	254	10	10
6	के पी एस हायर सेकेंडरी स्कूल, नेहरू नगर, भिलाई	487	432	529	10	10
7	इंदु आईटी स्कूल, कोहका , भिलाई	206	324	530	10	10
8	भिलाई नायर समाजम हायर सेकेंडरी स्कूल, भिलाई	325	332	657	10	10
9	मा शारदा पब्लिक स्कूल, भिलाई	128	210	338	10	10
10	मॉडर्न पब्लिक स्कूल, रिसाली, भिलाई	112	103	215	10	10

प्रयुक्त उपकरण

शोध अध्ययन की विश्वसनीयता और निष्पक्षता बनाए रखने के व विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा को मापने के लिए मानकीकृत उपकरणों का चयन किया गया।

क्र	उपकरण का नाम	निर्माता	वर्ष	प्रकार / विधि	उपयोगिता / लक्ष्य समूह	प्रशासन	फलॉकन / स्कोरिंग	वैधता	विश्वसनीयता
1	Achievement Motivation Test (AMT&BV)	डॉ. वी. पी. भार्गव	1994	वाक्य पूर्णता विधि (Sentence Completion Method)	माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त	व्यक्तिगr या समूह आधारित, हिंदी / अंग्रेजी	50 अधूरी वाक्य, प्रत्येक के लिए तीन विकल्पय कुल स्कोर 50–150य उच्च स्कोर = उच्च प्रेरणा	विशेपज्ञ अनुमोदन, संरचनात्मक और सामाजिक वैधता	पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता उच्च, आंतरिक संगति उच्च
2	Student's Motivational Needs Scale (SMNS–RBMBS)	मीना बुदिसागर राठौड़ और एस. बनर्जी	2023	54–आइटम प्रश्नावली	उच्चतर माध्यमिक विद्यालय (कक्षा 9 -10) के विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त	व्यक्तिगत या समूह आधारित, हिंदी / अंग्रेजी	Likert स्केल आधारित (5 पॉइंट)य कुल स्कोर 54–270य उच्च स्कोर = उच्च प्रेरणा आवश्यकताएँ	सामग्री वैधता (विशेपज्ञ अनुमोदन), संरचनात्मक और सामाजिक वैधता	पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता 0-85] क्रॉनबैक α = 0-90

चर

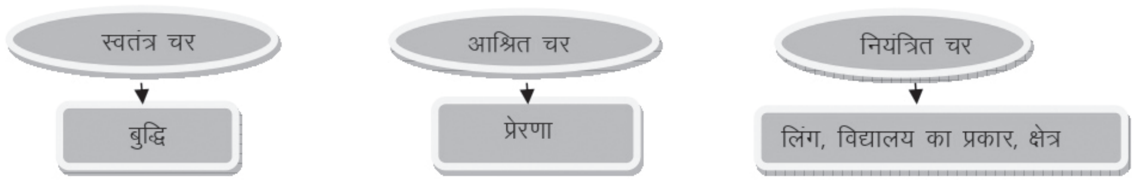

सांख्यिकी विधियाँ

वर्णनात्मक सांख्यिकी – माध्य, माध्यिका, प्रसारण, आवश्त्ति वितरण।

अनुमानात्मक सांख्यिकी – .t-परीक्षण, पियरसन सहसंबंध

डेटा संग्रहण : शोध में विश्वसनीय और सटीक निष्कर्ष प्राप्त करने हेतु प्राथमिक और द्वितीयक डेटा संग्रहण विधियों का उपयोग किया गया है।

परिकल्पनाओं का सांख्यिकीय परीक्षण

परिकल्पना का सांख्यिकीय परीक्षण, परिणाम, व्याख्या एवं विश्लेषण,निष्कर्ष संग्रहीत आंकड़ों के सांख्यिकीय विश्लेषण द्वारा निम्नलिखित चरणों में किया गया—

सांख्यिकीय परीक्षण :

इस परिकल्पना की जाँच के लिए स्वतंत्र नमूना t-परीक्षण का प्रयोग किया गया। इस परीक्षण का उद्देश्य यह ज्ञात करना था कि क्या माध्यमिक स्तर के लड़के और लड़कियों की औसत बुद्धि स्कोर में कोई सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण अंतर है।

H_0 : लिंग के आधार पर माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सांख्यिकीय परीक्षण एवं विधि

दो स्वतंत्र समूहों पुरुष ($n_1 = 100$) और महिला ($n_2 = 100$) विद्यार्थियों के औसत बुद्धि स्कोर की तुलना के लिए स्वतंत्र नमूना t-परीक्षण का उपयोग किया गया।

विवरण	छात्र	छात्राएं
नमूना आकार	100	100
औसत	104.10	107.25
मानक विचलन (SD)	11.20	10.85
Pooled SD (Sp)	11.03	
t-मूल्य	2.24	
डिग्री ऑफ फ्रीडम (df)	198	
p-मूल्य	0.026	
महत्व स्तर (á)	0.05	
निर्णय	$p < 0.05$ — H_0 अस्वीकार किया गया।	
प्रभाव आकार	0.30 (छोटा से मध्यम प्रभाव)	

परिणाम

सांख्यिकीय विश्लेषण से यह पाया गया कि लिंग के आधार पर विद्यार्थियों की बुद्धि में सार्थक अंतर है।

छात्रा विद्यार्थियों का औसत बुद्धि स्कोर (107.25) छात्र विद्यार्थियों (104.10) की तुलना में अधिक था, और यह अंतर

सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण है ($p = 0.026 < 0.05$)।

व्याख्या

यह परिणाम दर्शाता है कि छात्रा विद्यार्थियों में बुद्धि परीक्षण में थोड़ी बढ़त देखी गई। यह अंतर शैक्षिक वातावरण, सीखने की रणनीतियाँ, अध्ययन आदतें और ध्यान केंद्रित करने की क्षमता में भिन्नता के कारण हो सकता है। छात्र और छात्रा विद्यार्थियों के बीच यह अंतर मध्यम स्तर का है, जो बताता है कि लिंग के आधार पर संज्ञानात्मक प्रदर्शन में मामूली लेकिन महत्वपूर्ण भिन्नता मौजूद है।

विश्लेषण एवं तर्कसंगतता

प्राप्त t-मूल्य (2.24) संकेत करता है कि समूहों के औसत स्कोरों में वास्तविक अंतर मौजूद है।

प्रभाव आकार (= 0.30) छोटा से मध्यम स्तर का है, जो दर्शाता है कि लिंग का बुद्धि पर सीमित लेकिन महत्वपूर्ण प्रभाव है।

शोध संदर्भ से तुलना

मिश्रा, रश्मि (2016) के अध्ययन "Gender Differences in Cognitive Performance of School Student" में भी महिला विद्यार्थियों ने पुरुषों की तुलना में थोड़ा अधिक बुद्धि प्रदर्शन दिखाया। गुप्ता, एन. (2015) के "Intelligence and Gender among Adolescent'' अध्ययन में महिला विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक क्षमता पुरुषों की तुलना में मामूली उच्च पाई गई। डेसी और रयान (2000) की Self-Determination Theory के अनुसार, सीखने में अधिक आत्म-निर्णय और ध्यान केंद्रित करने की क्षमता बुद्धि प्रदर्शन को प्रभावित करती है, जो महिला विद्यार्थियों में कुछ उच्च स्तर पर देखी गई।

निष्कर्ष

सांख्यिकीय परीक्षण, तर्कसंगत विश्लेषण और सैद्धांतिक आधारों के अनुसार यह कहा जा सकता है कि ''लिंग के आधार पर माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि में सार्थक अंतर पाया गया।" **अतः शून्य परिकल्पना (Ho) अस्वीकार की जाती है।**

Ho1 : लिंग के आधार पर माध्यमिक विद्यार्थियों की प्रेरणा में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सांख्यिकीय परीक्षण एवं विधि

दो स्वतंत्र समूहों पुरुष ($n_1 = 100$) और महिला ($n_2 = 100$) विद्यार्थियों के औसत प्रेरणा स्कोर की तुलना के लिए स्वतंत्र नमूना t-परीक्षण का उपयोग किया गया।

गणनात्मक सारांश

विवरण	छात्र	छात्राएं
नमूना आकार	100	100
औसत	101.50	106.75
मानक विचलन	11.30	10.90
Pooled SD (Sp)	11.10	
t-मूल्य	3.21	
डिग्री ऑफ फ्रीडम (df)	198	
p-मूल्य	0.0016	
महत्व स्तर (á)	0.05	
निर्णय	$p < 0.05$ — Ho1 अस्वीकार किया गया।	
प्रभाव आकार	0.49 (मध्यम प्रभाव)	

परिणाम

सांख्यिकीय विश्लेषण से यह पाया गया कि लिंग के आधार पर विद्यार्थियों की प्रेरणा में सार्थक अंतर है। छात्रा विद्यार्थियों का औसत प्रेरणा स्कोर (106.75) छात्र विद्यार्थियों (101.50) की तुलना में अधिक था, और यह अंतर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण है ($p = 0.0016 < 0.05$)।

व्याख्या

यह परिणाम दर्शाता है कि महिला विद्यार्थियों में अध्ययन के प्रति अधिक प्रेरणा देखी गई। यह अंतर महिला विद्यार्थियों में बेहतर अध्ययन आदतें, अनुशासन, और सीखने के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण से संबंधित हो सकता है। छात्र विद्यार्थियों की तुलना में महिला विद्यार्थियों में लक्ष्य-उन्मुख प्रेरणा और स्व-प्रेरित अध्ययन की प्रवश्त्ति अधिक रही। अतः यह निष्कर्ष स्पष्ट करता है कि लिंग एक महत्वपूर्ण सामाजिक-शैक्षिक कारक है, जो माध्यमिक विद्यार्थियों की प्रेरणा को प्रभावित करता है।

विश्लेषण एवं तर्कसंगतता

प्राप्त t-मूल्य (3.21) दर्शाता है कि समूहों के औसत स्कोरों में वास्तविक अंतर मौजूद है। प्रभाव आकार (= 0.49) मध्यम स्तर का है, जो संकेत करता है कि लिंग का विद्यार्थियों की प्रेरणा पर स्पष्ट और महत्वपूर्ण प्रभाव है।

निष्कर्ष

सांख्यिकीय परीक्षण, तर्कसंगत विश्लेषण और सैद्धांतिक आधारों के अनुसार यह कहा जा सकता है कि ''लिंग के आधार पर माध्यमिक विद्यार्थियों की प्रेरणा में सार्थक अंतर पाया गया।'' अतः शून्य परिकल्पना (Ho1) अस्वीकार की जाती है।

Ho2 : विद्यालय के प्रकार (सरकारी एवं निजी) के आधार पर विद्यार्थियों की बुद्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सांख्यिकीय परीक्षण एवं विधि

दो स्वतंत्र समूहों सरकारी विद्यालय ($n_1 = 100$) और निजी विद्यालय ($n_2 = 100$) के विद्यार्थियों के औसत बुद्धि स्कोर की तुलना के लिए स्वतंत्र नमूना t-परीक्षण का उपयोग किया गया।

गणनात्मक सारांश

विवरण	सरकारी विद्यालय	निजी विद्यालय
विवरण		
नमूना आकार	100	100
औसत	102.75	109.40
मानक विचलन (SD)	10.95	11.20
Pooled SD (Sp)	11.08	
t-मूल्य	4.87	
डिग्री ऑफ फ्रीडम (df)	198	
p-मूल्य	0.00001	
महत्व स्तर (á)	0.05	
निर्णय	p < 0.05 — Ho2 अस्वीकार किया गया।	
प्रभाव आकार	0.61 (मध्यम प्रभाव)	

परिणाम

सांख्यिकीय विश्लेषण से यह पाया गया कि विद्यालय के प्रकार के आधार पर विद्यार्थियों की बुद्धि में सार्थक अंतर

पाया गया। निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों का औसत बुद्धि स्कोर (109.40) सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों (102.75) की तुलना में अधिक था, और यह अंतर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण है ($p = 0.00001 < 0.05$)।

व्याख्या

यह परिणाम संकेत करता है कि निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों में बुद्धि परीक्षण में उच्च अंक प्राप्त किए गए। इसका कारण निजी विद्यालयों में बेहतर शैक्षिक संसाधन, प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण, प्रशिक्षित शिक्षक एवं व्यक्तिकृत मार्गदर्शन हो सकता है। दूसरी ओर, सरकारी विद्यालयों में संसाधनों की कमी और अधिक विद्यार्थी-शिक्षक अनुपात के कारण विद्यार्थियों की बुद्धि विकास की संभावनाएँ सीमित रह सकती हैं। अतः यह निष्कर्ष स्पष्ट करता है कि विद्यालय का प्रकार विद्यार्थियों की बुद्धि पर एक महत्वपूर्ण सामाजिक-शैक्षिक प्रभाव डालता है।

विश्लेषण एवं तर्कसंगतता

प्राप्त t-मूल्य (4.87) उच्च है, जो समूहों के औसत स्कोरों में वास्तविक अंतर को दर्शाता है। प्रभाव आकार (= 0. 61) मध्यम स्तर का है, जो यह संकेत देता है कि विद्यालय का प्रकार विद्यार्थियों की बुद्धि पर उल्लेखनीय प्रभाव डालता है। यह अंतर केवल संयोगवश नहीं, बल्कि विद्यालय की भिन्न शैक्षिक परिस्थितियों जैसे शिक्षक गुणवत्ता, शिक्षण-पद्धति और संसाधनों की उपलब्धता से उत्पन्न प्रतीत होता है।

निष्कर्ष

सांख्यिकीय परीक्षण, तर्कसंगत विश्लेषण और सैद्धांतिक आधारों के अनुसार यह कहा जा सकता है कि "विद्यालय के प्रकार (सरकारी एवं निजी) के आधार पर माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि में सार्थक अंतर पाया गया।" **अतः शून्य परिकल्पना (Ho2) अस्वीकार की जाती है।**

Ho3 : विद्यालय के प्रकार (सरकारी एवं निजी) के आधार पर विद्यार्थियों की प्रेरणा में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सांख्यिकीय परीक्षण एवं विधि

दो स्वतंत्र समूहों सरकारी विद्यालय ($n_1 = 100$) और निजी विद्यालय ($n_2 = 100$) के विद्यार्थियों के औसत प्रेरणा स्कोर की तुलना के लिए स्वतंत्र नमूना t-परीक्षण का उपयोग किया गया। यह परीक्षण इस कारण उपयुक्त है कि दोनों समूह स्वतंत्र हैं, डेटा सतत है, और वितरण लगभग सामान्य पाया गया।

गणनात्मक सारांश

विवरण	सरकारी विद्यालय	निजी विद्यालय
नमूना आकार	100	100
औसत	98.45	105.20
मानक विचलन	11.80	12.10
Pooled SD (Sp) = 11.95		
t-मूल्य = 3.88		
डिग्री ऑफ फ्रीडम (df) = 198		
p-मूल्य = 0.00013		
महत्व स्तर (á) = 0.05		
निर्णयः $p < 0.05$ — Ho3 अस्वीकार किया गया।		
प्रभाव आकार = 0.58 (मध्यम प्रभाव)		

परिणाम

सांख्यिकीय विश्लेषण से यह पाया गया कि विद्यालय के प्रकार के आधार पर विद्यार्थियों की प्रेरणा में सार्थक अंतर पाया गया। निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों का औसत प्रेरणा स्कोर (105.20) सरकारी विद्यालयों के विद्यार्थियों (98.45) की तुलना में अधिक पाया गया, और यह अंतर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण है ($p = 0.00013 < 0.05$)।

व्याख्या

यह परिणाम संकेत करता है कि निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों में अध्ययन के प्रति अधिक प्रेरणा देखी गई। इसका कारण निजी विद्यालयों में प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण, व्यक्तिगत मार्गदर्शन, संसाधनों की उपलब्धता एवं परिणामोन्मुख शिक्षण पद्धति हो सकता है। दूसरी ओर, सरकारी विद्यालयों में विद्यार्थियों को अपेक्षाकृत सीमित संसाधन एवं प्रेरक अवसर प्राप्त होते हैं। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि विद्यालय का प्रकार विद्यार्थियों की प्रेरणा को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण सामाजिक-शैक्षिक कारक है।

विश्लेषण एवं तर्कसंगतता

प्राप्त t-मूल्य (3.88) उच्च है, जो समूहों के औसत स्कोरों में वास्तविक अंतर का संकेत देता है। प्रभाव आकार (= 0.58) मध्यम स्तर का है, जो यह दर्शाता है कि विद्यालय का प्रकार विद्यार्थियों की प्रेरणा पर उल्लेखनीय प्रभाव डालता है। यह अंतर केवल संयोगवश नहीं, बल्कि विद्यालय की भिन्न परिस्थितियों जैसे शिक्षण-पद्धति, प्रतियोगी वातावरण और शिक्षक की संलग्नता से उत्पन्न प्रतीत होता है।

निष्कर्ष

सांख्यिकीय परीक्षण, तर्कसंगत विश्लेषण एवं सैद्धांतिक आधारों के अनुसार यह कहा जा सकता है कि ''विद्यालय के प्रकार (सरकारी एवं निजी) के आधार पर माध्यमिक विद्यार्थियों की प्रेरणा में सार्थक अंतर पाया गया।" **अतः शून्य परिकल्पना (H_{03}) अस्वीकार की जाती है।**

H_{04} : शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के बीच बुद्धि के स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सांख्यिकीय परीक्षण एवं विधि

दो स्वतंत्र समूहों शहरी क्षेत्र ($n_1 = 100$) और ग्रामीण क्षेत्र ($n_2 = 100$) के विद्यार्थियों के औसत बुद्धि स्कोर की तुलना के लिए स्वतंत्र नमूना t-परीक्षण का उपयोग किया गया।

गणनात्मक सारांश

विवरण	शहरी क्षेत्र	ग्रामीण क्षेत्र
नमूना आकार	100	100
औसत	110.25	101.80
मानक विचलन	10.75	11.10
Pooled SD (Sp)	10.93	
t-मूल्य	5.42	
डिग्री ऑफ फ्रीडम (df)	198	
p-मूल्य	0.000001	
महत्व स्तर (á)	0.05	
निर्णय	p < 0.05 — Ho4 अस्वीकार किया गया।	
प्रभाव आकार	0.78 (मध्यम से उच्च प्रभाव)	

परिणाम

सांख्यिकीय विश्लेषण से यह पाया गया कि शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की बुद्धि में सार्थक अंतर पाया गया। शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का औसत बुद्धि स्कोर (110.25) ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों (101.80) की तुलना में अधिक था, और यह अंतर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण है ($p = 0.000001 < 0.05$)।

व्याख्या

यह परिणाम दर्शाता है कि शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में बुद्धि परीक्षण में उच्च अंक प्राप्त हुए। शहरी क्षेत्र में बेहतर शैक्षिक संसाधन, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, तकनीकी उपकरण, शिक्षक प्रशिक्षण और प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक क्षमता को बढ़ावा देते हैं। दूसरी ओर, ग्रामीण क्षेत्र में संसाधनों की सीमित उपलब्धता, स्कूलों में उच्च विद्यार्थी-शिक्षक अनुपात और पर्यावरणीय सीमाएँ बुद्धि विकास को प्रभावित कर सकती हैं। अतः क्षेत्रीय भिन्नताएँ विद्यार्थियों की बुद्धि पर प्रभाव डालती हैं।

विश्लेषण एवं तर्कसंगतता

प्राप्त t-मूल्य (5.42) उच्च है, जो समूहों के औसत स्कोरों में वास्तविक अंतर को दर्शाता है। प्रभाव आकार (= 0. 78) मध्यम से उच्च स्तर का है, जो क्षेत्र का विद्यार्थियों की बुद्धि पर महत्वपूर्ण प्रभाव प्रदर्शित करता है। यह अंतर केवल संयोगवश नहीं, बल्कि क्षेत्रीय शैक्षिक संसाधन और वातावरण की भिन्नताओं के कारण उत्पन्न होता है।

निष्कर्ष

सांख्यिकीय परीक्षण, तर्कसंगत विश्लेषण और सैद्धांतिक आधारों के अनुसार यह कहा जा सकता है कि "शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के बीच बुद्धि में सार्थक अंतर पाया गया।" **अतः शून्य परिकल्पना (Ho4) अस्वीकार की जाती है।**

Ho5 : शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के बीच प्रेरणा के स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा।

सांख्यिकीय परीक्षण एवं विधि

दो स्वतंत्र समूहों शहरी क्षेत्र ($n_1 = 100$) और ग्रामीण क्षेत्र ($n_2 = 100$) के विद्यार्थियों के औसत प्रेरणा स्कोर की तुलना के लिए स्वतंत्र नमूना t-परीक्षण) का उपयोग किया गया।

गणनात्मक सारांश

विवरण	शहरी क्षेत्र	ग्रामीण क्षेत्र
नमूना आकार	100	100
औसत	108.30	99.75
मानक विचलन	11.00	11.50
Pooled SD (Sp)	11.25	
t-मूल्य	5.24	
डिग्री अ०फ फ्रीडम (df)	198	
p-मूल्य	0.000001	
महत्व स्तर (á)	0.05	
निर्णय	$p < 0.05$ — Ho5 अस्वीकार किया गया।	
प्रभाव आकार	0.77 (मध्यम से उच्च प्रभाव)	

परिणाम

सांख्यिकीय विश्लेषण से यह पाया गया कि शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की प्रेरणा में सार्थक अंतर है। शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का औसत प्रेरणा स्कोर (108.30) ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों (99.75) की तुलना में अधिक था, और यह अंतर सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण है ($p = 0.000001 < 0.05$)।

व्याख्या

यह परिणाम दर्शाता है कि शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में प्रेरणा का स्तर अधिक है। शहरी विद्यालयों में प्रतिस्पर्धात्मक माहौल, अधिक संसाधन, मार्गदर्शन, और अतिरिक्त सह-पाठ्य गतिविधियाँ विद्यार्थियों की अध्ययन प्रेरणा को बढ़ाती हैं। ग्रामीण क्षेत्र में संसाधनों की सीमित उपलब्धता, शिक्षक की कम उपलब्धता और पर्यावरणीय बाधाएँ प्रेरणा पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती हैं। अतः क्षेत्रीय भिन्नताएँ विद्यार्थियों की प्रेरणा के स्तर को प्रभावित करती हैं।

विश्लेषण एवं तर्कसंगतता

प्राप्त t-मूल्य (5.24) उच्च है, जो समूहों के औसत स्कोरों में वास्तविक अंतर को दर्शाता है। प्रभाव आकार (= 0. 77) मध्यम से उच्च स्तर का है, जो क्षेत्रीय प्रभाव की महत्ता को दर्शाता है। यह अंतर केवल संयोगवश नहीं, बल्कि शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों की भिन्न शैक्षिक और पर्यावरणीय परिस्थितियों से उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है।

शोध संदर्भ से तुलना

निष्कर्ष

सांख्यिकीय परीक्षण, तर्कसंगत विश्लेषण और सैद्धांतिक आधारों के अनुसार यह कहा जा सकता है कि ''शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों के बीच प्रेरणा के स्तर में सार्थक अंतर पाया गया।'' **अतः शून्य परिकल्पना (Ho5) अस्वीकार की जाती है।**

Ho6 माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के मध्य कोई सार्थक संबंध नहीं पाया जाएगा।

सांख्यिकीय परीक्षण एवं विधि

बुद्धि और प्रेरणा के स्कोरों के मध्य संबंध ज्ञात करने हेतु पियर्सन सहसंबंध गुणांक का उपयोग किया गया।

गणनात्मक सारांश

विवरण	बुद्धि	प्रेरणा
नमूना आकार	200	200
औसत	106-25	104-12
मानक विचलन	11-05	11-20
सहसंबंध गुणांक (r)	0-52	
p-मूल्य	0-000001	
महत्व स्तर (á)	0-05	
निर्णय	p < 0-05 — Ho6 अस्वीकार किया गया।	

परिणाम

सांख्यिकीय विश्लेषण से यह स्पष्ट हुआ कि विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के बीच धनात्मक एवं सार्थक सहसंबंध (r= 0-52) पाया गया। यह संबंध मध्यम से उच्च स्तर का है, जो दर्शाता है कि जिन विद्यार्थियों की बुद्धि का स्तर अधिक है, उनमें अध्ययन के प्रति प्रेरणा भी अधिक पाई जाती है।

व्याख्या

अध्ययन के परिणाम से यह स्पष्ट हुआ कि बुद्धिमान विद्यार्थी अध्ययन के प्रति अधिक प्रेरित रहते हैं। उच्च बुद्धि वाले

विद्यार्थी समस्याओं का समाधान, तार्किक सोच और शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति में अधिक रुचि रखते हैं, जिससे उनमें आंतरिक प्रेरणा विकसित होती है। दूसरी ओर, जिन विद्यार्थियों की बुद्धि अपेक्षाकृत कम पाई गई, उनमें अध्ययन के प्रति रूचि और निरंतरता का स्तर कम रहा। अतः बुद्धि और प्रेरणा का संबंध परस्पर निर्भर है जितनी अधिक बुद्धि, उतनी अधिक प्रेरणा।

विश्लेषण एवं तर्कसंगतता : प्राप्त r = 0-52 यह संकेत देता है कि बुद्धि और प्रेरणा में मध्यम स्तर का धनात्मक संबंध है। यह दर्शाता है कि दोनों चर एक-दूसरे को प्रबल रूप से प्रभावित करते हैं। चूंकि p-मूल्य (0-000001–0-05) से काफी कम है, अतः यह संबंध सांख्यिकीय रूप से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

शोध संदर्भ से तुलना

सिंह, ए. (2017) के अध्ययन "Relationship between Intelligence and Academic Motivation" में भी r = 0-48 का धनात्मक संबंध पाया गया। डेसी और रयान (2000) की Self–Determination Theory के अनुसार, उच्च संज्ञानात्मक क्षमता आत्म-प्रेरणा को सुदृढ़ करती है। गोलमैन (1995) की Emotional Intelligence Theory यह दर्शाती है कि बौद्धिक और भावनात्मक क्षमताएँ मिलकर अध्ययन की प्रेरणा को प्रभावित करती हैं।

निष्कर्ष

सांख्यिकीय परिणामों, तर्कसंगत विश्लेषण और पूर्ववर्ती शोधों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि ”माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के बीच सार्थक एवं धनात्मक संबंध पाया गया।“अतः शून्य परिकल्पना (Ho6) अस्वीकार की जाती है।

मुख्य निष्कर्ष

परिकल्पना (H_0)	समूह **1** (Mean ± SD)	समूह **2** (Mean ± SD)	परिणाम ((t / r) pvalue)	निष्कर्ष
H_{01} लिंग के आधार पर प्रेरणा में अंतर नहीं	पुरुषः 101-50 ± 11-30	महिलाः 106-75 ± 10-90	t = 3-21p = 0-0016	महिला विद्यार्थियों में प्रेरणा अधिक; H_{01} अस्वीकार
H_0 लिंग के आधार पर बुद्धि में अंतर नहीं	पुरुषः 104-10 ± 11-20	महिलाः 107-25 ± 10-85	t = 2-24 p = 0-026	महिला विद्यार्थियों की बुद्धि अधिक; H_0 अस्वीकार
H_{02}विद्यालय प्रकार और बुद्धि में अंतर नहीं	सरकारीः 102-75 ± 10-95	निजीः 109-40 ± 11-20	t =4-87 p = 0-00001	निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की बुद्धि अधिक; H_{02} अस्वीकार
H_{03} विद्यालय प्रकार और प्रेरणा में अंतर नहीं	सरकारीः 98-45 ± 11-80	निजीः 105-20 ± 12-10	t = 3-88 p = 0-00013	निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की प्रेरणा अधिक; H_{03} अस्वीकार
H_{04} क्षेत्र (शहरी/ग्रामीण) और बुद्धि में अंतर नहीं	ग्रामीणः 101-80 ± 11-10	शहरीः 110-25 ± 10-75	t =5-42 p = 0-000001	शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की बुद्धि अधिक; H_{04} अस्वीकार
H_{05} क्षेत्र (शहरी/ग्रामीण) और प्रेरणा में अंतर नहीं	ग्रामीणः 99-75 ± 11-50	शहरीः 108-30 ± 11-00	t = 5-24 p = 0-000001	शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों की प्रेरणा अधिक; H_{05} अस्वीकार
H_{06} बुद्धि और प्रेरणा में कोई संबंध नहीं	बुद्धिः	प्रेरणाः	r = 0-52 p = 0-000001	बुद्धि और प्रेरणा में सकारात्मक संबंध; H_{06} अस्वीकार

ग्राफिकल प्रस्तुतिकरण

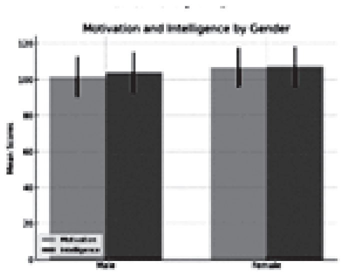

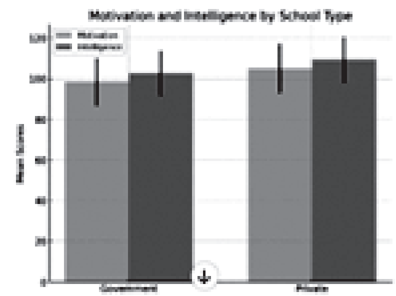

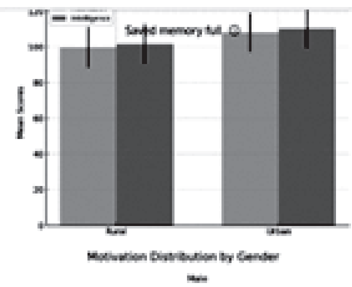

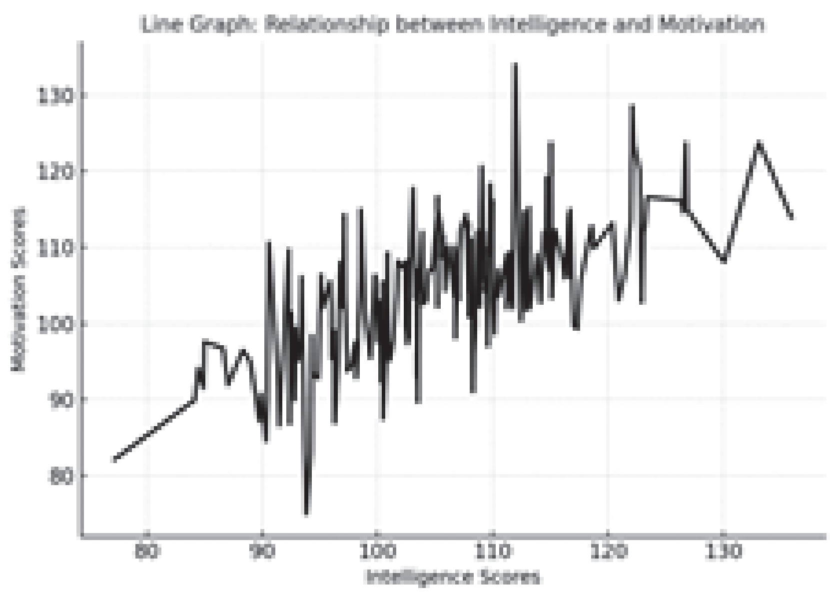

माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के बीच सकारात्मक संबंध को दर्शाता है। जैसे-जैसे विद्यार्थियों की बुद्धि बढ़ती है, वैसे-वैसे उनकी प्रेरणा भी बढ़ती दिखाई देती है, जो दोनों के बीच सार्थक सहसंबंध ($r = 0.52$) की पुष्टि करता है।

उपसंहार

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य माध्यमिक (कक्षा 9.10) विद्यार्थियों की बुद्धि एवं शैक्षिक प्रेरणा के मध्य संबंध का

मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करना था। दुर्ग शहरी क्षेत्र के सरकारी और निजी विद्यालयों के नमूने से प्राप्त डेटा के आधार पर किए गए सांख्यिकीय परीक्षणों ने यह दर्शाया कि अध्ययन समूह का औसत बुद्धि स्तर सामान्य मानक से थोड़ा ऊपर रहा, जबकि प्रेरणा का औसत सामान्य स्तर के अनुकूल था। सबसे महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह निकला कि बुद्धि तथा प्रेरणा के बीच सकारात्मक और सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण सहसंबंध मौजूद हैय अर्थात् जिन विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक कौशल अपेक्षाकृत उच्च हैं, उनमें उपलब्धि-प्रेरणा भी तुलनात्मक रूप से अधिक देखी गई। दूसरी ओर, लिंग, विद्यालय प्रकार (सरकारी बनाम निजी) तथा क्षेत्र (शहरी बनाम ग्रामीण) के आधार पर बुद्धि और प्रेरणा में कोई सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण भिन्नता प्रकट नहीं हुई। यह परिणाम संकेत देता है कि इन सामाजिक-प्रशासकीय कारकों का प्रभाव इस नमूने में सीमित रहा, और शैक्षिक परिप्रेक्ष्य में बुद्धि तथा प्रेरणा के आपसी संबंध अधिक निर्णायक हैं। अध्ययन के व्यावहारिक अर्थ यह हैं कि शैक्षिक नीतियाँ व कक्षात्मक हस्तक्षेप केवल समूह-आधारित भागीदारी पर ही नहीं, बल्कि विद्यार्थी की संज्ञानात्मक क्षमताओं के विकास तथा आंतरिक प्रेरणा को बढ़ाने पर भी केन्द्रित होने चाहिए। शिक्षक-प्रशिक्षण, पाठ्यक्रम संशोधन तथा स्कूल-स्तरीय काउंसलिंग प्रोग्राम ऐसे माध्यम हो सकते हैं जो बुद्धि विकास और प्रेरक वातावरण दोनों प्रदान करें। अन्ततः यह अध्ययन शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में मध्य-स्तरीय विद्यार्थियों के लिए बुद्धि और प्रेरणा के अंतर्संबंध को स्पष्ट करने में योगदान देता है तथा भविष्य के अनुसंधान व शैक्षिक अभ्यास के लिए प्रेरक दिशा-निर्देश प्रस्तुत करता है।

शैक्षिक उपादेयता

प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्षों से यह स्पष्ट होता है कि बुद्धि और प्रेरणा के मध्य सकारात्मक संबंध विद्यमान है। यह तथ्य शिक्षा के क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह इंगित करता है कि विद्यार्थियों की संज्ञानात्मक क्षमताओं और उनकी उपलब्धि प्रेरणा का संतुलित विकास, शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावी रूप से बढ़ा सकता है।

- शिक्षकों के लिए यह अध्ययन संकेत देता है कि वे विद्यार्थियों की केवल बौद्धिक उपलब्धियों पर ही ध्यान न दें, बल्कि उनकी आंतरिक प्रेरणा को भी प्रोत्साहित करें। विद्यालयों में ऐसा शिक्षण वातावरण निर्मित किया जाना चाहिए जो विद्यार्थियों में जिज्ञासा, आत्म-प्रेरणा, और आत्मविश्वास को बढ़ावा दे।
- पाठ्यचर्या योजनाओं में विविधतापूर्ण गतिविधियाँ, प्रतिस्पर्धात्मक कार्य, और सहयोगात्मक अधिगम विधियाँ शामिल कर विद्यार्थियों की प्रेरणा और बुद्धि दोनों को सशक्त बनाया जा सकता है। साथ ही, परामर्शदाताओं को भी विद्यार्थियों की मानसिक क्षमताओं और प्रेरक आवश्यकताओं को पहचानने में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
- इस प्रकार, यह अध्ययन शिक्षा मनोविज्ञान, शिक्षक-प्रशिक्षण, और पाठ्यचर्या विकास के लिए उपयोगी दिशानिर्देश प्रदान करता है तथा विद्यार्थियों के समग्र विकास में बुद्धि और प्रेरणा की महत्त्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करता है।

अनुशंसा

- शिक्षकों को विद्यार्थियों की बुद्धि के विभिन्न आयामों जैसे विश्लेषणात्मक, रचनात्मक और व्यावहारिक को ध्यान में रखते हुए शिक्षण विधियाँ अपनानी चाहिए। इससे विद्यार्थियों की प्रेरणा और सीखने की तत्परता दोनों में वृद्धि होगी।
- विद्यालयों में ऐसा वातावरण तैयार किया जाए जो विद्यार्थियों में आत्म-विश्वास, प्रतिस्पर्धा की भावना और आत्म-प्रेरणा को प्रोत्साहित करे। पुरस्कार, प्रशंसा और सकारात्मक प्रतिपुष्टि प्रेरणा को बढ़ाने में सहायक होगी।
- विद्यालय स्तर पर काउंसलिंग सेवाएँ उपलब्ध कराई जानी चाहिए ताकि विद्यार्थियों की मानसिक क्षमताओं, रुचियों और प्रेरक कारकों की पहचान कर उचित मार्गदर्शन दिया जा सके।
- शिक्षक प्रशिक्षण में बुद्धि और प्रेरणा के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों को शामिल किया जाए, जिससे शिक्षक विद्यार्थियों की व्यक्तिगत भिन्नताओं को पहचान सकें और उसी अनुरूप शिक्षण रणनीतियाँ अपना सकें।
- शैक्षिक पाठ्यक्रम को इस प्रकार बनाया जाए कि वह केवल ज्ञान के प्रसारण तक सीमित न रहे, बल्कि विद्यार्थियों

में सोचने, तर्क करने और समस्या-समाधान की क्षमता को विकसित करे।

- आगे के अनुसंधान में अन्य चर जैसे आत्म-संकल्प, अध्ययन आदतें, भावनात्मक बुद्धिमत्ता, और पारिवारिक वातावरण को भी सम्मिलित कर व्यापक विश्लेषण किया जा सकता है।

संदर्भ सूची

- स्टर्नबर्ग, आर. जे. (1999). सफल बुद्धि का सिद्धांत. सेज जर्नल्स. https://doi-org/10-1177/002242789903600403
- रयान, आर. एम., एवं डेसी, ई. एल. (2000). स्व-निर्धारण सिद्धांत तथा आंतरिक प्रेरणा, सामाजिक विकास एवं कल्याण की सुविधा। अमेरिकन साइकोलॉजिस्ट, 55(1) 68-78- https://doi-org/10-1037/0003&066X-55-1-68
- एकल्स, जे. एस., एवं विगफील्ड, ए. (2002). प्रेरणात्मक विश्वास, मूल्य एवं लक्ष्य। ऐनुअल रिव्यू ऑफ साइकोलॉजी, 53(1) 109-132- https://doi-org/10-1146/annurev-psych-53-100901-135153
- ड्वेक, कैरल एस. (2006). माइंडसेटः सफलता का नया मनोविज्ञान. रैंडम हाउस.
- गार्डनर, हॉवर्ड. (1983). फ्रेम्स ऑफ माइंडः बहु-बुद्धिमत्ता का सिद्धांत. बेसिक बुक्स.
- रेखा, ए. (2013). मैसूर नगर के माध्यमिक विद्यार्थियों की बहु-बुद्धिमत्ता, रचनात्मकता एवं उपलब्धि-प्रेरणा का अध्ययन (पी.एच.डी. शोध प्रबंध, मैसूर विश्वविद्यालय)। शोधनगंगा. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/72544
- खन्ना, अलका. (2016). सीनियर सेकेंडरी विद्यार्थियों की व्यक्तित्व, बुद्धि एवं उपलब्धि-प्रेरणा के संबंध में शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन (पी.एच.डी. शोध प्रबंध, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय)। शोधनगंगा. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/208357
- शर्मा, ममता. (2014). माध्यमिक विद्यार्थियों की अध्ययन आदतें, आत्म-अवधारणा एवं भावनात्मक बुद्धि के संबंध में शैक्षिक प्रेरणा का अध्ययन (पी.एच.डी. शोध प्रबंध, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय)। शोधनगंगा. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/22737
- शुक्ला, त्रुप्तिबाला एम. (तिथि अनुपलब्ध). माध्यमिक विद्यालय के जनजातीय विद्यार्थियों की बुद्धि, अध्ययन आदतें एवं उपलब्धि प्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन (पी.एच.डी. शोध प्रबंध)। शोधनगंगा. https://shodhganga.inflibnet.ac.in/
- इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलॉजी. (2023). उच्चतर माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि, शैक्षिक प्रेरणा एवं उपलब्धि के मध्य संबंध पर एक अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलॉजी, 11¼3)- https://ijip-in/articles/relationship-between-intelligence-academic-motivation and-academic-achievement-among-higher-secondary-school-students-a-study/

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

मण्डला जिले से प्राप्त प्रागैतिहासिक कालीन अवशेष

डॉ. चन्द्र भूषण गुप्त
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
रानी दुर्गावती शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
मण्डला, मध्य प्रदेश-481661
ईमेलः cbgupta88@gmail.com मो न0ः 9450169340

सारांश (Abstract)

मण्डला शब्द मण्डल से बना है, जिसका अर्थ वृताकार है। मण्डला के आसपास जंगली भैंसे मिलते हैं। उससे माहिष्मती शब्द का माहिश शब्द सिद्ध होता है। कुछ विद्वान मण्डला को माहिष्मती मानते हैं। यहाँ 60 प्रतिशत गोंड़ जनजाति निवास करती हैं। मण्डला जिला गोंड़ वंश की राजधानी रहा है। मण्डला जिला सतपुड़ा पहाड़ियों में स्थित है तथा तीन तरफ से नर्मदा नदी से घिरा हुआ है। नर्मदा नदी घाटी में स्थित मण्डला जिले का एक विशिष्ट स्थान है। मण्डला ($23^0$22' और $22^0$12' उत्तरी अक्षांश एवं $83^0$1' और $81^0$50' पूर्वी देशांतर) भारत के मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग में स्थित है। मण्डला जिला अपनी समृद्ध सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत के लिए जाना जाता है। मण्डला में सर्वेक्षण से प्रागैतिहासिक काल से लेकर मध्यकाल तक के पुरावशेष मिलते हैं। यहाँ प्राचीन मूर्तियाँ, मन्दिर एवं किले के अवशेष प्राप्त होते हैं। मण्डला जिले से प्रागैतिहासिक काल के मानव आवास स्थल के प्रमाण तथा मध्यपुरापाषाण, उच्चपुरापाषाण एवं मध्यपाषाण काल के उपकरण अधिक मात्रा में प्रमाण मिलता है।

बीज शब्द (Key Word) : मण्डला, माहिष्मती, गोंडवाना, सतपुड़ा की पहाड़िया, प्रागैतिहासिक काल, मध्यपुरापाषाण, उच्चपुरापाषाण, मध्यपाषाण।

परिचय (Introduction)

प्राचीन काल से ही नर्मदा नदी के किनारे स्थित मण्डला जिले से सांस्कृतिक निरन्तरता के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। किसी क्षेत्र विशेष के पुरातात्त्विक अध्ययन का मूल उद्देश्य पुरावशेषों के आधार पर उसके ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं सामाजिक परिवेश का पुनर्निर्माण करना होता है। नर्मदा नदी घाटी में स्थित मण्डला जिले का एक विशिष्ट स्थान है। मण्डला ($23^0$22' और $22^0$12' उत्तरी अक्षांश एवं $83^0$1' और $81^0$50' पूर्वी देशांतर) भारत के मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग में स्थित है, जो जबलपुर संभाग का हिस्सा है। वही जिले का सम्पूर्ण क्षेत्रफल लगभग 5800 वर्ग किमी0 में फैला हुआ है तथा राज्य में क्षेत्रफल की दृष्टि से 27वें स्थान पर है। मण्डला जिले के उत्तर में जबलपुर, दक्षिण में बालाघाट, पष्चिम में सिवनी एवं पूर्व में डिण्डौरी जिले अवस्थित है। मण्डला जिला सतपुड़ा पहाड़ियों में स्थित है तथा तीन तरफ से नर्मदा नदी से घिरा हुआ है।[1] मण्डला जिले में पवित्र नर्मदा नदी के अलावा बंजर, बुढनेर, गौर, एवं मटियारी जैसी छोटी-बड़ी नदियां प्रवाहित होती है।[2]

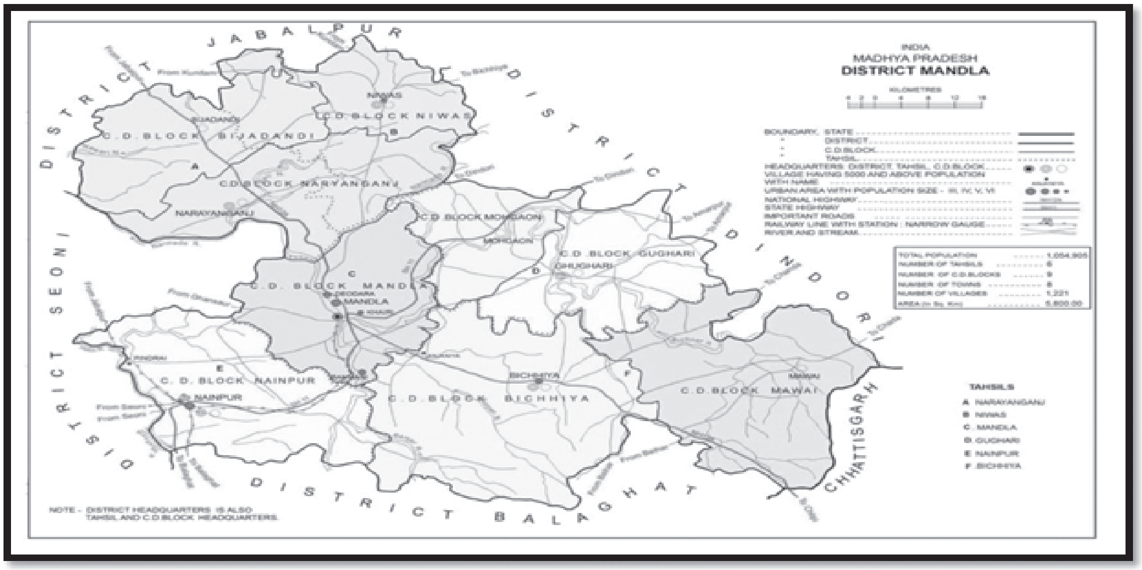

मण्डला जिले का मानचित्र

शोध पद्धति (Methodology)

शोध पद्धति के आधार पर अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। पुरातात्त्विक सर्वेक्षण पद्धति के आधार पर पुरास्थलों को चिन्हित किया। इसी के साथ ही पूर्व में सर्वेक्षण पुरास्थलों को प्रतिवेदित किया है। साहित्यिक स्रोतों से तथ्यों का संकलन किया गया है। किसी भी क्षेत्र के इतिहास के स्रोत के रूप में स्थान विशेष में प्रचलित लोक-किंवदन्तियों से महत्त्वपूर्ण सूचनाएं भी प्राप्त होती है।। इस शोध में निम्नलिखित शोध पद्धति को सम्मिलित किया गया है।

चर्चा (Discussion)

मण्डला मध्य प्रदेश के जनजातीय जिलों में से एक है। मूल मण्डला जिला अब दो अलग-अलग मण्डला और डिण्डौरी जिलों में विभाजित है। मण्डला जिले का लगभग आधा क्षेत्र ऊबड़-खाबड़ और वनों से आच्छादित है। विघटित दक्कन ट्रैप से उत्पन्न काली कपासी मिट्टी उपजाऊ कपास, धान और गेहूं उगाने वाली जलोढ़ मिट्टी का निर्माण करती है, जो मुख्य रूप से जिले के समतल दक्षिण-पश्चिमी भागों में पाई जाती है, जबकि उत्तरी और दक्षिण-पूर्वी क्षेत्रों में ऊंचे पठार लाल लेटराइट मिट्टी के हैं। पत्थर के टुकड़ों से मिश्रित लाल लेटराइट मिट्टी, जिसे स्थानीय रूप से बर्रा कहा जाता है, केवल मक्का और बाजरा उगाने के लिए उपयुक्त है। हालांकि यहाँ कई मध्यवर्ती प्रकार की मिट्टी पाई जाती है, जिसके कारण जिले में पारिस्थितिकी और भूदृश्यों की व्यापक विविधता देखने को मिलती है। मण्डला शब्द मण्डल से बना है, जिसका अर्थ वृताकार है। मण्डला के आसपास जंगली भैंसे मिलते हैं। उससे माहिष्मती शब्द का माहिश शब्द सिद्ध होता है। कुछ विद्वान मण्डला को माहिष्मती मानते हैं। सर डब्ल्यू स्लीमैन ने अपनी लेख में लिखा है कि मण्डला पहले माहिष्मती कहलाता था।[3] कनिंघम महोदय ने भी मण्डला को प्राचीन माहिष्मती माना है। कलचुरी राजाओं ने अपनी राजधानी माहिष्मती से त्रिपुरी में स्थापित की। उन्होंने मण्डला से तेवर में हटाई होगी न कि महेश्वर से तेवर में।[4] मण्डला जिला सागौन और साल के जंगलों से हमेषा हरा-भरा रहता है। यहाँ 60 प्रतिशत गोंड़ जनजाति निवास करती हैं। मण्डला जिला गोंड़ वंश की राजधानी रहा है। मण्डला जिला अपनी समृद्ध सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासत के लिए जाना जाता है। मण्डला में सर्वेक्षण से प्रागैतिहासिक काल से लेकर मध्यकाल तक के पुरावशेष मिलते हैं। यहाँ प्राचीन मूर्तियाँ, मन्दिर एवं किले के अवशेष प्राप्त होते हैं।

किसी जमाने में भारत का दक्षिणी भाग अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया से भूमि में संलग्न था। आज जहां हिन्द महासागर लहरा रहा है, वहां किसी जमाने में भूमि थी। दक्षिण अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया के आदिवासियो से और मण्डला जिले के गोंड़, बैगा जनजाति आदि से रक्त, साम्य शरीर, गठन आदि बहुत सी बातें मिलती है। ऑस्ट्रेलिया के आदिवासियों को माओरि कहते हैं। दक्षिण अफ्रीका के सोमली लैण्ड में रावण के नाम सुमाली नामक राजा का राज्य रहा होगा। ऑस्ट्रिया के एडुअर्ड सुएस के अनुसार गोंडवाना क्षेत्र का अस्तित्व आज से 35 करोड़ वर्ष पूर्व भी था, अर्थात नर्मदा नदी की उम्र 35 करोड़ वर्ष से भी अधिक है। 35 करोड़ में न जाने कितने प्रकार के प्रलय हुए होंगे, फिर भी शैलों की स्थिति और नर्मदा नदी की धारा कायम है। यद्यपि गोंडवाना क्षेत्र में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। गोंडवाना के जिस क्षेत्र में आज मण्डला जिला है उस क्षेत्र में अनादिकाल से आज तक कई बेर ज्वालामुखी हुए होंगे। उनके कुछ प्रमाण कहीं-कहीं मिलते हैं। जैसे शहपुरा से आठ मील दूर में रायपुरा गांव के नाला में जले हुए कोयले के साथ में समुन्द्र की सीपों के जले हुए टुकड़े और पत्थर के दक्षिणवर्ती शंखों जीवाष्म मिले हैं। मण्डला के रामनगर के पास काला पहाड़, मण्डला से 13 मील की दूरी पर गर्म पानी का कुण्ड, उसमें गंधक की सुगंध आदि प्रमाण ज्वालामुखी को सिद्ध करते हैं।[5] मण्डला जिले के घुघुवा (वर्तमान डिंडोरी जिला) में अभिनव महाकल्पयुगीन पादपाष्मों का विशाल भंडार के अवषेश देखने को मिलता है। जिसका अध्ययन बीरबल साहनी रिसर्च इंस्टीट्यूट लखनऊ द्वारा किया गया है। पाद जीवाश्मों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय जीवाश्म उद्यान घुघुवा में स्थापित है। यहां से आँवला, बेल कसई, खेर, हल्दू, अशोक, जामुन एवं पाइन आदि के जीवाश्म मिलते हैं। अभिनव महाकल्पयुगीन के अवशेष लगभग 18 करोड़ वर्ष से 6 करोड़ वर्ष प्राचीन बताया गया हैं।[6]

नर्मदा घाटी के अन्वेषण के दौरान, श्री डी. सेन और शोध छात्रों के एक दल ने नर्मदा की एक सहायक नदी बंजर पर मण्डला शहर से 14 किलोमीटर दक्षिण में बम्हनी में एक समृद्ध पाषाण युगीन पुरास्थल की खोज की। नदी के खण्डों में असंगठित बजरी से क्रिप्टो-क्रिस्टलीय कोलाइडल सिलिका पर एक उच्चपुरापाषाण कालीन परतदार ब्लेड उद्योग का पता चला, जिसमें प्वॉइंट और ब्यूरिन के अलावा खुरचनी प्रमुख उपकरण थी। इस उद्योग के साथ-साथ ऊपरी मिट्टी में भी कुछ सूक्ष्मपाषाण भी मिले थे।[7] सन् 1961-62 में डेक्कन कॉलेज पोस्ट-ग्रेजुएट एण्ड रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना के श्री एस. जी. सुपेकर ने अमरकंटक और मण्डला के बीच ऊपरी नर्मदा क्षेत्र का सर्वेक्षण किया और डिण्डौरी से 8 किलोमीटर के दायरे में मध्यपाषाण काल के लगभग बारह स्थलों की खोज की, जिनमें पाँच कारखाने थे। इन औजारों में खुरचनी, नुकीली चीजें, ब्लेड, कोर आदि शामिल थे, और कच्चा माल मुख्य रूप से चर्ट था। इनमें से अधिकांश नर्मदा के दोनों किनारों पर 3 से 5 किलोमीटर के दायरे में खुले खेतों से एकत्र किए गए थे। ये औजार कहीं भी स्तरीकृत नदी जमाव में नहीं पाए गए। डिण्डौरी और डिण्डौरी से 8 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व में निगवानीगढ़-पहाड़ से भी जीवाश्म लकड़ी के कुछ नमूने पाए गए।[8] सन् 1965 में डॉ. एच0 डी0 सांकलिया को मण्डला के हृदयनगर से प्रस्तर कालीन मानव के औजार प्राप्त किए थे। जिसकी प्राचीनता 25000 वर्ष पूर्व बतलाया है अर्थात मध्यपुरापाषाण कालीन उपकरण रहे होंगे।[9] भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के अधिकारियों द्वारा सन् 1973-74 में निवास तहसील में छोटी महानदी तथा बुढनेर नदी के कछारों में प्रागैतिहासिक काल के प्रमाण प्राप्त हुआ था। सन् 1976 में डॉ. एच0 डी0 सांकलिया द्वारा पुनः सर्वेक्षण में पाषाण कालीन उपकरण मिला था।[10] सन् 1980-81 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के वी. डी. मिश्रा और बी. बी. मिश्रा तथा अमेरिका के बर्कले स्थित कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के जे. डी. क्लार्क ने कान्हा के प्रसिद्ध वन्यजीव अभयारण्य की यात्रा के दौरान केसली और मुंडी-दादर का अन्वेषण किया। केसली में मध्यपुरापाषाण काल के औजार मिले हैं जिनमें खुरचनी, ब्लेड, नुकीली वस्तुएँ, छेदक, कोर और परत शामिल हैं, जबकि मुंडी-दादर के पुरापाषाण अवशेषों में मध्यपाषाण काल के अवशेष पाए गए हैं जिनमें मुख्यतः चाल्सेडनी पर बने ब्लेड, खुरचनी, नुकीली वस्तुएँ और चंद्राकार आकृतियाँ शामिल हैं।[11] सन् 1984-85 में के.के. मार्टिन के निर्देषन में विवके दत्त झा, डॉ. हरिसिंह गौड़ विश्वविद्यालय, सागर ने मवई सें मौर्य काल की पक्की ईंटों वाले एक स्तूप के अवशेषों की खोज थी। हृदयनगर, देवरी, कूम्हा छिवलिया, पाठा, नारायणगंज और सेलवाड़ा में मध्यकालीन मूर्तिकला और बुढ़नेर के तट पर रामनगर से लगभग 20 किमी दूर सेलवाड़ा में सूर्य की प्रतिमा मिला था।[12] सन् 1998

ई. में डेक्कन कॉलेज के डॉ. जी. एल. बादाम एवं इंदिरा गांधी मानव संग्रहालय के श्री डी. के. जैन के मार्गदर्षन में अमरकंटक से बरगी नगर तक के संपूर्ण नर्मदा कछार का सर्वेक्षण 20 सदस्यीय दल ने किया। सर्वेक्षण से हदवानी विकासखण्ड के किकराकुण्ड के जलप्रपात से लगभग 200 फुट की दूरी पर प्रागैतिहासिक काल के मानव आवास स्थल के प्रमाण मिले थे। इस पुरास्थल से मध्यपुरापाषाण, उच्चपुरापाषाण एवं मध्यपाषाण काल के उपकरण अधिक मात्रा में प्राप्त हुए थे।[13] मण्डला जिले के घुघरी विकासखण्ड में ग्राम सलवार मार्ग पर 2 किलोमीटर की दूरी पर दायीं ओर जंगल के बीच ग्राम बिजौरा स्थित है इस ग्राम में पहाड़ की तलहटी से एक नाला बहता हुआ बुढ़नेर नदी में समाहित होता है। यह नाला पाटन पहाड़ की तलहटी से निकलता है। पाटन की पहाड़ी पर महर्षि जमदग्नि ऋषि के पुत्र परशुराम जी का स्थान है। एक छोटा सा मंदिर है तथा मंदिर के बाजू में तालाब है। इस नाले को परशुरामी गंगा भी कहते हैं। नाले के भूमितल से लगभग 60 फुट की गहराई पर नाले के अन्दर एक लगभग 200 फीट चौड़ी एवं 10 फीट ऊंची गहरी कन्दरा है, जिसे आदिमानव के आवासीय स्थल के रूप में पहचान की गई है। कन्दरा वन्य पशुओं का आवास स्थल भी हो सकता है। भूमितल से मध्यपुरापाषाण काल के अस्त्र-शस्त्र बनाने योग्य प्रस्तरों का विशाल भूखण्ड है। मैदान के चारों तरफ सतपुड़ा पर्वत की विशाल चोटियां साल, सरई और सागौन के वृक्षों के आच्छादित हैं।[14]

मण्डला के सतपुड़ा पहाड़ियों में स्थित खैरी ग्राम के पास सिद्ध टेकरी नाम का पहाड है, जो राष्ट्रीय राजमार्ग 30 के उत्तर दिशा से सटा हुआ है। सिद्ध टेकरी से पष्चिम-दक्षिण में लगभग 400 मी0 दूर एक बड़ा तालाब है, इसका उल्लेख करते हुए रायबहादुर डॉ. हीरालाल ने मण्डला मयूख में लिखा है कि तालाब में थाली लोटा उतराया करते थे। राहगीर उनसे अपनी रोटी बनाकर फिर उसी में डाल देते थे। एक राहगीर उन बर्तनों से पका खाना खाकर बर्तनों को अपनी गठरी में बांधकर चलता बना, परन्तु अचानक उसका सिर घूमने लगा और तालाब को लौटे बिना न रहा गया। पहुंचते ही उसने पानी में बर्तन फेंक

सिद्ध टेकरी पुरास्थल का दृश्य

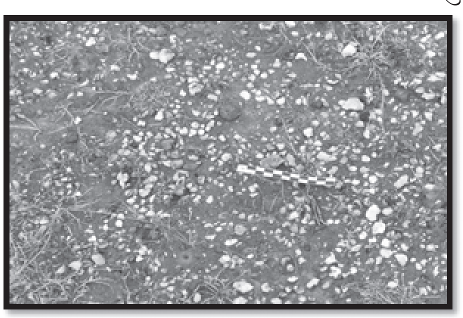

सिद्ध टेकरी पुरास्थल से प्राप्त उपकरण एवं तालाब का दृश्य

दिए स्वयं भी तालाब में कूद पड़ा और डूबकर मर गया। तब से बर्तनों का उतरना बन्द हो गया।[15] सिद्ध टेकरी से प्रागैतिहासिक काल के अवशेष मिले हैं। यह पुरास्थल मण्डला मुख्यालय से उत्तर-पूर्व में लगभग 5 किमी0, मण्डला-डिण्डौरी राज्यमार्ग से 100 मी0 उत्तर, रेलवे स्टेशन से लगभग 10 किमी0 उत्तर-पूर्व एवं नर्मदा नदी से लगभग 2 किमी0 उत्तर में स्थित है। सर्वेक्षण से मध्यपुरापाषाण एवं उच्चपुरापाषाण काल के उपकरण प्राप्त हुए हैं। जिसमें ब्लेड, खुरचनी, परत, कोर, नुकीले उपकरण मिले हैं तथा कच्चे माल (Raw Material) मुख्य रूप से चाल्सेडनी एवं चर्ट का प्रमाण मिलता है। पुरास्थल को देखकर लगता है कि यहां कारखाना (Factory Site) रहा होगा।

निष्कर्ष (Conclusion)

मण्डला जिले में पत्थरों और सूक्ष्म पत्थरों के उत्पादन में आधुनिक सामग्रियों का उपयोग पाषाण काल की परम्परा की निरंतरता का प्रमाण मिलते हैं, जो इस विशय पर पुरातात्विक शोध करने की आवश्यकता हैं। मण्डला जिले से मध्यपुरापाषाण, उच्चपुरापाषाण एवं मध्यपाषाण काल के उपकरण अधिक मात्रा में मिलते हैं। यह आश्चर्यजनक बात है कि जिले के किसी भी जनजाति को पाषाण कालीन तकनीक के बारे में कुछ भी पता नही है। यह विशय पुरातत्वविदों की रुचि को बढ़ा सकता है और भारत के जटिल सांस्कृतिक इतिहास के बारे में ज्ञान का योगदान दे सकता हैं। हालाँकि, पाषाणकाल की तकनीक की निरंतरता की कल्पना अभी भी की जा सकती है, बिना किसी अन्य उन्नत समूहों का ध्यान आकर्षित किए, क्योंकि जिले के आदिवासी लोग अभी भी आदिम अग्नि-निर्माण तकनीक का उपयोग कर रहे हैं, बिना किसी का ध्यान आकर्षित किए। इस प्रकार कहा जा सकता है कि मण्डला जिले में प्रागैतिहासिक कालीन विज्ञान एवं कला का उदय परिलक्षित होता है।

सन्दर्भ (References)

1. रूडमन, एफ0 आर0 आर0, सेन्ट्रल प्राव्हिन्सेस डिस्ट्रिक्ट गजेटियर मण्डला सेन्ट्रल, प्रिन्टेड एट दि टाइम प्रेस, बाम्बे, 1912, पृष्ठ सं. 1
2. रायबहादुर, हीरालाल, मध्य प्रदेष के प्रथम हिन्दी गजेटियर्स, इन्टेक मध्य प्रदेष, जबलपुर, पुर्नमुद्रण 2014, पृष्ठ सं. 266
3. अग्रवाल, रामभरोसे : गोड़ जाति का सामाजिक अध्ययन, गोंडी पब्लिक ट्रस्ट, मण्डला, 2016, पृष्ठ सं. 281
4. कनिंघम, अलेक्जेन्टर : एंषियन जियॉग्राफी ऑफ इण्डिया, ट्रबनेफ एंड कम्पनी पैटर्नोस्टर रॉ, लन्दन, 1871, पृष्ठ सं. 488
5. अग्रवाल, रामभरोस : गोड़ जाति का सामाजिक अध्ययन, गोंडी पब्लिक ट्रस्ट, मण्डला, 2016, पृष्ठ सं. 277
6. ज्योतिशी, नरेश : मण्डला एवं डिण्डौरी जिला का पुरातत्व, विद्या देवी प्रकाषन, मण्डला, 2006, पृष्ठ सं. 17-19
7. इण्डियन आर्कियोलॉजी 1960-61 ए रिव्यू, द डायरेक्टर जनरल आर्कियोलॉजी सर्वे ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, पुर्नमुद्रण 1996, पृष्ठ सं. 60
8. इण्डियन आर्कियोलॉजी 1961-62 ए रिव्यू, 1964, पृष्ठ सं. 22
9. अग्रवाल, रामभरोस : पूर्वोक्त, पृष्ठ सं. 586
10. झा, विवेक दत्त, प्राच्य प्रतिभा, वॉल्यूम 11, नं. 1-2, 1983, पृष्ठ सं. 51
11. इण्डियन आर्कियोलॉजी 1980-81 ए रिव्यू, 1983, पृष्ठ सं. 33
12. इण्डियन आर्कियोलॉजी 1984-85 ए रिव्यू, 1987, पृष्ठ सं. 46
13. अग्रवाल, गिरिजाशंकर, आदिवासी जिला मण्डला, गोंड़ी पब्लिक ट्रस्ट, मण्डला, 2016, पृष्ठ सं. 3
14. अग्रवाल, गिरिजाशंकर, हमारी विरासत-जिला मण्डला, इन्टेक भारतीय सांस्कृतिक निधि अध्याय, मण्डला, 2014, पृष्ठ सं. 143
15. रायबहादुर, हीरालाल, पूर्वोक्त, पृष्ठ सं. 294

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

EMPLOYER-SPONSORED SKILL DEVELOPMENT AND WORKFORCE OUTCOMES IN INDIAN PUBLIC SECTOR ENTERPRISES: A CRITICAL REVIEW WITH SPECIAL REFERENCE TO NATIONAL FERTILISERS LIMITED

Radha
Research Scholar
Department of Management,
Shri Khushal Das University, Hanumangarh

Prof.(Dr.) Sandeep Shandilya
Research Supervisor

Abstract

The Indian energy sector is undergoing rapid transformation due to technological advancements, the push for sustainable practices, reforms in government regulations, and increasing global competition. This creates a strong need for skilled workers who can adapt, especially in public sector enterprises (PSEs). These companies operate in the fields that require heavy investment and follow strict rules. To address these challenges, PSEs are turning to employer-sponsored training and skill-development programs. These initiatives aim to improve worker productivity, reduce turnover, and enhance overall team performance.

This review paper critically synthesises theoretical and empirical studies on employer-sponsored training and its impact on workforce outcomes. It focuses on Indian PSEs in the energy sector, with a special emphasis on National Fertilisers Limited (NFL). The paper draws on two main theories: Human Capital Theory (HCT) and Social Exchange Theory (SET). It explores the types of training programs, how they are delivered, and their impact on productivity, employee commitment, and retention. The unique features of PSEs, such as fixed employment rules, government oversight, and limited managerial freedom, play a big role in shaping these skill-development/training interventions and their success.

A review of extant studies shows that employer-sponsored training often leads to positive results for workforce. However, its success depends on whether it matches job needs, engages workers, and aligns with the company goals. The review points out major gaps in research specific to this sector and PSEs, including the evaluations of training effectiveness and employee preferences. The paper ends with suggestions for future studies to build stronger, evidence-based human resource practices in Indian public sector energy companies.

Keywords: Employer-Sponsored Training, Human Capital, Skill Development, Workforce Outcomes, Public Sector Enterprises, Energy Sector, National Fertilisers Limited.

1. Introduction

The global energy sector is transforming rapidly, both structurally and technologically. Factors like automation, digital tools, environmental laws, and the shift to low-carbon energy are reshaping jobs in power-hungry sectors, increasing the demand for highly skilled, adaptable, and continuously trained workforces (OECD, 2012; ILO, 2015). Human capital has emerged as a critical strategic resource, particularly in capital-intensive and high-risk sectors such fertilizer production and oil refining, where operational efficiency, safety compliance, and technological competence are essential for organisational performance.

In this context, employer-sponsored skill development initiatives have risen as a core human resource management strategy. These programs include formal training workshops, on-the-job learning, digital and simulation-based training, safety and compliance modules, and leadership development interventions, all funded or supported by the employer. Human Capital Theory (HCT) views these as investments that boost company competitiveness by improving employees' abilities and skill levels (Becker, 1993; Wright & McMahan, 2011). Complementarily, Social Exchange Theory (SET) adds that such investments build trust, encouraging loyalty and lowering quit rates (Saks, 2019).

Indian PSEs in energy face distinct hurdles, like standardized salaries, bureaucracy, strong unions, and regulatory scrutiny, which limit managerial flexibility in hiring, career advancement, or rewards (Budhwar & Varma, 2011). As a result, employer-sponsored training becomes a vital non-financial tool to motivate, up-skill, and retain staff. National Fertilisers Limited (NFL), a leading public sector enterprise in fertilizer manufacturing, illustrates this. It handles chemical processes, high energy use, and environmental risks, demanding technical expertise, safety awareness, and environmental compliance.

Despite its growing role, research on employer-sponsored training is scattered. Many studies link it to workforce outcomes like better productivity, satisfaction, and retention, but most draw from Western or private-sector settings (Flaherty, 2007; Millns, 2022). There is limited research on Indian public sector energy enterprises, especially fertilizer manufacturing; with little attention on training-job fit, worker preferences, and public-sector barriers. This review synthesizes theory and evidence on training's role in outcomes, spotlighting NFL. It secures knowledge, highlights gaps, and proposes research paths for energy PSE human resources.

2. Theoretical Perspectives on Employer-Sponsored Skill Development

Strong theories explain why companies invest in employee skill-development and how it affects workforce outcomes. HCT and SET are central, illuminating links to productivity, loyalty, and retention in skill-demanding energy PSEs.

2.1 Human Capital Theory

HCT treats education, training and skill development as investments that raise individual and organizational output. Employer-sponsored training program enhances operational efficiency, innovation capability, and competitiveness. According to Becker (1993), such sessions build knowledge, skills, and abilities, yielding higher returns for both employees and employers. This positive association is reasserted by Cappelli (2015), Chhetri et al. (2018) in technology- intensive and capital-intensive operations. In energy, where errors risk finances, ecology, or safety, training in controls, maintenance,

safety, and digital tools is crucial for performance and risk reduction. HCT differentiates general training (portable skills) from firm-specific training (organisational-tailored competencies) (Becker, 1993). PSEs favour the latter due to unique tech and regulations, bolstering capabilities but potentially tying workers to the firm. Critics argue that HCT ignores context, motivation, or barriers like bureaucracy that reduce gains (Bryson et al., 2017). Thus, HCT pairs well with relational views.

2.2 Social Exchange Theory

SET sees workplace bonds between employees and organisations as reciprocal exchanges. Supportive acts like training create obligations for positive responses, such as discretionary effort and commitment (Cropanzano & Mitchell, 2005). Training signals care and support for growth, linking to higher job satisfaction, loyalty, and retention (Saks, 2019; Kosteas, 2023). In rigid PSEs, where financial perks are limited, training fills motivational gaps. It counters HCT's mobility risk by fostering loyalty if viewed as genuine investment (Flaherty, 2007). In stable energy PSEs, it strengthens psychological contracts, but relevance, fairness, and career ties are essential (Budhwar & Varma, 2011). Mismatched training erodes reciprocity.

2.3 Integrating Theoretical Perspectives

While HCT justifies efficiency-boosting effects of skill acquisition, SET explains attitudinal outcomes such as commitment and retention (Wright & McMahan, 2011). This holistic lens suits PSEs, balancing technical needs with employee engagement in regulated settings.

3. Employer-Sponsored Skill Development Practices in Indian Public Sector Energy Enterprises

Employer-sponsored training is a hallmark of Indian public sector enterprises, vital in energy subsectors like fertiliser production, petroleum refining, and power generation, in technologically complex, capital-intensive, and safety-critical environments, where continuous skill upgrading is essential to maintain operational reliability and regulatory compliance (ILO, 2015; OECD, 2012). Bureaucratic governance, standardised employment conditions, and strong regulatory oversight profoundly influence the design and delivery of training initiatives (Budhwar & Varma, 2011).

3.1 Nature and Scope of Skill Development in Public Sector Energy Enterprises

Skill development practices in Indian public sector energy organisations typically encompass a combination of technical, safety, managerial, and compliance-oriented training modules. Technical training focuses on plant operations, equipment maintenance, process optimisation, and automation systems (Snell & Morris, 2019). Safety training reduces workplace accidents, improves hazard awareness, and enhances overall operational efficiency in energy-intensive industries (ILO, 2015). Soft skills, including leadership training, communication skills, and supervisory capabilities address coordination, decision making, and human relations skills, in unionized environments (Budhwar & Varma, 2011). Sustainability training tackles emissions and efficiency amid regulations.

3.2 Institutional Context and Constraints

In Indian public sector enterprises, long-term employment relationships and job security enable bold investments, but rigid administrative procedures, fixed pay scales, and limited performance-linked incentives can reduce the motivational impact of training programs (Budhwar & Varma, 2011). When training content is closely aligned with job roles and operational challenges, employees are

more likely to apply acquired skills and exhibit higher engagement levels (Saks, 2019).

3.3 Skill Development Practices with Reference to National Fertilisers Limited

NFL, as a major public sector enterprise engaged in fertiliser manufacturing, provides a useful reference point for understanding employer-sponsored skill development within the Indian energy landscape. It provides technical training, safety management, and regulatory compliance via in-house training centres, structured induction programs, refresher courses, academic partnerships, and collaborations with technical institutions to develop workforce capabilities (OECD, 2012). Perceived as support, they enhance retention; otherwise, they maintain baselines. However, such initiatives struggle with training evaluation, employee engagement, and alignment with individual career aspirations (Budhwar & Varma, 2011).

3.4 Emerging Trends in Training Delivery

Digital and blended learning models, viz. e-learning, simulation-based training, and virtual safety drills are increasingly gaining traction for scalability and standardisation in PSE enterprises (Snell & Morris, 2019), though PSEs lag behind private-sector counterparts in fully leveraging digital training technologies due to barriers like inertia, budgetary constraints, and resistance to change (Cappelli, 2015).

4. Employer-Sponsored Training and Workforce Outcomes

Research robustly ties training to productivity, retention, motivation, and preferences, varying by design and context (Becker, 1993; Wright & McMahan, 2011). In high-stakes energy-sector organisations, the impacts amplify.

4.1 Employer-Sponsored Training and Employee Productivity

As per Becker (19930, employer-sponsored training enhances employees' technical competence, problem-solving abilities, and task efficiency, leading to improved organisational performance. Chhetri et al. (2018) found that organisations investing consistently in employer-sponsored training experienced measurable productivity gains, particularly in operational efficiency and service quality. As per Cappelli (2015), training in equipment handling, process optimisation, and safety procedures reduces downtime and operational errors. According to Bryson et al. (2013), productivity gains are contingent upon training relevance and employees' ability to apply acquired skills in their work environment.

4.2 Employer-Sponsored Training and Employee Retention

From a Social Exchange Theory perspective, training signals organisational commitment to employee development, which can foster loyalty and reduce voluntary turnover (Cropanzano & Mitchell, 2005). Employees who avail themselves of training opportunities exhibit longer organisational tenure and stronger attachment to their employers (Flaherty, 2007). Millns (2022) reported that employer-sponsored educational benefits were associated with higher retention rates and reduced recruitment costs, especially in skill-intensive occupations. Training can play an important role in reinforcing commitment and mitigating disengagement in PSE employees (Budhwar & Varma, 2011). Though, general training may increase employees' external employability, potentially offsetting retention benefits if organisational commitment is weak (Kosteas, 2023).

4.3 Training, Motivation, and Job Satisfaction

Training opportunities contribute to employees' sense of competence, professional growth, and perceived organisational support, all of which are positively associated with intrinsic motivation and job satisfaction (Saks, 2019). Training related to safety, compliance, and technological advancement can also enhance employees' confidence in performing complex tasks, thereby reducing work-related stress and improving overall job satisfaction (ILO, 2015). Barriers such as limited access to training, lack of transparency in selection processes, and misalignment between training content and job roles can diminish employees' positive responses (Sawyer, 2019; Budhwar & Varma, 2011).

4.4 Employee Preferences for Training Modalities

Studies suggest that employees do not perceive all training modalities as equally valuable; preferences vary based on career stage, job role, and learning orientation (Oliver, 2023). For instance, technical employees often prefer hands-on and on-the-job training, while managerial staff may value leadership development and formal education programs.

Oliver (2023) found that hybrid training models combining digital learning with experiential components generated higher levels of engagement and perceived usefulness among employees. Similarly, Sawyer (2019) reported that employees' willingness to participate in training increased when programs were flexible, clearly linked to career advancement, and supported by management. There is limited study on employee preference in public sector energy enterprises.

5. Skill Development in Energy and Fertiliser Industries: Safety, Sustainability, and Digital Transformation

Skill development in energy and fertiliser industries is shaped by the distinctive operational, environmental, and technological characteristics of these sectors. Complex chemical processes, high-pressure systems, and continuous plant operations, require environmental sustainability, efficiency and safety against operational hazards (ILO, 2015).

5.1 Environmental Sustainability and Regulatory Compliance Skills

In fertiliser production, employees must be trained in waste management, emission monitoring, and efficient resource utilisation to ensure environmental sustainability. Public concern and regulatory scrutiny compel investment in training related to environmental management, energy efficiency, and pollution control (OECD, 2012). Employer-sponsored environment-friendly training not only enhances regulatory compliance but also improves organisational reputation and operational efficiency (Maki et al., 2019; Cappelli, 2015).

5.2 Safety-Oriented Skill Development

Employees in energy and fertiliser enterprises are prone to operational hazards, and hence need to possess knowledge of risk assessment, emergency response, and compliance with safety protocols, besides technical knowledge. Structured safety training significantly reduces workplace accidents and improves employees' hazard recognition and response capabilities (ILO, 2015; Maki et al., 2019). Safety-related skill development contributes to lower absenteeism, reduced downtime, and enhanced operational reliability (Saks, 2019).

5.3 Digital Transformation and Technological Skill Requirements

Digital transformation reshapes skills in energy and fertiliser industries via automation, data analytics, process controls, and predictive maintenance, raising needs for digital literacy and advanced technical skills (Snell & Morris, 2019). Employer-sponsored programs now include digital platforms, simulations, and tech assessments to meet these. Research shows that digital training boosts adaptability and continuous learning in dynamic environments (Cappelli, 2015), with simulations effective for costly/unsafe energy trials. Public sector enterprises face hurdles like infrastructure limits, change resistance, and skill disparities (Budhwar & Varma, 2011). Success requires readiness, support, and alignment; integrated strategies blending digital with domain expertise are urged for outcomes.

5.4 Implications for Workforce Outcomes

Safety, sustainability, and digital training enhance technical competence, confidence, productivity, risk reduction, and satisfaction in energy/fertiliser sectors. Aligned programs signal commitment, aiding retention and engagement (Kosteas, 2023). Yet, empirical gaps persist in PSEs; few studies examine influence of these trainings on productivity and retention. Addressing this gap remains an important direction for future research.

6. Gaps in Existing Literature and Future Research Directions

Scholarship on employer-sponsored training reveals conceptual, contextual, and methodological gaps, especially in PSE energy/fertiliser firms. Addressing these gaps advances theory, practice, and policy in regulated industries.

6.1 Contextual and Sector-Specific Gaps

Research is biased to Western/private sectors with flexible markets and incentives (Cappelli, 2015; Millns, 2022), overlooking emerging PSEs' bureaucracy and oversight (Budhwar & Varma, 2011). In India, energy PSE studies are sparse, ignoring sector-specific tech/safety/environmental factors (OECD, 2012), limiting HRM applicability.

6.2 Limited Integration of Training Outcomes

Outcomes like productivity, retention, motivation, and job satisfaction as studied as isolated variables, not interrelated (Wright & McMahan, 2011). In energy sectors, training affects efficiency, safety compliance, employee engagement, and turnover intentions. Self-reported measures raise bias; objective metrics with subjective ones are needed (Bryson et al., 2013).

6.3 Underexplored Role of Employee Preferences

Preferences for training modalities are acknowledged but understudied in PSEs (Oliver, 2023). Alignment between employee preferences and training design boosts engagement and learning outcomes, but few studies explicitly investigate how such preferences influence productivity and retention (Sawyer, 2019). Furthermore, employee preferences may vary by demographics like age, job role, locality, educational background, and technological exposure, and these differences are not paid much attention to, thereby reducing the effectiveness of training programs. Preference-based skill-development and training frameworks could improve standardized programs in diverse Public Sector Energy Enterprises.

6.4 Methodological Limitations in Existing Studies

Cross-sectional surveys limit causality and long-term views; there are rare longitudinal studies on training interventions in PSEs (Saunders et al., 2019). Qualitative insights on training design, implementation challenges, and employee experiences are scarce; mixed-methods offer fuller understanding (Creswell & Creswell, 2018).

6.5 Directions for Future Research

Future research should prioritize sector/context studies in energy/fertiliser, including comparisons across enterprise types for institutional effects. Furthermore, scholars can develop integrated models linking training inputs to workforce outcomes like productivity, retention, motivation, and safety. Also, employee preferences can be included in evaluations. Moreover, longitudinal/mixed-methods can be employed for dynamics.

7. Conclusion

This review synthesizes literature on employer-sponsored skill-development/training and its implications for workforce outcomes in energy PSEs with particular reference to NFL, via HCT and SET. Training enhances productivity, retention, and engagement in complex, regulated settings (Becker, 1993; Wright & McMahan, 2011). Relevant, aligned initiatives yield positive outcomes; in energy/fertiliser industries, technical/safety/digital training ensures reliability and risk cuts (ILO, 2015; OECD, 2012). Benefits include satisfaction, motivation and commitment when seen as true investment (Saks, 2019; Kosteas, 2023).

The review also underscores important limitations viz., private/Western bias, isolated outcomes, ignored preferences/constraints/long-term effects (Budhwar & Varma, 2011; Saunders et al., 2019), which hinder context-specific HR strategies for PSEs.

Overall, the review affirms training's strategic importance, urging nuanced, sector-specific and methodologically robust research with integrated frameworks, perspectives, and designs for sustainable benefits, advancing PSE HRM scholarship and practice.

References

1. Becker, G. S. (1993). *Human Capital: A Theoretical and Empirical Analysis, with Special Reference to Education* (3rd ed.). University of Chicago Press. https://doi.org/10.7208/chicago/9780226041223.001.0001
2. Bryson, A., Forth, J., & Stokes, L. (2017). Does employees' subjective well-being affect workplace performance? *Human Resource Management Journal, 27*(4), 516–532. https://doi.org/10.1111/1748-8583.12147
3. Budhwar, P., & Varma, A. (2011). Emerging HR management trends in India and the way forward. *Organizational Dynamics, 40*(4), 317–325. https://doi.org/10.1016/j.orgdyn.2011.07.009
4. Cappelli, P. (2015). Skill gaps, skill shortages, and skill mismatches: Evidence for the US. *ILR Review, 68*(2), 251–290. https://doi.org/10.1177/0019793914564961
5. Chhetri, P., Gekara, V., Manzoni, A., & Montague, A. (2018). Productivity benefits of employer-sponsored training: A study of the Australia transport and logistics industry. *Education + Training, 60*(9), 1009–1025. https://doi.org/10.1108/ET-02-2017-0029
6. Creswell, J. W., & Creswell, J. D. (2018). *Research Design: Qualitative, Quantitative, and Mixed Methods Approaches* (5th ed.). Sage. https://edge.sagepub.com/creswellrd5e (Companion site with resources; full

book: https://us.sagepub.com/en-us/nam/research-design/book255675)

7. Cropanzano, R., & Mitchell, M. S. (2005). Social exchange theory: An interdisciplinary review. *Journal of Management, 31*(6), 874–900. https://doi.org/10.1177/0149206305279602
8. Flaherty, C. (2007). *The effect of employer-provided general training on turnover: Examination of tuition reimbursement programs* [Doctoral dissertation, Stanford University]. SIEPR. https://siepr.stanford.edu/publications/working-paper/effect-employer-provided-general-training-turnover-examination-tuition
9. ILO. (2015). *Global trends on occupational safety and health*. International Labour Organization. https://www.ilo.org/global/topics/safety-and-health-at-work/resources-library/publications/WCMS_452042/lang—en/index.htm
10. Kosteas, V. D. (2023). Job satisfaction and employer-sponsored training. *British Journal of Industrial Relations, 61*(4), 771–795. https://doi.org/10.1111/bjir.12741
11. Maki, A., McKinney, E., Vandenbergh, M. P., & Cohen, M. A. (2019). Employee energy benefits: What are they and what effects do they have on employees? *Energy Efficiency, 12*(6), 1423–1439. https://doi.org/10.1007/s12053-018-9721-x
12. Millns, M. J. (2022). *Measuring the influence of employer-sponsored tuition benefits on employee retention and tenure* [Doctoral dissertation, University of Denver]. ProQuest Dissertations Publishing. https://eric.ed.gov/?id=ED642945 (Open-access via ERIC; full text: https://files.eric.ed.gov/fulltext/ED642945.pdf)
13. OECD. (2012). *Skills for Competitiveness: A Synthesis Report*. OECD Publishing. https://doi.org/10.1787/5k98xwskmvr6-en
14. Oliver, S. M. (2023). *Employer-sponsored benefits are ready for a revolution: An exploration of employer-sponsored benefits programs compared to employee preferences* [Doctoral dissertation, Drexel University]. ProQuest. https://researchdiscovery.drexel.edu/esploro/outputs/doctoral/Employer-Sponsored-Benefits-are-Ready-for-a/991020340815504721
15. Saks, A. M. (2019). Antecedents and consequences of employee engagement revisited. *Journal of Organizational Effectiveness: People and Performance, 6*(1), 19–38. https://doi.org/10.1108/JOEPP-06-2018-0034
16. Saunders, M., Lewis, P., & Thornhill, A. (2019). *Research Methods for Business Students* (8th ed.). Pearson. https://www.pearson.com/uk/educator/higher-education/product/Saunders-Research-Methods-for-Business-Students-8th-Edition/9781292208787.html
17. Sawyer, J. (2019). *The impact of employee participation in employer-funded education and barriers to individual career plan growth* [Doctoral dissertation, Northcentral University]. ProQuest. https://www.proquest.com/docview/2314567890 (ProQuest access; abstract and preview available; full text via institutional login or purchase)
18. Snell, S. A., & Morris, S. S. (2019). Building dynamic capabilities around human resource management. *Human Resource Management Review, 29*(2), 101–116. https://doi.org/10.1016/j.hrmr.2018.10.001
19. Wright, P. M., & McMahan, G. C. (2011). Exploring human capital: Putting 'human' back into strategic human resource management. *Human Resource Management Journal, 21*(2), 93–104. https://doi.org/10.1111/j.1748-8583.2010.00165.x

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और हिंदी भाषा का भविष्य

सुनील
(प्राथमिक अध्यापक), राजकीय प्राथमिक पाठशाला,
मांडी-16299 पानीपत (हरियाणा)

वर्तमान दौर तकनीकी अभ्युदय का दौर है। इस समय दुनिया में तकनीकी विकास की अंधी प्रतिस्पर्धा चल रही है। तकनीकों की विविध प्रणालियाँ चर्चा का विषय बन चुकी हैं। उदाहरणार्थ-क्वांटम तकनीक, नैनों तकनीक, कृत्रिम बुद्धि (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस), इंटरनेट ऑफ थिंग्स। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस इन्हीं चर्चित तकनीकों में से एक महत्वपूर्ण तकनीक मानी जाती है। आज की दुनिया में प्रौद्योगिकी निरंतर विकास कर रही है। प्रौद्योगिकी विकास ने तकनीकी को नवीन आयाम प्रदान किये हैं। प्रौद्योगिक विकास में एआई यानी कृत्रिम बुद्धिमता का विशेष योगदान रहा है। एआई ने हमारे दैनिक जीवन को सरल बना दिया है, बल्कि यह शिक्षा, स्वास्थ्य, उद्योग, व्यापार और अन्य क्षेत्रों में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर रहा है। इस निबंध में हम आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के अर्थ, उपयोग, प्रभाव और हिंदी भाषा में इसके भविष्य व चुनौतियों पर विस्तृत चर्चा करेंगे।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस एक ऐसी तकनीक है, जो मशीनों को मानव की भांति सोचने, समझने और निर्णय लेने की क्षमता का विकास करती है। यह मशीन लर्निंग न्यूरल नेटवर्क, डीपलर्निंग, नेचुरल लैंग्वेज प्रासेसिंग और अन्य तकनीकों के द्वारा विकसित होती है। आसान शब्दों में, एआई एक ऐसी व्यवस्था है जो डेटा के आधार पर अधिगम करता है, समस्याओं का हल निकालता है और अपने अनुभवों में सुधार करता है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की अवधारण 1950 के दशक में आरम्भ हुई थी, जब एक ब्रिटिश गणितज्ञ और वैज्ञानिक एलन टयूरिंग ने प्रथमतः यह प्रश्न उठाया कि ''क्या मशीनें सोच सकती हैं? उन्होंने टयूरिंग टेस्ट किया, जो यह निश्चित करता है कि क्या कोई मशीन इंसानों की तरह सोच-विचार कर सकती है या नहीं। इसके बाद वर्ष 1956 में जॉन मैकार्थी ने ''आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस'' शब्द की परिभाषा दी। तब से, एआई ने दीर्घ सफर तय किया और आज प्रत्येक क्षेत्र में इसका उपयोग और प्रभाव देख रहे हैं।

आधुनिक समय में एआई का प्रयोग कई क्षेत्रों में किया जा रहा है, जिनमें से कुछ क्षेत्रों के उदाहरण निम्नलिखित हैं।

चैट जीपीटी, गूगूल जैमिनी, डीपसीक आदि- यह एक नवविकसित एवं उन्नत भाषाई मॉडल हैं, जो उपयोगकर्ताओं के प्रश्नों का जवाब या उत्तर देने, संवाद करने और लेख-लिखने में पारंगत है। यह मॉडल नैचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग (NLP) पर आधारित है। इसका उपयोग करना अत्यंत सरल है। वॉयस कमाण्ड देकर भी किसी भी गम्भीर विषय पर संवाद या लेख प्रस्तुत किया जा सकता है। कम समय में अधिक सामग्री उपलब्ध करवा कर समय और ऊर्जा दोनों की बचत करने में सहायक है।

गूगल असिस्टेंट, एलेक्सा और सिरी-ये वॉयस असिस्टेंट एआई का बेहतरीन उदाहरण हैं, जो मानव भाषा को समझकर त्वरित उत्तर प्रदान करते हैं।

रोबोटिक्स-एआई का प्रयोग रोबोट बनाने में किया जा रहा है। ये रोबोट किसी भी क्षेत्र जैसे शिक्षा, चिकित्सा आदि

में कार्य कर रहे हैं। भाषा शिक्षण में भी इनका अनुप्रयोग किया जा रहा है। मीको नाम की एक कम्पनी ने ऐसा रोबोट तैयार किया है जो 5-10 वर्ष की आयु वाले बच्चों को परिष्कृत घरेलू शिक्षा प्रदान करता है।

शिक्षा के क्षेत्र में-एआई का प्रयोग हिंदी भाषा अधिगम के लिए भी किया जा रहा है। हिंदी का प्रयोग लगभग दस राज्यों में अधिक होता है। अहिंदी भाषी राज्यों के लिए एआई किसी वरदान से कम नहीं है। कोई भी व्यक्ति हिंदी भाषा का ज्ञान प्राप्त करने के लिए गूगूल, चैट जीपीटी, डीपसीक जैसे एआई टूल को प्रयोग कर सकता है।

एआई और हिंदी शोध-किसी भी भाषा में शोध उस भाषा की उन्नति का परिचायक माना जाता है। हिंदी भाषा में नवीन विषयों को लेकर शोध-कार्य हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में शोध-कार्य के लिए शोध सामग्री की आवश्यकता पड़ती है। एआई शोध के लिए नवीन सामग्री उपलब्ध कराने में मार्गदर्शक की भूमिका में रहता है। भाषा में शोध एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। साहित्यिक चोरी भी शोध की गुणवत्ता पर प्रश्न-चिह्न लगाती है। विश्वविद्यालयों में शोध-कार्य की गुणवत्ता एवं सत्यता की परख हेतु एआई का प्रयोग किया जा रहा है।

भाषा अनुवाद- एआई ने अनुवाद जगत् में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिये हैं। एक भाषा के ग्रन्थों को दूसरी भाषा में अनूदित करने के लिए एआई की सहायता ली जा रही है। एआई के प्रयोग ने हिंदी अनुवाद को सरल एवं सटीक बना दिया है। एआई ने अनुवाद को सरल बनाने में अह्म योगदान दिया है। एआई आधारित टूल्स जैसे गूगल ट्रांसलेट और अन्य प्लेटफार्म हिंदी और अन्य भाषाओं के मध्य सेतू रूप में कार्य कर रहे हैं। नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग (NLP) का उपयोग करके, एआई हिंदी भाषा के टेक्सट को आसानी से समझ और प्रोसेस कर सकता है। एआई के प्रयोग से हिंदी भाषा में लेख, समाचार और अन्य कंटेंट स्वचालित रूप से जनरेट किए जा सकते हैं। इसके अनुप्रयोग से सामग्री निर्माण और लेखन गुणवत्ता में सुधार की आश की जा सकती है।

पत्रकारिता-आज सूचनाओं का अघोषित युद्ध चल रहा है। सूचनाएँ आर्थिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर रही हैं। पत्रकारिता में भी एआई का प्रयोग हो रहा है। ख़बरों को व्यवस्थित करने एवं प्रकाशन में एआई उपयोगी सिद्ध हो रहा है। न्यूज चैनलों एवं कार्टून निर्माण में एआई का प्रयोग क्रान्ति ला रहा है। हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में एआई एक वरदान साबित हुआ है। हिंदी भाषा में झूठी ख़बरों और गलत तथ्यों की पहचान एवं रोकथाम हेतु एआई का उपयोग किया जा रहा है। ई-कॉमर्स और डिजिटल भुगतान में हिंदी भाषी ग्राहकों के अनुभव व सुझाव हेतु ग्राहक सेवा केन्द्रों में एआई का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है।

सामाजिक मीडिया और मनोरंजन- यह क्षेत्र भी एआई से अछूता नहीं है। एआई हिंदी भाषा में विडियों,ऑडियों और टेक्सट कंटेंट को एक्यूरेट करने और सुझाव देने में सहायता प्रदान करता है। यह उपभोक्ताओं की पसंद को समझकर उनके लिए हिंदी में कंटेंट का सुझाव देता है। एआई और फेसबुक जैसे प्लेटफार्म पर अधिक मजबूती से हिंदी आगे बढ़ रही है। एआई की सहायता से हिंदी डबिंग और सबटाइटलिंग में भी सुधार नज़र आता है। मनोरंजन क्षेत्र में एआई की मदद से विभिन्न प्रकार के कार्टून ईजाद किये जा रहे हैं जो बच्चों के मनोरंजन के लिए आकर्षण के केन्द्र हैं।

दिव्यांग और हिंदी भाषा में एआई- हिंदी भाषा में एआई के प्रयोग से दिव्यांगजनों के जीवन में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन दिखलाई पड़ते हैं। हिंदी भाषा में एआई के एपलिकेशन जैसे वाइस कमांड और टेक्सट टू स्पीच तकनीक ने दृष्टिबाधित दिव्यांगजनों के लिए जानकारी सुलभ बनाने में अहम् भूमिका निर्वहन की है। इसके माध्यम से हिंदी में यूजर इंटरफेस का डिजाइन करके, कम पढ़े-लिखे लोगों के लिए भी तकनीकी को आसान बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

ग्राहक सेवा केन्द्र और हिंदी भाषा में एआई-भूमण्डलीकरण ने सम्पूर्ण विश्व को एक ग्लोबल गाँव बना दिया है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां हिंदी भाषी ग्राहकों के अनुभवों के रिकॉर्ड और सुझाव हेतु एआई जैसे टूल्स का प्रयोग कर रही हैं। किसान फसलों एवं कीटनाशकों सम्बंधी जानकारी के लिए ग्राहक सेवा केन्द्रों पर सम्पर्क कर जानकारी ग्रहण करता है। ग्राहक सेवा केन्द्रों पर प्रयोग होने वाले एआई टूल से वह फसल की स्थिति एवं बाज़ार की जानकारी प्राप्त करता है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां एआई के प्रयोग से डेटा का विश्लेषण कर भविष्य के लिए नितियाँ बनाती हैं। हिंदी भाषा के विज्ञापनों को आकर्षक

एवं प्रभावशाली बनाने के लिए एआई का सहारा लिया जा रहा है। ग्राहक सेवा को गुणवत्तापरक बनाने के लिए एआई आधारित चैटबॉटस और वर्चुअल असिस्टेंट का प्रयोग किया जा रहा है।

भारत में लगभग 50 करोड़ लोग हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिए भारत एक बाज़ार है। भारत की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा हिंदी भाषा को बोलता और समझता है। जिसके परिणामतः हिंदी भाषा में एआई जैसी नवीन तकनीकों का प्रयोग किया जा रहा है। बाज़ारवाद ने हिंदी भाषा में एआई जैसी तकनीकी प्रयोग मजबूर कर दिया है। एआई ने हिंदी भाषा को ग्लोबल भाषा के रूप में विकसित करने का श्रेय दिया जा सकता है। एआई और हिंदी भाषा का भविष्य एआई का प्रयोग हिंदी भाषाई लोगों के लिए वरदान साबित हो रहा है। तकनीकी के लाभ के साथ चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है।

ए.आई. और हिन्दी भाषा का भविष्य

ए.आई. का प्रयोग हिन्दी भाषायी लोगों के लिए एक वरदान साबित हो रहा है। तकनीकी के लाभ के साथ चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है।

भाषा की जटिलता-जिस भाषा में अक्षरों की संख्या जितनी कम होगी, तकनीकी स्तर पर उतनी अधिक सफल रहेगी। हिंदी भाषा की जटिलता एआई के लिए चुनौतीपूर्ण हो सकती है, जिससे एआई मॉडल को प्रशिक्षित करने में कठिनाई आ सकती है। एआई मॉडल को हिंदी भाषा की जटिलता को समझने और उसके अनुरूप काम करने की आवश्यकता होती है।

डेटा की कमी-डेटा एआई मॉडल की आत्मा मानी जाती है। हिंदी भाषा में एआई मॉडल की सफलता डेटा आधारित है। इसकी भूमिका मॉडल को प्रशिक्षित करने में है। एआई मॉडल के प्रशिक्षण में उच्च गुणवत्ता वाले डेटा की आवश्यकता होती है। हिंदी भाषा में यह डेटा उच्च गुणवत्ता का नहीं है।

सटीकता की आवश्यकता-एआई मॉडल को हिंदी भाषा में सटीकता के साथ कार्य करने की जरुरत है जिससे हिंदी भाषा के एआई मॉडल की गुणवत्ता और स्टीकता पर लोगों की विश्वसनीयता बढ़ सके। सटीकता हेतु उच्च गुणवत्ता वाले डेटा और उन्नत एल्गोरिदम की आवश्यकता होती है।

नैतिकता की आवश्यकता-नैतिकता सामाजिक विश्वसनीयता का आधार है। एआई मॉडल को हिंदी भाषा में नैतिकता के साथ कार्य करने की आवश्यकता है जिससे लोगों के अधिकारों का सम्मान हो सके। एआई मॉडल को नैतिकता के साथ काम करने के लिए उच्च नैतिक मानकों और पारदर्शिता की आवश्यकता होती है।

भाषाई संरक्षण-एआई के बढ़ते प्रयोग के कारण भाषाई संरक्षण अतिमहत्वपूर्ण है। हिंदी का प्रचार-प्रसार व्यापक स्तर पर होना चाहिए।

तकनीकी प्रशिक्षण-किसी भी तकनीकी आविष्कार के लाभ हेतु उसका प्रशिक्षण अनिवार्य है। प्रशिक्षण के अभाव में तकनीक के आयामों को समझना कठिन कार्य है। यदि लोगों को एआई के प्रयोग का प्रशिक्षण नहीं दिया गया तो जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा इसके लाभ से वंचित रह जाएगा। हिंदी भाषा में एआई के प्रयोग को सफल बनाने के लिए उचित तकनीकी प्रशिक्षण की शर्त अनिवार्य है। तकनीकी प्रशिक्षण हिंदी को ग्लोबल भाषा के रूप में प्रतिष्ठित कर देगा।

तकनीकी एवं बुनियादी ढाँचा-भारत जैसे विकासशील देशों में तकनीकी एवं बुनियादी ढ़ाँचा कमजोर नज़र आता है फिर भी प्रौद्योगिकी विकास ने बुनियादी ढ़ाँचे को मजबूत करने का कार्य किया है। भारत में 5जी जैसी इंटरनेट सेवाएं हाल ही में प्राप्त हो पाई हैं जबकि विदेशों में 7जी या 8जी लॉँच हो चुकी है। एआई मॉडल के लिए उच्च गति वाले इंटरनेट और शक्तिशाली कम्पयूटिंग संसाधनों की आवश्यकता होती है।

नियमन और नीतियां-हिंदी भाषा में नियमन और नीतियों का होना अनिवार्य है ताकि इसके उपयोग को व्यवस्थित एवं नियंत्रित किया जा सके। इससे दुरुपयोग होने की कम संभावना रहती है। नियमन और नितियों के अभाव में अपराध होने की आशंका बनी रहती है।

गोपनीयता पर खतरा-एआई में डेटा का प्रयोग और विश्लेषण बड़े पैमाने पर किया जाता है,जिसे व्यक्तिगत गोपनीयता को खतरा हो सकता है। कम्पंनियाँ और सरकारें उपयोगकर्ताओं की ऑनलाइन गतिविधियों को ट्रेक रखती है। एआई के माध्यम से उनकी रूचियों, व्यवहार और निजी जानकारी का विश्लेषण करती हैं। कई बार डेटा बिना समहति के एकत्र कर लिया जाता है और गलत हाथों में जाने पर साइबर सुरक्षा को खतरा हो सकता है।

निष्कर्ष : एआई और हिंदी भाषा का संबंध मात्र तकनीक या संवाद से नहीं,अपितु यह सांस्कृतिक एवं भावनात्मक पहचान का भी विषय है। एआई के माध्यम से हिंदी को एक नई ऊँचाई मिल सकती है,बशर्ते हम इसे केवल तकनीकी नवाचार के रूप में न देखकर, भाषा के संवर्धन के उपकरण के रूप में प्रयोग करें। आज आवश्यकता है कि हिंदी भाषी समाज,तकनीकी क्षेत्र के विशेषज्ञ और नीति निर्माता मिलकर ऐसी व्यवस्था बनाएं जहाँ एआई हिंदी को समृद्ध करें। हिंदी को ग्लोबल भाषा के रूप में विकसित करने के लिए एआई ही एकमात्र सहारा है। उपरोक्त चुनौतियों के निराकरण से ही एआई हिंदी भाषा के भविष्य को स्वर्णिम बना सकता है।

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य का व्याकरण-विचार परक अध्ययन

कैलास बबन माने
शोध-छात्र, बलवंत कॉलेज, विटा
भ्रमणध्वनि-9096044023
Kailasmane12@gmail.com

डॉ. राजेंद्र पी. भोसले
शोध-निर्देशक
दूरभाष : 9657816775

सारांश

वि. संवत 1714 में जन्मे हिंदी साहित्य के श्रेष्ट कवि 'नृपशम्भु' जी का अविर्भाव, हिंदी साहित्य रीतिकाल के आरंभिक चरण में रहा दिखाई देता है। इन्होंने हिंदी में नयिकाभेद, नख-शिख, सातसतक जैसे उच्च कोटि के ग्रंथों का निर्माण कर हिंदी साहित्य को समृद्ध बनाया है। इनके हिंदी साहित्य का व्याकरण विचार की दृष्टि से अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, समास, कारक, प्रत्यय, संधि आदि की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध दिखाई देता है। उनके साहित्य को आधार बनाकर व्याकरण विचार से सम्बंधित उक्त बिन्दुओं को सप्रमाण स्पष्ट किया है।

अध्ययन उद्देश्य

'नृपशम्भु' हिंदी साहित्य के उपेक्षित किन्तु उच्चकोटि के कवि है। इन्होंने रीतिकाव्य धारा के दौरान अत्यंत सुंदर काव्य का सृजन किया है। हिंदी साहित्य के इतिहास लेखकों में से शिवसिंह सेंगर जी ने इनका उल्लेख अपने ग्रंथ में किया है किन्तु आ. रामचंद्र शुक्ल इन्हें अपने ग्रंथ में स्थान नहीं दे पाये है। उनके साहित्य की भाषा का अध्ययन करते हुए उसमें स्थित व्याकरणिक स्थिति पर प्रकाश डालना प्रधान उद्देश्य है।

कूट शब्द : व्यक्तिवाचक, तत्पुरुष, बहुब्रीहि, समनिधिकरण, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्वंद्व, संधि, विकार, बहुब्रीहि, धातु, समास, उपसर्ग आदि।

प्रस्तावना

इस दिव्य संस्कारी भोसले परिवार में 'शहाजी' राजे एवं 'जिजाऊ' के पौत्र तथा छत्रपति 'शिवाजी' एवं माता सईबाई के प्रथम पुत्ररत्न का जन्म ज्येष्ठ शु. 12 शके 1579 अर्थात 14 मई 1656 ई.स. (वि.सं.1714) में महाराष्ट्र के पूना के नजदिक स्थित पुरन्दर नामक किले पर हुआ।[1] युवराज का नामकरण 'संभाजी' हुआ प्यार से सभी बालक को 'शंभू' कहते थे। संभाजी महाराज को तीन बडी बहणो का स्नेह भी प्राप्त था, परंतु ५ सितम्बर १६५९ को तीन साल की आयु में ही उन्हें माता के स्नेह से वंचित होना पड़ा। किन्तु राजमाता जिजाऊ जी के परम स्नेह की वर्षा इन पर हमेशा बनी रही। अपने राजधर्म का पालन करते हुए, वीरता प्रदर्शन के साथ, धर्मनिष्ठ का आदर्श समाज के सम्मुख रखते हुए स्वराज्य के प्रिय एवं लाडले युवराज तथा स्वराज्य के द्वितीय छत्रपति महाराज संभाजी छत्रपति अर्थात शंभुराजे, प्रतिभा एवं तलवार के धनी, हिंदी के श्रेष्ठ कवि, नरवीर शंभुराजे का देहावसान महाराष्ट्र के पूना जिले में स्थित वाढू कोरेगाव नामक स्थान पर 14.01.1719 ई.स. में हुआ। इनके

साहित्य व्याकरण की दृष्टि से विवेचन प्रस्तुत करते समय व्याकरण विचार पर प्रकाश डालना आवश्यक हों जाता है।

व्याकरण किसी भी भाषा को शुद्ध रूप में लिखने और बोलने संबंधी नियमों का बोध करानेवाला शास्त्र है। यह भाषा के अध्ययन का महत्त्वपूर्ण अंग है। इसमें भाषा के सभी स्वरूपों का चार खंडों के अंतर्गत अध्ययन किया जाता है; जैसे वर्ण विचार के अंतर्गत ध्वनि और वर्ण, शब्द विचार के अंतर्गत शब्द के विविध पक्षों संबंधी नियमों, वाक्य विचार के अंतर्गत वाक्य संबंधी विभिन्न स्थितियों एवं छंद विचार में साहित्यिक रचनाओं के शिल्पगत पक्षों पर विचार किया गया है। उक्त अध्ययन के अंतर्गत व्याकरण विचार में संज्ञा, सर्वनाम, प्रत्यय, करक, समास, संधि पर विचार प्रकट करते हुए 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य को आधार बनाकर इन तत्वों का सूक्षमता से विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

संज्ञा

संज्ञा हिंदी व्याकरण का अति महत्वपूर्ण अध्याय है, क्योंकि हिंदी व्याकरण के लगभग प्रत्येक अध्याय में संज्ञा की भूमिका रहती है। पं.कामताप्रसाद गुरु संज्ञा को परिभाषित करते हुए लिखते है– "संज्ञा उस विकारी शब्द को कहते है जिससे प्रकृत किंवा कल्पित सृष्टि की किसी वस्तु का नाम सूचित हो।"[2] स्पष्ट रूप से कह सकते है कि किसी व्यक्ति, वस्तु, प्राणी, गुण, भाव या स्थान के नाम के घोतक शब्द संज्ञा होता है। संज्ञा के पांच भेद होते हैं- 1) व्यक्तिवाचक संज्ञा 2) जातिवाचक संज्ञा 3) भाववाचक संज्ञा 4) समूहवाचक संज्ञा 5) द्रव्यवाचक संज्ञा।

व्यक्तिवाचक संज्ञा

जिस शब्द से किसी एक वस्तु या व्यक्ति का बोध हों, उसे व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते है। किसी व्यक्ति विशेष, स्थान विशेष और किसी वस्तु विशेष के नाम के घोतक शब्द ही व्यक्तिवाचक संज्ञा कहे जाते हैं। उदाहरण के लिए शम्भु, शम्भुराज, नृपशम्भु, चूनरी, राधिका, कान्ह, सुजान, अंजन, नलिनी, मीन, गुपाल आदि जैसे शब्दों को ग्रहण किया जा सकता है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"सासु कह्यो दधि बेचनकोसुं। दई दुरवहाइ कहां तेधौं हा करी।।
मोहि मिलै 'नृप शंभु' गुपाल तमाल। तरै वह गैल जो सांकरो।।
मो तन ताकि बडी बडी आँखियानते। कांकरि लै फिर मोतन घाकरी।।
कांकरि औडि सर्द करते पैं। करेजे कहां धौं गर्द गडि कांकरी।।"[3]

सर्वनाम

कामताप्रसाद गुरु के मतानुसार- "सर्वनाम उस विकारी शब्द को कहते हैं जो पूर्वापर संबंध से किसी भी संज्ञा के बदले में आता है, जैसे, मैं (बोलनेवाला), तू (सुननेवाला), यह (निकट-वर्ती वस्तु), वह (दूरवर्ती वस्तु) इत्यादि।"[4] वाक्य में जिस शब्द का प्रयोग संज्ञा के बदले में होता है; सर्वनाम शब्द का अर्थ ही है– 'सब का नाम' के रूप में ग्रहण होता है। संज्ञा जहाँ केवल उसी नाम का बोध कराती है, जिसका वह नाम है, वहाँ सर्वनाम से केवल एक के ही नाम का नहीं, सबके नाम का बोध होता है। सर्वनाम भाषा को सहज, सुंदर, और सुविधाजनक बनाते हैं। अध्ययन की दृष्टि से सर्वनामों के 'छः' भेद किए जाते है। जैसे- 1) पुरूषवाचक (Personal Pronoun) - मैं, तू, वह, हम, यह; 2) निजवाचक (Reflexive Pronoun) - आपने, आप; 3) निश्चयवाचक (Demonstrative Pronoun) - यह, वह; 4) अनिश्चयवाचक (Indefinite Pronoun) - कोई, कुछ; 5) संबंधवाचक (Relative Pronoun) - जो, सो; 6) प्रश्नवाचक (Interrogative Pronoun) - कौन, क्या। यहाँ पर 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य में प्रयुक्त सर्वनाम और उसके रूपों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

उत्तम पुरुषवाचक सर्वनाम (First Person)- इसमें सर्वनाम व्यक्ति की ओर से होते हैं, जो बात कर रहा है। इसका प्रयोग वाक्य में उत्तम पुरुष सर्वनाम एकवचन के लिए 'मैं' तो उत्तम पुरुष सर्वनाम बहुवचन के लिए 'हम', 'मेरा'

और बहुवचन या आदरसूचक के लिए 'हमारा' का प्रयोग होता है। 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य का उत्तम पुरुषवाचक (बहुवचन) सर्वनाम से संबंधित एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"औरनसो वह लीजे धुवाय। हमें नृप शभ जू धोय न आवत।।
नूं कलयावति सांवरे रंगनि। सावरो रंग नही कल पावत।।"[5]

प्रत्यय

प्रत्यय शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है– प्रति + अय। प्रति का अर्थ होता है 'साथ में, बाद में' और अय का अर्थ होता है 'चलने वाला', अतः प्रत्यय का अर्थ होता है साथ में, बाद में चलने वाला। यह वे शब्द होते है जिन शब्दों का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता वे किसी शब्द के पीछे लगकर उसके अर्थ में परिवर्तन कर देते हैं।

कृत् प्रत्ययरू- धातुओं के साथ (बाद में) जुड़कर शब्द बनाने वाले प्रत्ययों को 'कृत्श कहा जाता है। इनसे बनने वाले शब्दों को श्कृदंतश कहते है। 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य का तत्सम प्रत्यय (कृत) से संबंधित एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

"दृग लाल बिसाल उनींदे कलू गरबीले लजीले से पेखहिंगे।
कब धों बिथुरी सुथरी अलकें झपकी पलकें अवरेखहिंगे।।
कबि संभु सुधारत भूषन भेष बिलोकनि यों जग लेखहिंगे।
अँगिराति उठी रतिमंदिर तें कबधों वह भाँवती देखहिंगे।।"[6]

कारक

कारक शब्द की व्युत्पत्ति 'कृ' धातु से श्अकश प्रत्यय जोड़कर हुई है, जिसका अर्थ है श्करने वालाश। किंतु पारिभाषिक अर्थों में श्वाक्य में शब्दों का पारस्परिक संबंध निरूपित करने वाला तत्त्व 'कारक' कहलाता है। कारक की परिभाषा करते हुए पं० कामता प्रसाद गुरु लिखते हैं, "संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उसका संबंध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ प्रकाशित होता है, उस रूप को कारक कहते हैं।"[7] हिंदी में कर्ता, कर्म, कारण, अधिकरण को प्रधान कारक कहा जाता है; कुलमिलाकर हिंदी में आठ कारक ग्रहण किए जाते है– कर्ता कारक, कर्म कारक, करण कारक, संप्रदान कारक, अपादान कारक, संबंध कारक, अधिकरण कारक और संबोधन कारक।

कर्ता कारक- कर्ता कारक को परिभाषित करते हुए डॉ, तेजपाल चौधरी लिखते है– "क्रिया से जिस वस्तु के विषय में विधान किया जाता है, उसे सूचित करनेवाले संज्ञा के रूप को 'कर्ता कारक' कहते है।"[8] इसका विभक्ति-चिह्न 'ने' है; किन्तु सकर्मक क्रियाओं के पूर्ण वर्त्तमान, सामान्य भूतकाल, पूर्ण भूतकाल को छोड़कर कर्ता में किसी विभक्ति या परसर्ग का प्रयोग नहीं होता। कर्ता कारक का प्रयोग दर्शानेवाले 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य में स्थित 'परसर्ग सहित और परसर्ग रहित उदाहरण दृष्टव्य है–

परसर्ग सहित- भूतकाल की सकर्मक क्रिया में कर्ता के साथ ने परसर्ग लगाया जाता है।

"शंभुजू जग ही उपदेस कै ढगहि नहीं।
चिन्हत दृग हि सो न चेत चित चहा भी।।"[9]

समास

'समास' परिभाषित करते हुए पं. कामताप्रसाद गुरु लिखते है– "दो या अधिक शब्दों का परस्पर संबंध बतानेवाले शब्दों अथवा प्रत्ययों का लोप होने पर, उन दो या अधिक शब्दों से जो एक स्वतंत्र शब्द बनता है, उस शब्द को सामासिक शब्द कहते हैं और उन दो या अधिक शब्दों का जो संयोग होता है, वह समास कहलाता है।"[10] संस्कृत, जर्मन तथा बहुत सी भारतीय भाषाओँ में समास का बहुत प्रयोग किया जाता है।

अव्ययीभाव समास

जिस समास में पहला शब्द प्रधान होता है और जो समूचा शब्द क्रिया-विशेषण अव्यय होता है, उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं। इसमें अव्यय पद का प्रारूप लिंग, वचन, कारक, में नहीं बदलता वो हमेशा एक जैसा स्थापित होता है। संस्कृत में उपसर्ग युक्त पद भी अव्ययीभाव समास ही मने जाते हैं। हिंदी में संस्कृत पद्धति के निरे हिंदी अव्ययीभाव समास बहुत ही कम पाए जाते है। हिंदी में हिंदी, उर्दू-अरबी-फारसी और मिश्रित इन तीन प्रकार के समास प्राप्त होते है। इनके काव्य में अलोकत, बिसराई, परिमान, अनुमान, बखानत, रूपावली, मदधार आदि शब्द प्राप्त होते है। अव्ययीभाव समास को प्रस्तुत करते 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य में स्थित उदाहरण दृष्टव्य है–

"रूप को कूप बखानत हैं कबि कोऊ तलाव सुधाही के संग को।
कोऊ तुफंग मो हारि कहै दहला कलपद्रुम भाखत अंग को।।
बारही बार बिचार कियो नृपसंभु न या मत मो मति संग को।
सीसी उरोजन तें मद्धार रूमावली नाभीन प्याला अनंग को।।"[11]

संधि

सन्धि (सम् + धा + कृतिन्) शब्द का अर्थ है 'मेल' या जोड़ से उत्पन्न 'विकार' के रूप में ग्रहण किया जाता है। संधि का विषय संस्कृत व्याकरण से संबंध रखता है। संस्कृत भाषा में पदसिद्धि, समास और वाक्यों में संधि का प्रयोजन पड़ता है, परंतु हिंदी में संधि के नियमों से मिले हुए संस्कृत के जो सामासिक शब्द आते हैं, केवल उन्हीं के संबंध से इस विषय के निरूपण की आवश्यकता होती है।

दीर्घ संधि

जब 'ह्रस्व' या 'दीर्घ स्वर' के बाद 'ह्रस्व' या 'दीर्घ स्वर' आएँ, तो दोनों के मेल से दीर्घ स्वर हो जाता है, इसे दीर्घ संधि यही दीर्घ संधि है। जब 'अ', 'आ' के साथ 'अ', 'आ' हो तो 'आ' बनता है, जब 'इ', 'ई' के साथ 'इ', 'ई' हो तो 'ई' बनता है, जब 'उ', 'ऊ' के साथ 'उ', 'ऊ' हो तो 'ऊ' बनता है। 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य से प्रस्तुत दीर्घ संधि का उदाहरण दृष्टव्य है–

"कान्ह हीं चेरी बनाय के संभु गई रषमान के भौन गोसाइन।
या सुनि के जुरि आईं सबै अरु डारी सहेलिम राधिका पाँइन।।
साय लिलार विभूति कही इमि हौं रचिचे कछु ऐसी उपाइन।
याहि इकंत लै मंत्र जपै यह होय सबै ब्रज की ठकुराइन।।"[12]

निष्कर्ष

व्याकरण विचार का अध्ययन करते हुए 'नृपशम्भु' जी के हिंदी काव्य में प्रकट संज्ञा, सर्वनाम, प्रत्यय, कारक, समास और संधि पर विचार रखते हुए उन्हें सप्रमाण प्रकट किया है। संज्ञा के अंतर्गत संज्ञा के पांच भेद व्यक्तिवाचक संज्ञा, जातिवाचक संज्ञा, भाववाचक संज्ञा, समूहवाचक संज्ञा और द्रव्यवाचक संज्ञा का अध्ययन किया है, साथ की उनके उदाहरण भी प्रकट किए है। जिससे कवि का संज्ञा शब्द संबंधी ज्ञान उल्लेखनीय सिद्ध होता है। इस प्रकरण के अंतर्गत सर्वनाम के पुरूषवाचक, निजवाचक, निश्चयवाचक, अनिश्चयवाचक, संबंधवाचक तथा प्रश्नवाचक आदि भेदों और उनके उपभेदों की सप्रमाण चर्चा की है। हिंदी प्रत्ययों पर विचार प्रकट करते हुए प्रत्ययों के तीन प्रमुख स्त्रोत संस्कृत से तत्सम प्रत्यय, प्राकृतों और अपभ्रंशों से गृहीत तद्भव प्रत्यय और विदेशी प्रत्यय को यथोचित उदाहरण के साथ प्रस्तुत किया है। कारक का अध्ययन करते समय हिंदी में स्थित आठ कारकों कर्ता कारक, कर्म कारक, करण कारक, संप्रदान कारक, अपादान कारक, संबंध कारक, अधिकरण

कारक और संबोधन कारक का 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य को आधार बनाकर अध्ययन एवं विश्लेषण किया है। यहाँ पर समास का अध्ययन किया है, जिसमें हिंदी में समास के 'अव्ययीभाव समास', तत्पुरुष समास', बहुब्रीहि समास', समनिधिकरण तत्पुरुष या 'कर्मधारय समास' और 'द्वंद्व समास' आदि भेदों और उनके उपभेदों को सोदाहरण विवेचित किया है। संधि का अध्ययन करते हुए हिंदी व्याकरण में उल्लेखित सन्धि के तीनों प्रकारों स्वर सन्धि, व्यञ्जन सन्धि और विसर्ग सन्धि का 'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य स्थित उदाहरणों के साथ प्रकटीकरण किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शिवचरित्र प्रदीप (मराठी) ; सं.- द.वि. आपटे व स.म. दिवेकर, भा.इ.सं. मंडळ पुरस्कृत ग्रंथमाला, क्र.4, 1925 पुणे – पृष्ठ क्र. 18,50,56.
2. हिंदी व्याकरण; कामताप्रसाद गुरु, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, 22 वां संस्करण पृ.- 56
3. छत्रपती शंभूराजे कृत नायिका-भेद, नखशिख व सातशतक एक सिंहावलोकन ; सं. व अनुवाद डॉ.प्रभाकर आ.ताकवले; जिजाई प्रकाशन, 584, नारायण पेठ, पुणे 30, तृतीय संस्करण 2019, पृ.- 34
4. हिंदी व्याकरण; कामताप्रसाद गुरु, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, 22 वां संस्करण पृ.- 56
5. छत्रपती शंभूराजे कृत नायिका-भेद, नखशिख व सातशतक एक सिंहावलोकन; सं. व अनुवाद डॉ.प्रभाकर आ.ताकवले; जिजाई प्रकाशन, 584, नारायण पेठ, पुणे 30, तृतीय संस्करण 2019, पृ.- 37
6. सुंदरी तिलक, भारतेंदु हरिचन्द्र संगृहीत, खण्डविलास प्रेस, बांकीपुर, 1992, पृ.- 256
7. हिंदी व्याकरण; कामताप्रसाद गुरु, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, 22 वां संस्करण पृ.- 66
8. हिंदी व्याकरण विमर्श,- तेजपाल चौधरी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण-2006, पृ.- 52)
9. छत्रपती शंभूराजे कृत नायिका-भेद, नखशिख व सातशतक एक सिंहावलोकन; सं. व अनुवाद डॉ.प्रभाकर आ.ताकवले; जिजाई प्रकाशन, 584, नारायण पेठ, पुणे 30, तृतीय संस्करण 2019, पृ.- 75
10. हिंदी व्याकरण; कामताप्रसाद गुरु, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, 22 वां संस्करण पृ.- 330
11. सुंदरी तिलक, भारतेंदु हरिचन्द्र संगृहीत, खण्डविलास प्रेस, बांकीपुर, 1992, पृ.- 251
12. वही, पृ.- 332-333

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Shiva's Communication Style and Its Relevance in Today's Scenario

Sangeeta Shrivastava
Bharti Vishwavidyaly
Durg, Chhattisgarh

Abstract

Shiva, one of the most revered deities in Hindu mythology, is not only known for his divine powers and complex persona but also for his distinctive and profound communication style. In the context of Amish Tripathi's *Shiva Trilogy*, Shiva is portrayed as a charismatic leader, a rational thinker, and a compassionate warrior whose communication is marked by clarity, empathy, assertiveness, and wisdom. This paper explores Shiva's communication style through the lens of modern communication theory and leadership discourse, analyzing its relevance in today's personal, professional, and socio-political spheres.

Shiva's communication is rooted in active listening, emotional intelligence, and moral conviction. He engages in dialogues that encourage dissent, introspection, and decision-making based on ethical reasoning rather than blind obedience. His transparency and ability to simplify complex philosophical ideas for his companions and followers resonate with the modern need for inclusive and transformational leadership. In an era marked by misinformation, polarization, and emotional disconnect, Shiva's style promotes values such as patience, reflection, and respectful disagreement—elements vital to productive conversations in today's digital and real-world interactions.

Additionally, Shiva's interactions reflect cross-cultural communication strengths, where he acknowledges and adapts to different belief systems and regional perspectives without compromising his core principles. This makes his character a model for global leaders and communicators who navigate diverse, multicultural environments. His use of symbolic gestures, storytelling, and silence as tools of expression are also examined for their psychological and rhetorical impact.

By analyzing Shiva's dialogues and actions within Tripathi's narrative, and correlating them with contemporary communication challenges, the abstract posits that the mythological figure of Shiva provides a timeless and practical framework for meaningful, ethical, and impactful communication in the 21st century.

Shiva's Communication Style and Its Relevance in Today's Scenario

Abstract : Shiva, one of the preeminent deities in Hinduism, embodies a unique communication style that is profoundly symbolic, direct, and transformational. His communication—whether through

silence (Mauna), dance (Tandava), or discourse (as seen in Shiva Purana)—holds profound lessons for contemporary society. In an era dominated by digital noise, rapid technological advancements, and socio-political complexities, Shiva's communication methods offer timeless wisdom for effective leadership, conflict resolution, and personal growth. This paper examines Shiva's communicative approach and its applicability in modern scenarios, supported by scholarly references and historical texts.

Introduction

Communication is the foundation of human interaction, shaping relationships, governance, and self-awareness. Shiva's communication transcends verbal speech, incorporating symbols, gestures, and silence to convey profound messages. His approach emphasizes clarity, detachment, and wisdom, which remain relevant in contemporary times. This study explores how Shiva's communication techniques can be applied in leadership, conflict resolution, and personal transformation in the modern world.

Shiva's Communication Styles

1. Silence (Mauna)as a Powerful Communicative Tool

Shiva is often depicted as silent, deep in meditation. Silence is a powerful means of communication that fosters introspection and clarity (Eliade, 1975).Silence is more than just the absence of words—it's a powerful way to connect with ourselves and others. It gives us the space to slow down, reflect, and truly process our thoughts without distractions. In conversations, silence allows for better listening, helping us pick up on emotions and meaning that words might not fully express. It also fosters mindfulness, bringing clarity and a sense of calm in a world that's often too loud and fast-paced. Sometimes, silence speaks louder than words, whether it's showing respect, giving someone time to open up, or simply allowing emotions to settle. When used intentionally, it can deepen understanding, strengthen relationships, and create space for more meaningful communication. One of the most well-known incidences demonstrating this is when Shiva remained silent even after Sati, his consort, immolated herself due to the insults from her father, Daksha. Instead of reacting immediately, Shiva withdrew into deep meditation. His silence signified immense pain but also a profound awareness that emotions should not dictate actions. When he finally acted, it was with calculated intensity, leading to the destruction of Daksha's arrogance and the subsequent rebirth of balance in the cosmos.

This episode highlights the importance of Mauna—not as a passive reaction but as an active, intentional decision. In the digital age, where constant communication often leads to information overload, practicing Mauna can enhance mindfulness and improve decision-making (Kumar, 2020). Leaders and professionals can benefit from Shiva's use of silence to promote thoughtfulness and reduce impulsive reactions.

In present world, Bill Gates has aptly practiced himself and emphasized the importance of silence and deep thinking in various interviews. One of his notable quotes related to silence and introspection is:

"I think silence is one of the greatest gifts that we have."

This reflects his belief in the power of quiet moments for deep thinking, creativity, and problem-

solving. Gates is known for taking "Think Weeks," where he isolates himself from distractions to read, reflect, and generate new ideas.

2. Symbolism and Non-Verbal Communication

Shiva's iconography—his third eye, trident, and crescent moon—carries rich symbolic meanings. The third eye signifies wisdom and insight, the trident represents control over past, present, and future, and the moon symbolizes mental balance (Flood, 1996). Modern corporate and political leaders can learn from this non-verbal communication approach to convey powerful messages effectively.

Several incidents from Shiva's life highlight his use of symbolism as a form of communication:

A] The Opening of the Third Eye:

When Shiva opened his third eye, he incinerated Kamadeva, the god of desire, to ashes. This act symbolized the power of detachment and the ability to transcend desires, teaching that inner wisdom must prevail over fleeting temptations.Nikola Tesla, the great inventor, hinted at a deeper level of perception beyond the five senses, saying:

"My brain is only a receiver. In the Universe, there is a core from which we obtain knowledge, strength, and inspiration."

Steve jobs, He believed in cutting out unnecessary desires to focus on innovation, often wearing the same black turtleneck daily to avoid trivial decisions and conserve mental energy for creative pursuits.

B] Drinking the Halahala Poison: During the churning of the ocean (Samudra Manthan), Shiva drank the deadly poison to save the world, holding it in his throat and turning it blue (Neelkanth). This act symbolized self-sacrifice, responsibility, and resilience—qualities essential for leaders and problem-solvers today.

In my opinion,

The President of Ukraine, Volodymyr Zelenskyy, could have fled when Russia invaded, but he chose to stay and lead his country, enduring immense stress and danger. By taking on the burden of war and resisting aggression, he displayed the same resilience and responsibility as Shiva holding the poison to protect the world.

C] The Crescent Moon on His Head: The moon represents time and cycles. By wearing it on his head, Shiva communicated his mastery over time, illustrating the importance of balance and control over changing circumstances.

These symbolic acts continue to serve as powerful lessons for individuals and leaders, emphasizing wisdom, responsibility, and adaptability in communication.

3. Destruction and Renewal: A Communication of Change.

Shiva's role as a destroyer in the cosmic cycle is a metaphor for transformation. His Tandava dance signifies the destruction of ignorance and ego, paving the way for renewal (Doniger, 1981). In today's world, industries and organizations can adopt this perspective to embrace change, innovation, and adaptability.

Several incidents from Shiva's life exemplify his embodiment of destruction and renewal:

A] The Destruction of Daksha: When Daksha insulted Sati and Shiva, he destroyed Daksha's

sacrifice. This destruction was not out of rage but was a necessary act to restore cosmic balance, demonstrating the role of destruction in paving the way for renewal and purification.

B] The Destruction of the Tripura Demons: The destruction of the three cities of Tripura, which were ruled by the demon brothers, is another incident where Shiva's destructive power leads to the renewal of justice and order. The act symbolizes the triumph of righteousness over evil.

C] Shiva's Tandava Dance: Shiva's Tandava dance signifies the eternal cycle of creation, preservation, and destruction. This dance is not a chaotic act but rather a controlled, purposeful expression of universal processes, teaching that destruction is part of a necessary cycle of transformation.

D] Shiva and the Demon Andhaka: Andhaka, a demon who was Shiva's son, was causing havoc and destruction. Despite his connection to Shiva, Andhaka's ego and evil led to his destruction by Shiva. This act again underscores that even within one's own realm, transformation (even through destruction) is necessary for balance and restoration.

E] Shiva and the Destruction of the Giantess: In one story, the giantess who was causing havoc in the heavens was confronted by Shiva. When no other solution was available, Shiva's act of destroying the demoness led to a restoration of balance in the universe, showing that at times, the destruction of apparent obstacles can lead to positive change.

These instances show how destruction, when applied with wisdom, leads to renewal and transformation, a lesson relevant to both personal growth and societal change.

The same belief of destruction and renewal has exactly been practiced by where,

Jeff Bezos has Revolutionized Retail With Amazon, Jeff Bezos transformed the way people shop, effectively ending the dominance of traditional retail giants. He embraced creative destruction by shifting commerce to e-commerce, making shopping more efficient and accessible worldwide. His constant reinvention of Amazon, from books to cloud computing (AWS), reflects Shiva's role in breaking old systems for progress.

Satya Nadella – Reinventing Microsoft

When Satya Nadella took over as CEO of Microsoft, the company was stagnating. He destroyed the outdated, rigid corporate culture and embraced cloud computing and AI, making Microsoft one of the most valuable companies in the world. His Tandava was a leadership shift—replacing ego and bureaucracy with a growth mindset and innovation.

4. Direct and Honest Communication

Unlike other deities who may use indirect means to communicate, Shiva is direct and to the point. In Shiva Purana, he provides clear guidance without ambiguity (Shastri, 2004). This style is highly effective in leadership and negotiations, where clarity and honesty are crucial.

Several incidents from Shiva's life demonstrate his directness and honesty:

A] Shiva and Parvati's Union: When Parvati sought Shiva's hand in marriage, he did not indulge in the conventional courtship rituals but instead plainly told her of his ascetic life. This direct communication highlighted his uncompromising nature and set the foundation for their authentic relationship.

B] The Story of the Poison: During the churning of the ocean (Samudra Manthan), Shiva was

offered the deadly poison (Halahala) to prevent it from harming the gods and demons. Instead of hesitating or hiding his discomfort, he directly consumed it, showing his willingness to confront challenges head-on with transparency and responsibility.

C] Shiva's Response to Daksha's Insult: After Daksha insulted his consort, Sati, Shiva did not resort to subtlety but responded with direct force, ultimately leading to Daksha's destruction.

This act was not motivated by emotional impulse but by the honest need to uphold justice and restore balance.

Direct and Honest Communication in Modern Leadership.

The leadership trait of direct and honest communication, as exemplified by Lord Shiva in the Shiva Purana, is being applied by several contemporary leaders across different fields to drive transformative change. Here are some notable examples:

Elon Musk (CEO of Tesla, SpaceX, etc.). Musk is known for his blunt, no-frills communication style, especially on platforms like X (formerly Twitter). Whether it's addressing company goals, layoffs, or failures, he rarely sugarcoats. This clarity has helped galvanize his teams around ambitious missions (like colonizing Mars), attract investors, and foster a loyal (and sometimes polarizing) following.

Acinda Ardern (Former Prime Minister of New Zealand)

During her tenure, Ardern was praised globally for her transparent, empathetic, and straightforward communication, particularly during crises like the Christchurch mosque attacks and COVID-19.Her leadership built public trust and demonstrated that directness doesn't have to come at the cost of compassion.

Simon Sinek (Leadership Author & Speaker).Through his talks and books ('Start With Why', 'Leaders Eat Last'), Sinek promotes the idea that great leaders communicate clearly about purpose and vision.He's sparked a movement within businesses to return to values-based, honest leadership, shifting corporate cultures from top-down command to servant leadership.

Satya Nadella (CEO of Microsoft). Nadella's leadership transformed Microsoft by encouraging open feedback and transparent communication. He emphasizes empathy paired with clarity. Microsoft's culture became more collaborative and innovative, leading to a massive resurgence in market value and public image.

Why It Matters Today

In an age of information overload and skepticism, **clarity and honesty** cut through the noise. Leaders who adopt this Shiva-like trait are able to:

- -Build trust quickly
- -Unify people toward a shared goal
- -Reduce confusion and fear in high-stakes environments. Relevance in Today's Scenario

1. **Leadership and Governance.**

   Modern leaders can incorporate Shiva's communication style by emphasizing wisdom, clarity, and strategic silence. Political and business leaders who practice thoughtful pauses and

non-verbal communication can foster trust and authority (Goleman, 2013).

Example: Leadership in International Diplomacy

Prime Minister, Modi ji often emphasizes silence and strategic pauses in his public speeches and interactions with foreign leaders, fostering an image of thoughtfulness and clarity. His leadership style resonates with the principles of Shiva's communication—particularly in the use of silence and symbolism to establish authority and trust.

Strategic Silence and Diplomacy: Modi's diplomatic engagements, especially with countries like the United States, China, and Russia, showcase a calculated use of silence. For instance, during the 2018 Doklam standoff between India and China, while there was significant media speculation and international tension, Modi refrained from making hasty public statements.

This silence in the face of adversity mirrored Shiva's approach of non-reaction until the right moment. His silence during this period conveyed a sense of calm and control, allowing the situation to resolve through diplomatic backchannels rather than impulsive reactions.

Symbolism in International Relations: Modi has also made use of powerful symbols in his diplomacy. An example is his repeated use of the Indian cultural heritage in his diplomatic visits. His visit to the United Arab Emirates (UAE) in 2015, where he was honored with the "Order of Zayed," is symbolic of India's growing global stature. Much like Shiva's trident, which represents control over the past, present, and future, Modi's use of symbolic gestures in foreign relations reinforces India's historical and strategic importance in international affairs.

Communication through Non-Verbal Means: Modi's body language and non-verbal communication are often cited as key tools in his diplomatic engagements. For example, during his address to the United Nations General Assembly, his calm and composed demeanor, coupled with his direct communication on issues like terrorism, environmental responsibility, and economic growth, solidified India's position as a responsible global power. This mirrors Shiva's directness in communication, where clarity and straightforwardness are used to build trust and authority.

By incorporating silence, symbolism, and directness in his diplomatic approach, Modi has navigated complex international relations, much like Shiva's method of leadership—through calculated, intentional communication that fosters clarity, trust, and renewal in international governance.These examples reflect how modern leaders can take lessons from Shiva's communication style to navigate challenges in international diplomacy and governance effectively.

2. Conflict Resolution

Shiva's approach to conflict resolution—balancing destruction and creation—offers insights into handling disputes constructively. His ability to listen deeply and respond decisively aligns with modern conflict management theories.

Example: India's Conflict Resolution Approach—Balancing Destruction and Creation

India's approach to conflict resolution, especially in dealing with longstanding issues such as the Kashmir conflict, reflects the balance of destruction and creation, much like Shiva's method of conflict resolution. Shiva's ability to destroy ignorance and ego to facilitate renewal can be seen as a metaphor for India's approach to resolving conflicts—sometimes requiring the destruction of old, entrenched systems to make way for the creation of new, more harmonious solutions.

Kashmir Conflict and Article 370 Revocation.

In August 2019, the Indian government, led by Prime Minister Narendra Modi, revoked Article 370 of the Indian Constitution, which granted special autonomy to the region of Jammu and Kashmir. This decision can be seen as an example of destruction in the context of conflict resolution—removing decades-old legal provisions that were seen by some as obstacles to full integration and development of the region.

However, much like Shiva's destructive role, the move was not just about elimination, but also about creating new possibilities. The revocation of Article 370 paved the way for **greater economic development, infrastructure growth, and improved governance** in the region, aiming to integrate Kashmir more fully into the nation's political and economic landscape. The creation of new opportunities, after the destruction of an outdated system, mirrors Shiva's cycle of destruction and renewal.

Shiva's Method of Deep Listening and Decisive Action.

Shiva's conflict resolution method also emphasizes deep listening and responding decisively, which aligns with modern conflict management theories, such as those proposed by **William Ury. The Indian government's decision was based on years of listening to the complexities of the Kashmir issue, understanding the concerns of both local populations and national security, and responding with a comprehensive strategy. Though controversial, the move was aimed at resolving a conflict that had persisted for decades, seeking a decisive step forward for the region's stability and development.

In this context, the destruction of old legal frameworks was intended to create space for new possibilities—social, economic, and political renewal—much like Shiva's destruction of the old order to make way for the new.

India-Pakistan Relations and Strategic Deterrence.

In the broader context of India-Pakistan relations, India has also employed Shiva's principles of destruction and renewal. India's **strategic deterrence**—particularly after the 2016 **Uri attack** and the **2019 Pulwama attack**—can be seen as a destructive response to acts of terrorism. India's **surgical strikes** across the Line of Control (LoC) and the airstrike on Balakot in Pakistan were decisive actions that destroyed terrorist infrastructure.

However, these actions were balanced by diplomatic efforts to renew and strengthen regional peace, as demonstrated in continued dialogue efforts through back-channel communications and multilateral forums. In this sense, India's approach to these conflicts mirrors Shiva's dual role of destruction and creation: eliminating immediate threats while also fostering the possibility of long-term peace and stability.

Conclusion

In both the Kashmir issue and its relations with Pakistan, India has applied Shiva's conflict resolution principles. By strategically using destruction to eliminate outdated or harmful systems and fostering new opportunities for growth and renewal, India has sought to address conflicts in a way that balances decisive action with long-term creation and transformation. This approach reflects Shiva's

profound understanding of the need for both destruction and creation to bring about true resolution and renewal in conflict situations.

3. Mental Well-being in the Digital Age

With the prevalence of social media and rapid information exchange, Shiva's communication model encourages mindfulness and detachment from unnecessary noise. His meditative silence promotes mental clarity, which is crucial for well-being in contemporary society (Davidson & Begley, 2012).

Example: Mental Well-being in the Digital Age – India's Push for Mindfulness and Digital Detox

Shiva's communication model, particularly his emphasis on silence and meditative detachment, serves as an effective counterbalance to the overwhelming flood of information in the digital age. In a world where constant social media engagement and information overload can lead to mental fatigue, India has increasingly promoted initiatives that align with Shiva's teachings—emphasizing mindfulness, meditation, and digital detox for mental well-being.

Campaigns for Mental Health and Mindfulness.

India's growing awareness of mental health challenges, particularly in the age of digital distraction, mirrors Shiva's meditative silence as a way to regain clarity and mental peace. In recent years, **Mindfulness and Meditation** programs have been promoted across the country, with **International Yoga Day** being one of the most prominent global initiatives. Prime Minister Narendra Modi, a strong proponent of yoga and meditation, has used this platform to encourage people worldwide to practice mindfulness, a concept closely related to Shiva's meditative silence. These practices encourage detachment from unnecessary noise—be it external (like constant news updates) or internal (such as stress or emotional turmoil).

During his speech on International Yoga Day, Modi emphasized the importance of "mental fitness," recognizing that in the digital age, the mind faces constant distractions and stress. This emphasis on "mental fitness" echoes Shiva's principles of quieting the mind to achieve clarity, detachment, and inner peace. Such initiatives advocate for spending time in reflection and meditative silence, much like Shiva's retreat into stillness for self-awareness and clarity.

Digital Detox Initiatives.

In the context of digital well-being, India has also initiated campaigns encouraging digital detox. The National Institute of Mental Health and Neurosciences (NIMHANS) in Bangalore, along with other mental health organizations, has launched programs aimed at reducing **screen time** and promoting activities that foster mindfulness and connection with nature. Just as Shiva retreats into isolation and silence for clarity, these digital detox campaigns encourage individuals to disconnect from the virtual world to reconnect with their own mental peace.

For example, the "Unplug to Reconnect" campaign emphasizes periods of detachment from technology, encouraging people to spend time in nature, engage in physical activities, or practice mindfulness through yoga and meditation. These initiatives reflect Shiva's use of silence not just as a physical retreat but as a way of reconnecting with one's true self, away from the distractions of the external world.

Corporate and Educational Emphasis on Mental Well-being

Many companies and educational institutions in India have adopted mindfulness practices in response

to increasing concerns about the mental health of employees and students. For instance, companies like Infosysand Tata Consultancy Services (TCS) have introduced 'mindfulness-based stress reduction (MBSR)' programs for their employees, which integrate meditation, self-awareness, and stress-relief practices into their daily routines. These initiatives, rooted in ancient wisdom, advocate for taking mindful pauses to achieve mental clarity—similar to how Shiva uses silence to foster deeper insight and self-awareness.

By encouraging mindfulness and meditation practices, these programs help individuals detach from the digital noise that often leads to anxiety and stress, creating space for greater mental clarity and focus—principles embodied by Shiva's meditative silence.

These examples reflect how contemporary India has adopted and promoted practices aligned with Shiva's meditative silence and detachment, advocating for mental well-being in the face of the digital age's overwhelming noise. By encouraging periods of reflection, mindfulness, and detachment, these efforts help individuals regain clarity and tranquility, mirroring the benefits of Shiva's silence in modern society.

Conclusion

Shiva's communication style—rooted in silence, symbolism, transformation, and honesty—offers invaluable lessons for contemporary leadership, conflict resolution, and personal growth. In an age of excessive information and rapid change, integrating these principles can enhance clarity, effectiveness, and resilience. By studying Shiva's communication methods, modern society can navigate complexities with wisdom and balance.

References

1. Christensen, C. M. (1997). The innovator's dilemma: When new technologies cause great firms to fail. Harvard Business Review Press.
2. Davidson, R. J., & Begley, S. (2012). The emotional life of your brain: How its unique patterns affect the way you think, feel, and live—and how you can change them*. Hudson Street Press.
3. Doniger, W. (1981). The origins of evil in Hindu mythology. University of California Press.
4. Eliade, M. (1975). Yoga: Immortality and freedom. Princeton University Press.
5. Flood, G. (1996). An introduction to Hinduism. Cambridge University Press.
6. Goleman, D. (2011). Leadership: The power of emotional intelligence. More Than Sound.
7. Goleman, D. (2013). Focus: The hidden driver of excellence*. HarperCollins.
8. Isaacson, W. (2011). *Steve Jobs*. Simon & Schuster.
9. Kumar, S. (2020). The art of mindful silence. Penguin India.
10. Nadella, S. (2017). Hit refresh: The quest to rediscover Microsoft's soul and imagine a better future for everyone. Harper Business.
11. Schumpeter, J. A. (1942). Capitalism, socialism, and democracy. Harper & Brothers.
12. Shastri, J. L. (Ed.). (2004). Shiva Purana. Motilal Banarsidass.
13. Ury, W. (2000). The third side: Why we fight and how we can stop. Penguin Books.
14. Vance, A. (2015). Elon Musk: Tesla, SpaceX, and the quest for a fantastic future. HarperCollins.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

श्री गुरुनानक देव जी के विचारों की वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता का अध्ययन

डॉ. प्रीती ग्रोवर
शोध निर्देशिका -
प्रोफेसर, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर

गगनदीप कौर
शोधार्थी -
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर

सार - संक्षेप

श्री गुरुनानक देव जी के विचार आज की शिक्षा के लिए अत्यंत प्रासांगिक हैं क्योंकि वे समता, सामाजिक न्याय, सेवा, ईमानदारी, कीरत करो, नाम जपो और वंड छको (बांटना) जैसे शाश्वत मूल्यों पर जोर देते हैं, जो आधुनिक शिक्षा को केवल किताबी ज्ञान से निकालकर नैतिक, व्यावहारिक और समग्र विकास की ओर ले जाते हैं। लंगर, संगत और पंगत जैसी प्रथाओं के माध्यम से उन्होंने सामुदायिक भोजन और सेवा की परंपरा शुरु की, जो आज भी खाद्य सुरक्षा, सामाजिक एकजुटता और परस्पर सहयोग के लिए प्रेरणा देती है।

प्रस्तावना

श्री गुरुनानक देव जी विश्व की महानतम् विभूति, युगदृष्टा, परमयोगी, तत्वज्ञ, महान योग साधक, बीसवीं सदी के अप्रतिम प्रतिभा सम्पन्न प्रख्यात दार्शनिक एवं शिक्षाविद् थे। युगदृष्या की दृष्टि से उन्होंने अपने समय की, अपने देश की स्थिति को बड़ी निकटता से देखा और समझा था।

श्री गुरुनानक देव जी महान आध्यात्मिक विभूति के साथ-साथ अद्‌भुत मेघा सम्पन्न मौलिक चिन्तक थे। 15 वीं सदी के अन्तिम दशकों में उनकी ऋषि दृष्टि मानव जीवन के समग्र क्षेत्रों सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, आध्यात्मिक आदि पर उस ऊंचाई तक गई, जहां तक अभिलिखित इतिहास में कदाचित् ही किसी अन्य विद्वान की गई हो।

श्री गुरुनानक देव जी कालजयी महापुरूष थे। कालजयी महापुरूषों के चिन्तक सार्वकालिक एवं सतत् प्रासंगिक होते हैं। उनके शैक्षिक चिन्तन में मनुष्य के समग्र विकास अभ्युदय एवं निःश्रेयस का अद्‌भुत संगम है।

जीवन परिचय

श्री गुरुनानक देव जी का जन्म रायभोज की तलवण्डी, जिला शेखपुर (वर्तमान ननकाना साहिब, पाकिस्तान) में कार्तिक मास की पूर्णिमा 15 अप्रैल सन् 1469 ईस्वी में हुआ था। बीबी नानकी इनकी बड़ी बहन थी। श्री गुरुनानक देव जी का झुकाव प्रारंभ से ही अध्यात्मवाद एवं भक्तिवाद की तरफ था। उन्होंने मानवता की सेवा के लिए करतारपुर नामक शहर का निर्माण किया। अपने जीवन के अन्तिम समय तक वे श्री करतारपुर साहिब में ही रहे।

श्री गुरुनानक देव जी के शिक्षा विचारों की वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता

(अ) शिक्षा का अर्थ :-

श्री गुरु नानक देव जी बाल्यकाल से ही प्रखर बुद्धि के थे। उन्होंने 'शिक्षा के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब (अंग-365) में ''विद्या'' अर्थात् ;प्रकाश' शब्द का उल्लेख किया। गुरुजी की शिक्षा सैद्धान्तिक न होकर व्यवहारिक है। उन्होंने अपने जीवन काल में सदैव ही ज्ञान को प्रेम का विषय मानते हुए इसके व्यावहारिक पक्ष को अधिक महत्व दिया है। श्री गुरुनानक देव जी के अनुसार, ''शिक्षा वह है, जो अज्ञान के अंधकार में भटके हुए मनुष्य को ज्ञान का प्रकाश दिखाकर सुमार्ग की ओर अग्रसर करें। शिक्षा द्वारा शरीर एवं आत्मा का सर्वांगीण विकास संभव है।'' श्री गुरु नानक देव जी सदैव ही प्रत्येक व्यक्ति के मन, शरीर एवं आत्मा के सर्वांगीण विकास की बात किया करते थे। इसके अतिरिक्त वे अनुभव द्वाराज्ञान अर्जित करने पर बल दिया करते थे। इनके इस व्यावहारिक पक्ष को वर्तमान शिक्षा जगत के साथ-साथ अनेक पक्षों ने अपनाया है।

(ब) शिक्षा का स्वरूप एवं प्रकृति :-

श्री गुरु नानक देव जी के अनुसार व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन शिक्षा का ही काल है। गुरुजी ने जिस मत को जन्म दिया, उसका नाम रखा सिक्ख, जिसका अर्थ है - सीखने वाला। उनके अनुसार मनुष्य में सिर्फ सीख तत्व भाव सीखने की भावना होनी चाहिए और ये जजबा मरते दम तक व्यक्ति में रहना चाहिए। गुरुजी ने जो धर्म का चित्र अपने मन में बनाया, आगे चलकर वो स्वरूप सिख फिर सिंग और बाद में खालसा कहलाया। गुरुजी ने शिक्षा के व्यापक दृष्टिकोण को अपनाया है। उनके अनुसार शिक्षा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त होकर सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक इत्यादि सभी पक्षों का समुचित विकास करती है। ऐसी शिक्षा किसी एक निश्चित समय, स्थान एवं विधि-विधान में नहीं बांधी जा सकती है।

(स) शिक्षा के उद्देश्य :-

व्यक्तिगत विकास :- गुरुजी के अनुसार मनुष्य का व्यक्तिगत विकास आत्मानुभूति से सम्बन्धित है। गुरुनानक देव जी ने अपनी वाणी में मनुष्य के व्यक्तिगत विकास हेतु निम्नलिखित विचार प्रस्तुत किए हैं :-

विद्या विचारी ता परोपकारी (श्री गुरु ग्रन्थ साहिब, अंग-356, राग आसा)

बौद्धिक विकास :- श्री गुरु नानक देव जी ने शिक्षा में चिन्तन एवं मनन को अधिक महत्व दिया है, जो व्यक्ति के बौद्धिक विकास में पूर्ण रूप से सहायक है। उनके अनुसार बौद्धिक विकास द्वारा ही मनुष्य में भावनात्मक अस्थिरता दूर होती है।

नैतिक विकास :- श्री गुरुनानक देव जी ने मनुष्य के नैतिक विकास को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उन्होंने ज्ञान प्रदान करने वाले गुरु को भी सर्वोच्च सम्माननीय स्थान प्रदान किया है। उन्होंने जन साधारण के लिए अनेक उपदेश दिए हैं। इसमें से कई आदेश मौलिक हैं तो कई पारलौकिक। उनका मानना था कि मनुष्य एक आचरणशील प्राणी है एवं आत्मज्ञान तथा आत्म निर्णय द्वारा उसका नैतिक विकास होता है।

सामाजिक विकास :- श्री गुरुनानक देव जी एक प्रसिद्ध समाज-सुधारक थे। उन्होंने अपने समय के समाज की कठिनाईयों को बहुत निकटता से देखा और जीया था। उनकी शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करना था। उनके अनुसार, प्रत्येक मनुष्य समाज की प्रथम इकाई है और व्यक्ति के गुण-दोष स्वयं समाज के गुण व दोष होते हैं। सामाजिक विकास के बिना व्यक्तिगत विकास व्यर्थ व निरर्थक है। इसलिए शिक्षा द्वारा व्यक्ति विशेष का विकास तभी उपयोगी है, जब वह समाज के कल्याण में सहायक हो। उनके यह विचार निश्चित रूप से अनुकरणीय हैं एवं इन विचारों को वर्तमान शिक्षा में स्थान दिया जा सकता है।

(द) पाठ्यचर्या स्वरूप :-

श्री गुरुनानक देव जी अपनी शिक्षा में आध्यात्मिक मूल्यों के साथ-साथ सहज-योग शिक्षा के भी समर्थक थे। उन्होंने अध्यात्म को आधार बनाकर ही लोगों में ज्ञान के दीप प्रज्ज्वलित किए। उनके अनुसार पाठ्यचर्या इस प्रकार की होनी चाहिए,

जो हमारे मूल्यों के साथ-साथ हमारा शारीरिक मानसिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं चारित्रिक विकास करने में सहायक हो, जिसमें आधुनिकता, व्यावहारिकता के साथ-साथ सांस्कृतिक मूल्यों का भी समावेश हो।

(य) शिक्षण विधियाँ :-

श्री गुरुनानक देव जी की समस्त शिक्षण विधियाँ वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में विचारणीय, अनुकरणीय एवं शत-प्रतिशत प्रासंगिक हैं। उनके जीवन वृतान्त का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन काल में प्रदान की गई शिक्षाओं में प्रवचन विधि, व्याख्यान विधि, प्रश्नोत्तर विधि, श्रवण एवं मनन विधि, स्व-क्रिया विधि, कहानी विधि, निगमन विधि एवं निर्देशन विधि व परामर्श विधि का प्रत्यक्ष व व्यवहारिक प्रयोग किया है। उपरोक्त समस्त शिक्षण विधियाँ वर्तमान समय में शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में अत्यन्त प्रचलित हैं। इन समस्त शिक्षण विधियों के अनुप्रयोग से वर्तमान शिक्षा प्रणाली को और सार्थक व प्रभावी बनाया जा सकता है।

निष्कर्ष

वर्तमान समय में हम आधुनिकता एवं विकास के नाम पर अपने आदर्श एवं मूल्यों से विमुख हो रहे हैं। इस दृष्टि से श्री गुरु नानक देव जी के विचार वर्तमान मूल्य शिक्षा के अनुरूप हैं। विद्यार्थियों में काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष, हताशा, निराशा, भग्नाशा, कुसंग जैसी विकृतियों का परित्याग करने हेतु श्री गुरु नानक देव जी के विचार विचारणीय एवं अनुकरणीय हैं। उनके विचार सर्वक्षेत्रीय एवं सर्वजन-मन को आकर्षित करने वाले हैं। उनके द्वारा प्रदान किए गए साारगर्भित उपदेशों का अनुसरण निश्चित रूप से हमारे सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास के लिए लाभप्रद सिद्ध होगा। इसलिए आज हमें एवं हमारे समाज को आवश्यकता है कि हम श्री गुरुनानक देव जी की शिक्षाओं एवं बाणियों को आत्मसात कर उनका अनुसरण करें, क्योंकि समूची मानवता के लिए श्री गुरु नानक देव जी की शिक्षाएँ बहुमूल्य मार्ग-दर्शक हैं, जिन्हें अपनाकर हम अपने जीवन को पूर्ण रूप से सफल बना सकते हैं।

भावी शोध हेतु सुझाव

प्रस्तुत शोध श्री गुरु नानक देव जी के विचारों की वर्तमान शिक्षा में प्रासंगिकता तक ही सीमित है। इसका अध्ययन गुरुजी के सम्पूर्ण जीवन दर्शन पर भी किया जा सकता है। साथ ही हम आगामी शोध गुरुजी के अनुशासन सम्बन्धी विचारों की भविष्य में उपयोगिता विषय पर भी कर सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- क्रिस्टोफर शेकले, अरविंद मंदैर (2013), सिख गुरुओं की शिक्षाएँ, सिख धर्मग्रन्थों से चयन, रूटलैज, पृष्ठ संख्या 18-19, 22
- डब्ल्यू.एच.मैकलियोड (1989), सिख : इतिहास, धर्म और समाज, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रैस, पृष्ठ संख्या 26-51
- जग्गी, डॉ. गुरशरण कौर, ''गुरु नानक की प्रेम-भक्ति'', वेलविश पब्लिशर्स, दिल्ली, 2002

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

बाल विकास में ज्योतिष का महत्व

डॉ. चंद्रकांता कुमावत

डॉ. अलकनंदा शर्मा
विभाग अध्यक्ष ज्योतिष एवं वास्तु संस्थान, माणिक्य लाल वर्मा श्रमजीवी कॉलेज,
टाउन हॉल परिसर राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर राजस्थान

प्रस्तावना

वैदिक काल में छात्र माता-पिता का घर छोड़ कर गुरुकुल में ही शिक्षा अध्ययन करते थे। गुरु मौखिक प्रवचन देकर ही शिक्षा देते थे। उसमें छात्र मनन और चिन्तन करते थे। सनातन काल में वैदिक शिक्षा प्रणाली द्वारा विद्याध्ययन करवाया जाता था, जो वेदों पर आधारित थी। शिक्षा के माध्यम से ही हम सभ्य संस्कारी व सामाजिक जीवनयापन करते हैं।

इतिहासकारों के अनुसार 2500 ईसा पूर्व से 500 ई.पू. तक भारतीय शिक्षा प्रणाली पूर्णतः वेदों पर आधारित थी।

शिक्षा की संरचना एवम् संगठन

प्रारम्भिक शिक्षा

5 वर्ष से विद्यारम्भ संस्कार (कुलपुरोहित द्वारा) होता था। विद्यारम्भ संस्कार में सर्वप्रथम बालक को नहलाया जाता था, फिर नये वस्त्र पहनाते थे। कुलपुरोहित और बच्चे के बीच चावल बिखेरे जाते थे। फिर बच्चों को चावलों से अक्षर बनाकर इस संस्कार की शुरुआत की जाती थी।

उच्च शिक्षा

उच्च शिक्षा उपनयन संस्कार से शुरू की जाती थी। उच्च शिक्षा गुरुकुल में सम्पन्न होती थी। गुरुकुल घर से दूर जंगलों के बीच शान्त वातावरण में होते थे।

उपनयन संस्कार को यज्ञोपवीत संस्कार भी कहा जाता है।

उप का अर्थ है पास।

नयन का अर्थ है ले जाना।

वर्ण व्यवस्था विद्यमान थी।

1 ब्राह्मण - 8 वर्ष

2 क्षत्रिय - 10 वर्ष

3 वैश्य - वर्ष (पतझड़) 12 वर्ष में

शुद्र को उपनयन संस्कार का अधिकार प्राप्त न होने के कारण उच्च शिक्षा से वंचित रखा जाता है।

समावर्तन संस्कार - (वापस लौटना)

विद्याप्रारम्भ संस्कार और उपनयन संस्कार के सम्पन्न होने के पश्चात् घर विद्यार्थी/छात्र वापस लौटता था व समावर्तन

संस्कार किया जाता था। इस संस्कार में गुरु को गुरु दक्षिणा दी जाती थी।

इस संस्कार के उपरान्त ही विद्यार्थी/छात्र गृहस्थ जीवन प्रारम्भ कर सकता था।

वैदिक शिक्षा प्रणाली में प्रशासनिक व वित्तीय व्यवस्था बिल्कुल भिन्न थी।

1 निःशुल्क शिक्षा

शिक्षा पर किसी भी राज्य का नियंत्रण नहीं होता था। गुरुकुल में गुरु ही पाठ्यक्रम में परिवर्तन ला सकते थे।

2 आय का स्रोत

कभी-कभी राजा वित्तीय सहायता देते थे, वह स्थायी स्रोत नहीं था। फिर भी प्रजा जानवर, कपड़े, अनाज, बर्तन, धन आदि का दान करती थी। आसपास से भिक्षा लाई जाती थी।

शिक्षा सम्पन्न होने के उपरान्त गुरु को गुरु दक्षिणा के रूप में अन्न, वस्त्र प्रदान करते थे। वर्तमान समय में हम देखते हैं कि माता-पिता अपने बालकों के प्रति, विद्या के प्रति जागरूक हो गये है। शिक्षा का स्वरूप एकदम बदल गया है।

बच्चा जब अपने समूह में आगे निकल जाता है, तो अभिभावक सोचते हैं कि क्यों न उसे क्रमोन्नत किया जाए।

ऐसे समय में अभिभावक उसे आगे वाली कक्षा में बिठा देते हैं, धीरे-धीरे बालक पर मानसिक दबाव पड़ता है। वह अपने से बड़े समूह के साथ मानसिक सामंजस्य नहीं बैठा पाता है और धीरे-धीरे पिछड़ता चला जाता है व हीन भावना से ग्रसित हो जाता है। अतः यह मनोवैज्ञानिक रूप से यह सही नहीं रहता है।

शिक्षा का समान अधिकार कानून में वर्तमान में 6 से 14 वर्ष के बालकों को निःशुल्क शिक्षा दी जा रही। वह समयावधि उचित है तथा बालक अपनी प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण कर लेता है।

भारत में शिक्षा का अधिकार

संविधान के अनुच्छेद 21-ए के अन्तर्गत मूल अधिकार में उल्लेख किया हुआ है।

2 दिसम्बर 2002 को में 86वाँ संशोधन करके शिक्षा को 'मौलिक अधिकार' बनाया गया है। इसमें 6-14 तक के आयु के प्रत्येक बच्चे के लिये शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में बताया गया है और अनिवार्य कर दिया गया है। सरकार का प्रयास है कि इस आयु वर्ग का कोई भी बालक शिक्षा से वंचित नहीं रहे।

ज्योतिषीय दृष्टिकोण

ज्योतिषीय दृष्टिकोण से देखते हैं तो शैक्षणिक क्षेत्र में ज्योतिष का महत्वपूर्ण स्थान है। बालक के शैक्षणिक स्तर पर बालक का जन्म नक्षत्र, लग्न, ग्रहों की स्थिति सभी का बहुत प्रभाव पड़ता है।

1 महत्वाकांक्षा

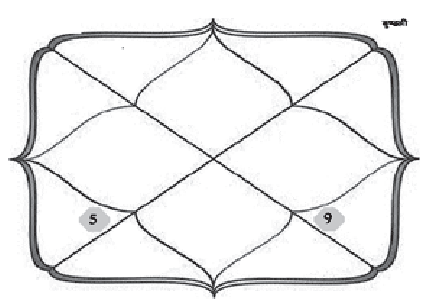

जैसे- जन्म कुण्डली में नवम भाव है व धर्म का त्रिकोण है, जिसके स्वामी-देवगुरु बृहस्पति हैं जो शिक्षा की महत्वाकांक्षा व उच्च शिक्षा व उसके स्तर को दर्शाते हैं। इसका संबंध पंचम से हो जाए तो बालक अच्छी शिक्षा ग्रहण करता है।

2 शिक्षा का स्तर

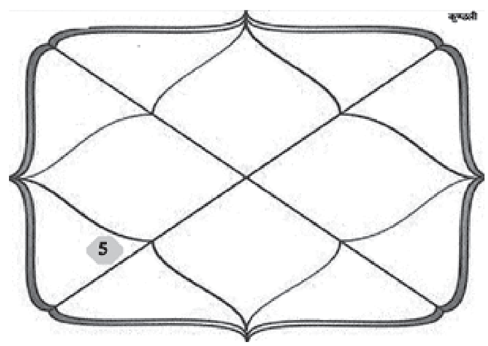

जन्म कुण्डली का 5 हाउस बुद्धि, ज्ञान, कल्पना, अतीन्द्रिय ज्ञान, रचनात्मक कार्य, स्मरण शक्ति व पूर्व जन्म के संचित कर्म को दर्शाता है व शिक्षा का स्तर दर्शाता है।

3 कुण्डली का द्वितीय भाव

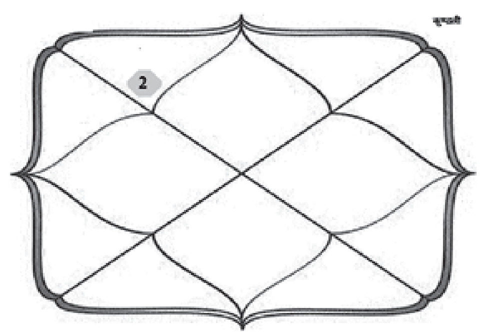

वाणी, धन संचय व मानसिक स्थिति के साथ-साथ यह बताता है कि किस प्रकार की शिक्षा होगी। यदि बालक गणित लेना चाहता है तो बुध का संबंध लग्न, लग्नेश या लग्न, नक्षत्र से होता है तो गणित में सफल होता है।

2 शनि/ मंगल से संबंध हो तो मशीनरी कार्य में दक्ष होता है।

यदि मंगल + राहू

दशमस्थ बुध व सूर्य या मंगल की दृष्टि

शनि + राहू का संबंध, चन्द्र + बुध का संबंध

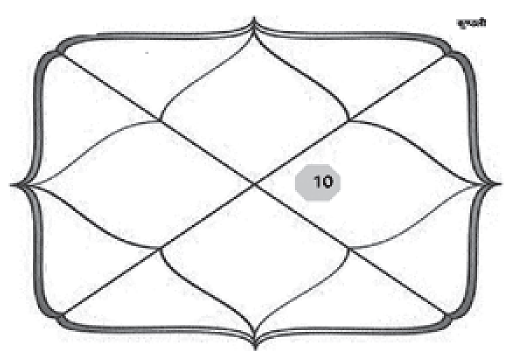

दशमस्थ राहू + षष्ठस्थ सूर्यस का संबंध तकनीकी शिक्षा में आगे बढ़ाता है।

अच्छी शैक्षणिक योग्यता के महत्वपूर्ण योग

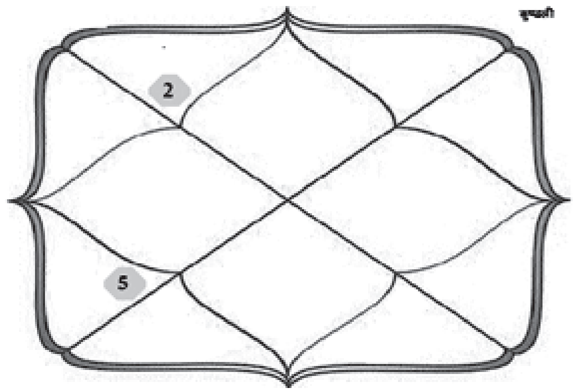

- 1 द्वितीयेश या बृहस्पति केन्द्र या त्रिकोण में स्थिति हो।
- 2 पंचम भाव में बुध की स्थिति या दृष्टि या बृहस्पति और शुक्र की युति हो।
- 3 पंचमेश की पंचम भाव में बृहस्पति या शुक्र के साथ युति हो।
- 4 बृहस्पति, शुक्र और बुध में से केन्द्र या त्रिकोण में है।

शैक्षिक योग्यता का अभाव या न्यूनता

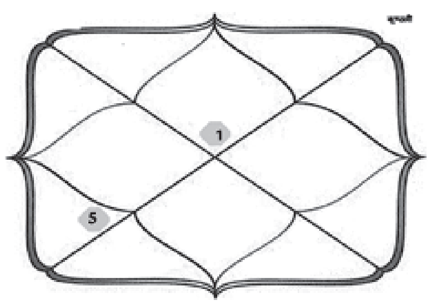

- 1 पंचम भाव में शनि की स्थिति और लग्नेश की दृष्टि हो।
- 2 पंचम भाव पर अशुभ ग्रहों की दृष्टि या अशुभ ग्रहों की स्थिति हो।
- 3 पंचमेश नीच राशि में हो व अशुभ ग्रहों से दृष्ट हो।

तो बालक की ग्रह स्थिति के अनुसार ही विषय चयन करना चाहिए।

विभिन्न ग्रहों के शिक्षा संबंधित प्रतिनिधित्व का विवरण निम्नलिखित है, जिसके आधारानुसार ग्रहों की उपरोक्त भावों में स्थिति को देखकर जातक के लिये उपयुक्त विषय का चयन कर सकते हैं—

- 1 सूर्य- चिकित्सा, शरीर विशाल, प्राणीशास्त्र, नेत्र चिकित्सा, राजभाषा प्रशासन, राजनीति, जीव विज्ञान।
- 2 चंद्र - नर्सिंग, नाविक शिक्षा, वनस्पति विज्ञान, जन्तु विज्ञान, होटल प्रबंधन, काव्य, पत्रकारिता, पर्यटन, डेयरी विज्ञान, जलदाय।
- 3 मंगल - भूमिति, कानून, पुलिस, सर्वे, अभियांत्रिकी, वायुयान शिक्षा, शल्य चिकित्सा विज्ञान, ड्राइविंग, टेलरिंग, तकनीकी शिक्षा, दंत चिकित्सा, सैनिक शिक्षा, खेलकूल संबंधी प्रशिक्षण।

● 4 बुध - गणित, ज्योतिष, व्याकरण, शासन की विभागीय परीक्षाएं, पदार्थ विज्ञान, हस्तरेखा ज्ञान (भाषा विज्ञान) शब्द शास्त्र, पुस्तकालय विज्ञान, लेखा, वाणिज्य, तत्व ज्ञान, शिक्षक प्रशिक्षण।

● 5 गुरु - बीजगणित, द्वितीय भाषा, आरोग्य शास्त्र, विविध, अर्थशास्त्र, दर्शन, मनोविज्ञान, धार्मिक या आध्यात्मिक शिक्षा।

● 6 शुक्र- ललितकला (संगीत नृत्य, अभिनय, चित्रकला, टी.वी., फिल्म, वेशभूषा, फैशन, डिजायनिंग, काव्य साहित्य एवं विविध कलाएं।

● 7 शनि - भूगर्भशास्त्र, सर्वेक्षण, अभियांत्रिकी, औद्योगिकी यांत्रिकी, भवननिर्माण, मुद्रणकला (प्रिंटिंग)।

● 8 राहू - तर्कशास्त्र, मेस्मेरिज्म, हिप्नोटिज्म, करतब के खेल, भूत-प्रेत संबंधी ज्ञान, विष चिकित्सा, एंटी बायोटिक्स, इलेक्ट्रोनिक्स, केतु- गुप्त विद्याएं, मंत्र-तंत्र संबंधी ज्ञान।

वैज्ञानिक और औद्योगिक प्रगति के कारण व्यवसायों एवं शैक्षणिक विषयों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है।

अतः ज्योतिष सिद्धान्तों के आधार पर ग्रहों के पारस्परिक संबंधों को ध्यान में रखकर विचार करना चाहिए।

जीव विज्ञान

- सूर्य का जल राशिस्थ होना।
-दशम भाव में संबंध सूर्य का
-सूर्य ७ मंगल (चिकित्सा क्षेत्र की पढ़ाई)
-लग्न/ लग्नेश, दशम् दशमेश का संबंध हो तो जातक जज बनता है।

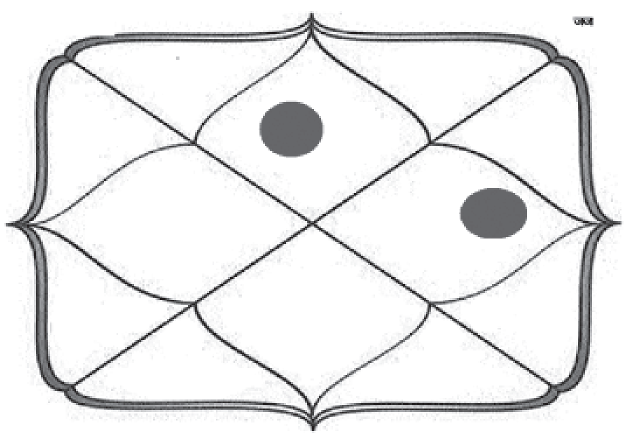

कॉमर्स - लग्न/ लग्नेश का संबंध बुध से साथ गुरु से भी हो तो जातक वाणिज्य की पढ़ाई सफलतापूर्वक करता है।

कुण्डलियों का विश्लेषण

डॉ. उषा (स्त्री रोग विशेषज्ञ)

दूसरे भाव में शुक्र है जो रोग विशेषज्ञ बनाया।
लग्नेश मजबूत है जो चिकित्सक बनने के लिए आवश्यक है। सूर्य व गुरु स्थिर हैं।
प्रथम द्वितीय हाउस बलवान हैं।

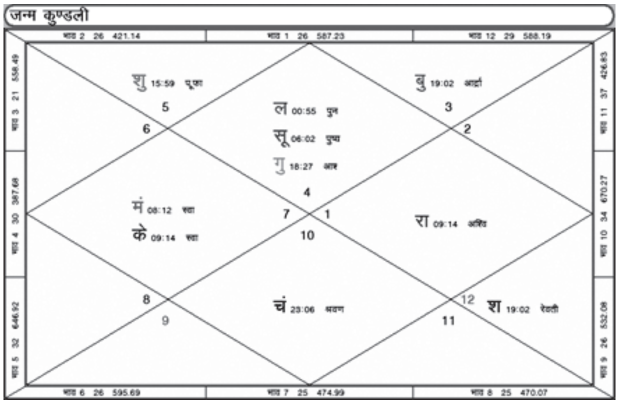

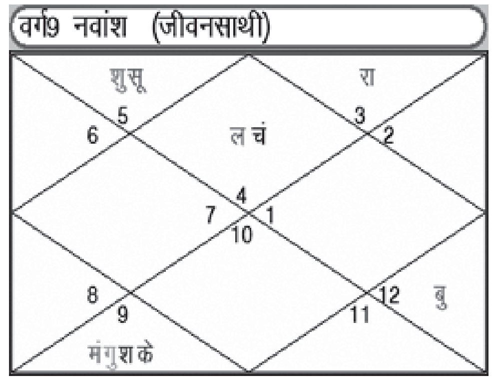

जन्म कुण्डली

ल	00:55:38	पुनर्वसु	ही	4.गु/मं/श
सू.	06:02:04	पुष्य	हू	1.श/बु/शु
चं	23:06:25	श्रवण	खो	4.चं/सू/बु
मं	08:12:11	स्वाति	रु	1.रा/रा/शु
बु	19:02:06	आर्द्रा	छ	4.रा/चं/शु
गु	18:27:00	आश्लेषा	डी	1.बु/बु/श
शु	15:59:00	पूर्वाफाल्गुनी	मो	1.शु/सू/बु
श	19:02:36	रेवती	दे	1.बु/के/गु
रा	09:14:32	अश्विनी	चो	3.के/गु/रा
के	09:14:32	स्वाति	रु	1.रा/गु/बु

विंशोत्तरी

श-मं	शुक्रवार	26-03-2021
श-रा	गुरुवार	05-05-2022
श-गु	मंगलवार	11-03-2025
बु-बु	बुधवार	22-09-2027
बु-के	सोमवार	18-02-2030
बु-शु	शनिवार	15-02-2031
बु-सू	शुक्रवार	16-12-2033
बु-चं	रविवार	22-10-2034
बु-मं	रविवार	23-03-2036
बु-रा	शुक्रवार	20-03-2037

नेहा

Science लेना चाहिए। कन्या commerce ले सकती है। दशम राशि में मिथुन है। air hosteses बन सकती है। वायुत्व की राशि है। वर्तमान में air wings में अपना कॅरियर बना रही है।

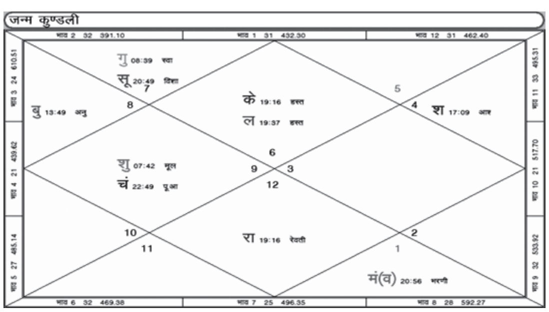

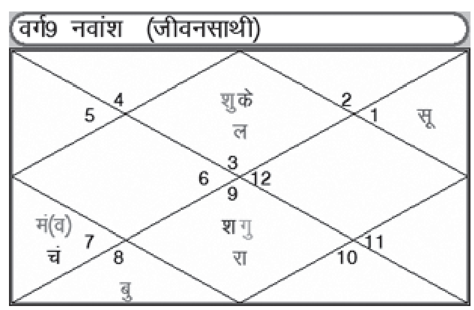

जन्म कुण्डली

ल	19:37:33		हस्त	ण	3.चं/बु/श
सू.	20:49:24		विशाखा	ती	1.गु/गु/के
चं	22:49:54		पूर्वाषाढ़ा	फा	3.शु/श/शु
मं	20:56:29	(व)	भरणी	ले	3.शु/गु/के
बु	13:49:39		अनुराधा	ने	4.श/रा/बु
गु	08:39:09		स्वाति	रु	1.रा/रा/मं
शु	07:42:51		मूल	भा	3.के/गु/गु
श	17:09:32		आश्लेषा	डी	1.बु/बु/शु
रा	19:16:50		रेवती	दे	1.बु/के/बु
के	19:16:50		हस्त	ण	3.चं/बु/गु

विंशोत्तरी

चं-श	सोमवार	08-11-2021
चं-बु	शुक्रवार	09-06-2023
चं-के	गुरुवार	07-11-2024
चं-शु	रविवार	08-06-2025
चं-सू	रविवार	07-02-2027
मं-मं	सोमवार	09-08-2027
मं-रा	बुधवार	05-01-2028
मं-गु	सोमवार	22-01-2029
मं-श	शनिवार	29-12-2029
मं-बु	शुक्रवार	07-02-2031

कॉमर्स ले सकती है। बुध प्रभावी है। फैशन डिजाइनिंग करती है। नवम् में शुक्र है इसलिए योगकारक है। शनि लग्न में है। च.+म.+रा. (इंजीनियर⁄बायोलोजी) भी ले सकती है। वक्त के साथ चले, slow है। वर्तमान में Fashion Designing कर रही है।

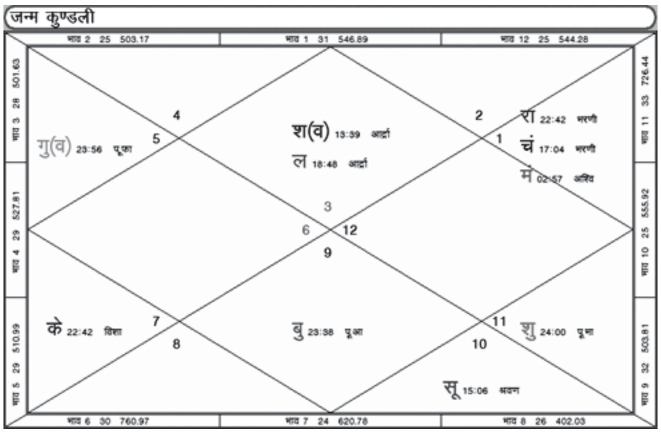

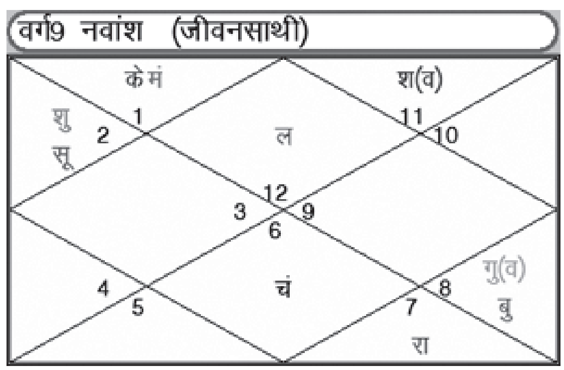

जन्म कुण्डली

ल	18:48:34		आर्द्रा	छ	4.रा/चं/बु
सू	15:06:10		श्रवण	खू	2.चं/गु/सू
चं	17:04:42		भरणी	लू	2.शु/चं/के
मं	02:57:49		अश्विनी	चू	1.के/शु/के
बु	23:38:09		पूर्वाषाढ़ा	ढा	4.शु/श/रा
गु	23:56:30	(व)	पूर्वाफाल्गुनी	टू	4.शु/श/गु
शु	24:00:24		पू.भाद्रपद	सो	2.गु/बु/बु
श	13:39:27	(व)	आर्द्रा	ङ	3.रा/बु/रा
रा	22:42:43		भरणी	ले	3.शु/श/शु
के	22:42:43		विशाखा	ती	1.गु/श/शु

विंशोत्तरी

सू-श	शुक्रवार	23-04-2021
सू-बु	मंगलवार	05-04-2022
सू-के	शुक्रवार	10-02-2023
सू-शु	रविवार	18-06-2023
चं-चं	सोमवार	17-06-2024
चं-मं	गुरुवार	17-04-2025
चं-रा	रविवार	16-11-2025
चं-गु	मंगलवार	18-05-2027
चं-श	शनिवार	16-09-2028
चं-बु	बुधवार	17-04-2030

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

यात्रा साहित्य में सामाजिक यथार्थ : बादलों में बारूद के संदर्भ में

श्रीरेषा टी. ए.
शोधार्थी, श्री शंकराचार्य संस्कृत सर्वकलाशाला, कालटी, केरल
Nambanath House P O chengaloor, Maravanchery, Thrissur 680312 Kerala
E-mail ID : tasreeresha@gmail.com
Phone : 8078430941

प्रस्तावना

यात्रा वह प्रक्रिया है जो हमारे जीवन को नए दृष्टिकोणों और अनुभवों से समृद्ध करती है। यात्री उन नए पहलुओं का साक्षी बनता है, और जब वह अपने अनुभवों को शब्दों में ढालता है, तभी यात्रा-साहित्य का जन्म होता है। यात्रा केवल नई जगहों का दर्शन करना नहीं है, बल्कि जीवन, समाज और संस्कृति की गहन समझ प्राप्त करना भी है। यात्रा-साहित्य वस्तुतः आंखों देखा यथार्थ वर्णन है—इसी कारण यह साहित्यिक विधा सदैव सत्य के साथ रहती है। इसमें लेखक अपने अनुभवों, देखे गए स्थानों, वहां की संस्कृति, समाज, इतिहास, भूगोल और लोगों के बारे में सजीव विवरण प्रस्तुत करता है। अतः यात्रा-वर्णन केवल साहित्यिक रचना नहीं, बल्कि ज्ञान और अनुभवों का समग्र संकलन है।

समकालीन यात्रा-वृत्तांतों में प्रतिरोध का स्वर पहले की तुलना में अधिक प्रबल होकर उभर रहा है। सामाजिक अन्याय, रूढ़ियों, भेदभाव और राजनीतिक भ्रष्टाचार के विरुद्ध उठने वाली आवाज़ें अब यात्रा साहित्य का एक महत्वपूर्ण आयाम बन चुकी हैं। यात्री-लेखक अपने अनुभवों को कथानक रूप में प्रस्तुत करते हुए सामाजिक यथार्थ पर प्रश्नचिह्न लगाते हैं और व्यवस्था की खामियों को उजागर करते हैं।

विशेष रूप से स्त्री यात्रा-साहित्य और पहाड़ी प्रदेशों के यात्रा साहित्य में यह प्रतिरोध अधिक मुखर दिखाई देता है, जहाँ यात्री लेखक या लेखिका सामाजिक अन्याय, राजनीतिक भ्रष्टाचार और आदिवासी अस्मिता जैसे मुद्दों को उठाते हुए यथास्थिति को चुनौती देते हैं।

मधु कांकरिया द्वारा लिखित यात्रा-वृत्तांत 'बादलों में बारूद' में भी ऐसी ही सामाजिक अव्यवस्था और उसके यथार्थ का तीखा एवं संवेदनशील चित्रण मिलता है।

बादलों में बारुद मधु कांकरिया द्वारा लिखित एक विशिष्ट यात्रा साहित्य कृति है, जिसमें लेखिका स्वयं की खोज में भटकते हुए भूगोल, इतिहास, संस्कृति, पुरातत्व और जीवन के अनेक छिपे पहलुओं को उद्घारित करती है। उन्होंने लोहरदगा और गुमला के आदिवासी अंचल, दरदरी की चढ़ाई, पलामू, यूमथांग, हिमालय-प्रांतर, नेपाल, शिलांग, सुंदरवन, चेन्नई, लद्दाख, पैंगोंग और कालडी जैसे स्थलों की यात्राओं के माध्यम से अपने अनुभवों को अत्यंत रचनात्मक एवं संवेदनशील भाषा में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।

इस कृति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें किसी प्रकार का पूर्वाग्रह नहीं झलकता; इसमें केवल यथार्थ की ईमानदार पुनरावृत्ति है। कृति का शीर्षक 'बादलों में बारूद' स्वयं इस रचना की अंदर दृष्टि का संकेत देता है- बाहरी रूप से शांत और सुंदर प्रतीत होने वाला यह संसार भीतर से विस्फोटक और संघर्षशील है।

बादलों में बारूद में चित्रित आदिवासी समाज की स्थिति, प्राकृतिक वातावरण एवं सामाजिक जीवन, धर्म और संस्कृति - सभी इस कृति के मुख्य यदार्थ बिंदु हैं।

आदिवासी समाज की स्थिति

लेखिका ने 'बादलों में बारूद' में आदिवासी बहुल क्षेत्रों जैसे झारखंड, गुमला, पलामू तथा उत्तर पूर्व के पहाड़ी इलाकों की यात्राओं के माध्यम से वहां के जनजीवन का यदार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। उन्होंने इन यात्राओं के दौरान आदिवासी समाज के जीवन-संघर्ष उनके उत्पीड़न और अस्तित्व की पीड़ा को गहराई से महसूस किया और उसी का सजीव चित्रण अपनी कृति में स्पष्ट किया है।

आदिवासी समाज आज भी जल, जंगल और जमीन जैसे मूलभूत समस्याओं से जूझ है। उनके साथ आज तक पूर्ण न्याय नहीं हो पाया है। भारत के लगभग 8 करोड़ वनवासी समुदाय अपने श्रम से देश को बॉक्साइट, लोहा, कोयला, लकड़ी, जड़ी बूटियों और अनेक प्राकृतिक संसाधन प्रदान करते हैं, परंतु इनका लाभ शहरी समाज उढ़ाता है। आदिवासी स्वयं इन संसाधनों का उपयोग नहीं कर पाते। वे तो कागज, लोहा और कोयला तक के उपभोक्ता नहीं है; बिजली, पेट्रोल, दादू या आधुनिक तकनीक तो उनके जीवन से बहुत दूर की बातें हैं। ग़रीबी के कारण कई आदिवासी परिवार अपने पारंपरिक धंधे छोड़कर आधे किसान आधे मज़दूर बन गए हैं। उनका जीवन आज भी लकड़ी बांस पत्तों मिट्टी के बर्तनों और साधारण वस्त्रों तक सीमित है। इसी कारण वे पर्यावरण प्रदूषण में किसी प्रकार का योगदान नहीं करते।

लेखिका ने इस चित्रण के माध्यम से यह दर्शाया है कि प्रकृति की अपार संपदा के बीच भी आदिवासी समाज अभाव और उपेक्षा की पीड़ा से जूझ रहा है। उनकी सादगी, श्रमशीलता और प्रकृति-निष्ठ जीवनशैली के बावजूद आधुनिक सभ्यता ने उन्हें हाशिए पर ला खड़ा किया है। मधु कांकरिया इस कृति में इन आदिवासियों की व्यथा, संघर्ष और असमानता की गहरी छाया को अत्यंत संवेदनशीलता से उजागर करती हैं।लेखिका कहती है ष्महानगरों में नहीं, ऐसे तपोवनों में ही खुलते हैं जीवन के अर्थ।'[1]

लेखिका आदिवासी युवतियों के जीवन का मार्मिक चित्रण करती हैं। वे लिखती हैं कि आदिवासी युवतियाँ अपने शिशुओं को पीठ पर बाँधकर जंगलों में पत्तों की तलाश में भटकती रहती हैं, जबकि गैंगटॉक की पहाड़ी स्त्रियाँ मृत्यु का भय सामने देखकर भी पत्थर तोड़ने का श्रम करती हैं। नेपाल की एक आदिवासी युवती, अत्यंत गरीबी और अभाव के कारण, अपनी मातृत्व की भावना तक भूल जाती है—वह अपने ही बच्चे को आहार बना लेती है। यह घटनाएँ एक ही त्रासदी की ओर संकेत करती हैं—जीवन के संघर्ष, अभाव और वंचना की त्रासदी।

लेखिका यह दिखाती हैं कि जहाँ जीवन की सारी खुशियाँ और संसाधन एक ओर केंद्रित हैं, वहीं दूसरी ओर दुःख, कष्ट और यातना का अंधकार पसरा है।

प्राकृतिक वातावरण एवं सामाजिक जीवन

प्रकृति और पर्यावरण बादलों में बारूद का महत्वपूर्ण पक्ष है जहां लेखिका मेघालय की प्राकृतिक सुंदरता और सांस्कृतिक समृद्धि को संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत करती है तथा खासी, गारो और जैतिया जनजातियों की पहाड़ी सभ्यता का सजीव चित्रण करती है।

मेघालय अपनी नैसर्गिक दवाई बता के लिए प्रसिद्ध है यहां के घने जंगल पर्वत श्रृंखला एवं नदियां जनी और ऊंचे लंबे वृक्ष इसकी अनुपम शोभा को और भी बढ़ा देते हैं। 21 जनवरी 1972 को स्थापित यह राज्य जिसका अर्थ है बादलों

का घर वहां के वातावरण और मौसम की अनूठी विशेषताओं से भी प्रसिद्ध है।

मेघालय की संस्कृति को समझते हुए लेखिका ने विशेष रूप से वहां की महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर ध्यान केंद्रित किया है। शिलांग के प्रदेशवासी से बातचीत के दौरान मधु कांकरिया को यह जानकारी मिलती है कि 'हमारी स्त्रियां संसार की सबसे शक्तिशाली बंधनहीन और उन्मुक्त स्त्रियां है। हमारी कबीलाई संस्कृति की विशेषता ही यही है कि हमारे यहां मातृसत्तात्मक परिवार इस 21वीं सदी में भी चलते हैं। हमारे यहां संपत्ति का उत्तराधिकार पुत्रीयों को मिलता है। पुत्री में भी सबसे छोटी पुत्री को सबसे अधिक मिलता है। यहां शादी के बाद लड़के ससुराल जाते हैं। यहां संतान पिता का नहीं मां का सरनेम लगते हैं।'[2] यह मातृसत्तात्मक समाज और कबीलाई संस्कृति का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जो मेघालय की संस्कृति को अन्य जगहों से अलग करता है।

लेखिका इस बात को उजागर करती है कि मेघालय में पितृसत्तात्मक समाज की कोई जगह नहीं है। परिवारों में महिलाएं पूरी तरह से स्वतंत्र और बंधनहीन होती है। सरकारी दफ्तरों में भी महिलाओं की संख्य अधिक होती हैं, जो यह दिखाता है कि महिलाएं समाज में प्रमुख भूमिका निभाती है।

गैंगटॉक के पहाड़ी जीवन को देखते हुए लेखिका को यह अनुभव होता है कि पहाड़ों का जीवन उतना सुंदर नहीं है, जितना वह बाहर से दिखाई देता है। इसकी सुंदरता के भीतर अनेक कठिनाइयाँ और जोखिम छिपे हैं। वहाँ का जीवन अत्यंत कठोर और संघर्षपूर्ण है—आम जनमानस प्रतिदिन अनगिनत चुनौतियों से जूझता है। उस क्षेत्र में सुख-सुविधाओं का अभाव है; वहाँ कोई भी वस्तु चिकनी-चुपड़ी या आरामदायक नहीं मिलती।

इसी प्रकार, सुंदरवन की यात्रा के दौरान भी लेखिका जीवन के विविध रूपों और परिस्थितियों को गहराई से देखती हैं। वहाँ के लोगों के दुःख, संघर्ष और असुरक्षा की पीड़ा इतनी गहन है कि वह प्राकृतिक सौंदर्य की चमक को भी मद्धिम कर देती है। लेखिका के लिए सुंदरवन केवल प्रकृति की रमणीयता का प्रतीक नहीं, बल्कि वहाँ के लोगों के जीवन-संघर्ष और अस्तित्व की करुण कथा का भी दर्पण बन जाता है।

धर्म और संस्कृति

लेखिका ने अपनी यात्राओं के दौरान केवल भूगोल और सभ्यताओं का अवलोकन नहीं किया, बल्कि उन्होंने शक्ति-संरचना, धार्मिक प्रवृत्तियों और सांस्कृतिक परिवर्तनों को भी गहराई से देखा और परखा है। धर्म और संस्कृति से भी अधिक उन्हें जिन तत्वों ने विचलित किया, वे थे अंधविश्वास और रूढ़िवादी परंपराएँ। लेखिका इन दोनों की कठोर आलोचक हैं।

वह इंगित करती हैं कि आज भी अनेक देशों और समाजों में दकियानूसी विचारधाराएँ अपनी गहरी जड़ें जमाए हुए हैं। यह प्रवृत्तियाँ केवल किसी एक वर्ग या जाति तक सीमित नहीं हैं—उच्च और निम्न, दोनों ही इनके प्रभाव से मुक्त नहीं हैं। यह स्थिति इस तथ्य को उजागर करती है कि आधुनिकता और शिक्षा के प्रसार के बावजूद समाज के कुछ हिस्सों में अंधविश्वास और रूढ़िवादिता अब भी दृढ़ता से विद्यमान हैं। इनसे मुक्ति पाने के लिए सामाजिक चेतना और क्रांतिकारी सोच की अत्यंत आवश्यकता है।

लेखिका इसका सजीव उदाहरण लद्दाख की यात्रा में प्रस्तुत करती हैं, जहाँ आज भी लोग लामा परंपराओं, कर्मकांडों और धार्मिक आस्थाओं में उलझे हुए हैं। वहाँ की संस्कृति अपनी विशिष्टता के बावजूद समय के परिवर्तन से संघर्ष कर रही है। इस प्रकार, लेखिका ने यात्रा-साहित्य के माध्यम से केवल स्थानों का नहीं, बल्कि समाज की गहरी मानसिक संरचनाओं का भी विश्लेषण किया है।लेखिका कहती है 'बुद्ध ने अंधकार से लड़ा, पर आज बुद्ध के नाम पर जो अंधेरा पसरा पड़ा है, उससे लड़ने कौन बुद्ध आएगा?'[3] लेखिका ने वहां के पर्यावरण और संस्कृति की प्रशंसा भी की है क्योंकि लद्दाख स्वच्छ और प्रदूषण मुक्त है। यहां के लोग पेड़, पर्वत, जल और हवा के प्रति समर्पित है जो इस क्षेत्र की स्वच्छता और प्राकृतिक सौंदर्य का कारण है। इसलिए यह कहना भी सही है कि अंधविश्वास और कर्मकांड के बावजूद पर्यावरण के प्रति लामा बहुत सचेत

और सजग है। लेकिन लेखिका वहां की प्रगति के लिए वहां के धर्म को देशनिकाला करना जरूरी समझती है।

पूर्वोत्तर भारत में धर्मांतरण की प्रक्रिया निरंतर बढ़ रही है। 'बादलों में बारूद' में लेखिका इस सामाजिक यथार्थ को गहराई से देखती हैं। वे बताती हैं कि शिलांग जैसे क्षेत्रों में धर्म के नाम पर आदिवासी समुदायों को भ्रमित किया जा रहा है—उनकी सरलता और आस्था का उपयोग कर उन्हें नए धार्मिक प्रभावों की ओर मोड़ा जा रहा है। लेखिका इस प्रवृत्ति को सामाजिक और सांस्कृतिक शोषण का एक रूप मानती हैं, जहाँ धर्म मानवता और सहअस्तित्व का माध्यम बनने के बजाय सत्ता और स्वार्थ का उपकरण बन गया है। विशेष रूप में मेघालय की स्थिति के संबंध में मधु कांकरिया लिखती है 'पिछले 50 वर्षों में मेघालय में ईसाईकरण काफी तेज़ी से हुआ है। मिजोरम के बाद यह दूसरा राज्य है जहां कि 95 फीसदी जनता इसी हो गई है। एक सहज उन्मुक्त कबीलाई संस्कृति पर अब चर्च का आधिपत्य बढ़ता जा रहा है। देख लीजिए... शिलांग में तीन चीजों कदम कदम पर मिल जाएगी मांस मदिरा और चर्च।'[4] लेखिका इस इस प्रकार व्यक्त करती है कि धर्म और आधुनिकता के प्रभाव में आदिवासी संस्कृति पर कितना दबाव बढ़ चुका है। इसके बावजूद लेखिका यह भी बताती है कि कुछ पारंपरिक जनजातीय सांस्कृतिक उत्सव अभी भी आयोजित किए जाते हैं जैसे गारो जनजाति का बंगला नृत्य जो अक्टूबर महीने में फसल के बाद मनाया जाता है। जो आदिवासी समाज की अपनी पारंपरिक संस्कृति को बचाए रखने का प्रयास कर रहा है लेकिन लेखिका इस बात से दुखी है कि आधुनिकता और बाहरी प्रभाव के कारण लोग अभी अपने पूर्वजों की संस्कृति से मुंह मोड़ रहे हैं और जिन लोगों ने इन परंपराओं की रक्षा की थी, उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जा रहा है लेखिका का कहना है कि इस बदलाव के कारण समाज में एक अशांत वातावरण बन रहा है जो किसी भी समय खतरनाक रूप से उबर सकता है। इस स्वच्छ आकाश के बादलों में बारूद बन फूटने के इंतजार में है।

'बादलों में बारूद' में लेखिका आधुनिक समाज में व्याप्त पौराणिक सोच और अंधानुकरण का भी पर्दाफाश करती हैं। वे दिखाती हैं कि विज्ञान और तकनीक के युग में भी अनेक लोग पुराने रूढ़िगत विचारों से मुक्त नहीं हो पाए हैं। स्वयं एक इंजीनियर होने के बावजूद अपने सात वर्षीय पुत्र को वेदांत पढ़ने के लिए भेजने वाले एक आधुनिक पिता का उदाहरण लेखिका ने दिया है—यह घटना चेन्नई की है। यह प्रसंग इस बात को उजागर करता है कि आधुनिकता के बाहरी आवरण के पीछे अब भी परंपरागत धार्मिक सोच गहराई से जमी हुई है।

लेखिका केरल की वेद पाठशालाओं का भी उल्लेख करती हैं, विशेष रूप से कालड़ी स्थित 'श्री सदविद्या संजीवनी ऋग्वेद पाठशाला' का। वहाँ छोटे बच्चों को वेद अभ्यास हेतु भेजा जाता है, और इस प्रक्रिया में उन्हें संसार से लगभग पूर्णतः अलग कर दिया जाता है। लेखिका इस स्थिति पर अपनी गहरी नाराज़गी प्रकट करती हैं। उनके अनुसार, यह परंपरा ज्ञान के नाम पर बच्चों को सीमित दृष्टिकोण और संकीर्ण धार्मिकता में बाँध देती है। वे मानती हैं कि शिक्षा का उद्देश्य चेतना का विस्तार होना चाहिए, न कि व्यक्ति को सामाजिक और बौद्धिक रूप से सीमित कर देना। लेखिका समाज में व्याप्त पाखण्डपूर्ण अध्यात्मिकता की विरोध करती है। लेखिका कहती हैं ''जब तक धूल-धक्कड़ है, भूख - प्यास है, आंसू और सिसकियां है, अलौकिकता बकवास है।"[5]

निष्कर्ष

"बादलों में बारूद" केवल एक यात्रा-वृत्तांत नहीं बल्कि एक सामाजिक दस्तावेज भी है—वह दस्तावेज जो हमें याद दिलाता है कि देश के उन कोनों में जीवन-संघर्ष किस रूप में चल रहा है जहाँ बादल ऊँचे हों, पहाड़ हों, जंगल हों। इन स्थानों की सुंदरता के ठीक पीछे अक्सर "बारूद" जैसा खतरनाक सामाजिक यथार्थ छिपा हुआ है—विस्थापन, उपेक्षा, संसाधनों की लूट, सांस्कृतिक परिवर्तन, असमानता। लेखिका ने इस प्रस्तुति को संवेदनशीलता और कलात्मकता से किया है।

हमारे सामाजिक विमर्श में ऐसे ग्रंथों की भूमिका महत्वपूर्ण है क्योंकि वे बहु-आयामी अनुभव प्रस्तुत करते हैं, जिन्हें केवल सामाजिक विज्ञान-शोध से समझना कठिन होता है। इस प्रकार, इस ग्रंथ का अध्ययन और सामाजिक यथार्थ पर टिप्पणी करना हमें हमारी सामाजिक ज़मीन को बेहतर समझने में मदद कर सकता है।

संदर्भ

1. मधु कांकरिया - बादलों में बारूद पृ. 20
2. मधु कोकरिया - बादलों में बारूप पृ. 91
3. मधु कांकरिया - बादलों में बारूद पृ. 150
4. मधु कांकरिया - बादलों में बारूद पृ. 93
5. मधु कांकरिया - बादलों में बारूद पृ. 166

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

Play Lower Depths - A Study

Dr. Sanyukta Thorat
Department Head and Associate Professor Department of Fine Arts and Chhand Mandir
Rashtrasant Tukdoji Maharaj Nagpur University
Email Id : sanyuktapihu@gmail.com
Mobile no. 9372163566

1. Abstract :

The Lower Depths (Na Dne), written by Maxim Gorky in 1902, is one of the most significant works of modern realist drama, offering a profound exploration of human suffering, social injustice, and moral conflict. Set in a night shelter inhabited by society's most marginalized individuals, the play presents a bleak yet deeply human portrayal of life at the lowest level of social existence. This study examines the thematic, philosophical, and social dimensions of The Lower Depths, focusing on Gorky's realistic depiction of poverty and the ethical dilemmas faced by individuals trapped in hopeless circumstances.

The play serves as a powerful critique of the socio-economic conditions of early twentieth-century Russia, highlighting issues such as unemployment, homelessness, alcoholism, prostitution, and the loss of human dignity. Through a diverse group of characters—including thieves, laborers, fallen intellectuals, and women driven into exploitation—Gorky exposes the systemic failures that push individuals into moral and social degradation. Rather than portraying poverty as a personal failing, the play emphasizes structural injustice and the absence of social compassion as the root causes of human misery.

A central focus of this study is the philosophical conflict between illusion and truth, embodied in the opposing viewpoints of Luka and Satine. Luka's compassionate lies offer temporary emotional relief to the shelter's inhabitants, suggesting that hope—however false—can sustain life. In contrast, Satine advocates for truth and intellectual freedom, arguing that only honesty can restore human dignity. This ideological tension raises fundamental questions about the nature of humanity, morality, and the role of empathy in an unjust society. The study analyzes how this conflict shapes the characters' actions and influences the tragic outcomes of the play.

2. Introduction :

The Lower Depths is a powerful realist play written by the renowned Russian writer Maxim Gorky in 1902. Originally titled Na Dne (meaning At the Bottom), the play presents a stark and uncompromising portrayal of life among society's most marginalized and downtrodden individuals.

Set in a dilapidated shelter for the poor, the drama exposes the harsh realities faced by people living at the lowest strata of society—thieves, beggars, prostitutes, alcoholics, and broken intellectuals—who struggle daily with poverty, despair, and loss of dignity. Through this confined setting, Gorky creates a microcosm of society that reflects the moral, economic, and social contradictions of early twentieth-century Russia.

The play is a landmark in the development of social realism and is deeply rooted in Gorky's own experiences of hardship and homelessness. Rather than romanticizing poverty, The Lower Depths presents an unfiltered view of human suffering, revealing how social inequality, economic exploitation, and the absence of compassion trap individuals in a cycle of hopelessness. Gorky challenges the audience to confront uncomfortable truths about society's responsibility toward its weakest members. The play does not offer easy solutions; instead, it forces readers and viewers to reflect on whether truth or illusion provides greater comfort to those crushed by life.

One of the central philosophical debates in The Lower Depths revolves around the conflict between truth and compassion, primarily embodied in the contrasting characters of Luka and Satine. Luka, a wandering pilgrim, offers false hope and comforting lies to the residents of the shelter, believing that kindness and illusion can help people survive unbearable realities. In contrast, Satine represents brutal honesty and intellectual rebellion, asserting that truth—no matter how painful—is essential for human dignity and freedom. This ideological conflict forms the moral backbone of the play and raises profound questions about human values, morality, and social responsibility.

The characters in The Lower Depths are not individual heroes but symbolic representations of social types. Each character carries a tragic past, shattered dreams, and unfulfilled aspirations, reflecting the systemic failures of society. Through realistic dialogue and bleak situations, Gorky reveals how poverty erodes self-respect, destroys relationships, and pushes individuals toward moral decay. At the same time, the play emphasizes the resilience of the human spirit, as the characters continue to seek meaning, love, and hope despite overwhelming despair.

Furthermore, this research explores Gorky's use of realism and symbolism to portray the psychological and emotional states of the characters. The shelter functions as a symbolic space representing social stagnation and spiritual confinement, while the characters themselves serve as social types reflecting broader societal issues. Through naturalistic dialogue and minimal dramatic action, Gorky emphasizes internal conflict over external plot, allowing the audience to engage deeply with the characters' moral struggles and existential despair.

This study asserts that The Lower Depths is not merely a depiction of poverty but a philosophical inquiry into the human condition under extreme social pressure. Its enduring relevance lies in its ability to confront audiences with uncomfortable truths about inequality, compassion, and responsibility. By blending social realism with ethical questioning, Maxim Gorky creates a timeless dramatic work that continues to resonate with contemporary discussions on marginalization and human dignity.

2.1 Choice of subject :

The play The Lower Depths by Maxim Gorky has been chosen for the present study because of its profound social relevance, philosophical depth, and enduring literary value. Written in 1902, the play stands as a powerful representation of social realism and presents an unflinching portrayal of

life among the most marginalized sections of society. The subject has been selected to examine how literature reflects social realities and gives voice to those who are often ignored or silenced in mainstream narratives. Gorky's depiction of human suffering, poverty, and moral conflict makes The Lower Depths an ideal text for critical and academic analysis.

Another significant reason for choosing this subject is the play's realistic treatment of social inequality and economic exploitation. The characters in The Lower Depths are not imaginary creations detached from reality; rather, they are social types drawn from real life—beggars, thieves, prostitutes, laborers, and fallen intellectuals—who represent the tragic consequences of an unjust social system. Studying this play helps in understanding how systemic poverty destroys human dignity and traps individuals in a cycle of despair. The subject allows for a deeper exploration of the relationship between society and the individual, a theme that remains highly relevant in the contemporary world.

The philosophical dimension of the play also plays a crucial role in the selection of this subject. The ideological conflict between Luka's compassionate illusion and Satine's harsh truth raises fundamental questions about human values, morality, and survival. This debate invites critical thinking about whether truth or hope is more essential for sustaining human life under extreme conditions. Such philosophical inquiry enhances the academic value of the study and provides scope for interpreting the play from ethical, psychological, and existential perspectives.

Moreover, The Lower Depths has been chosen because of its importance in the development of modern drama and realism. Gorky's dramatic technique—marked by naturalistic dialogue, minimal plot action, and strong character-driven narratives—offers valuable insights into the evolution of theatre. The play influenced later dramatists and continues to be staged and studied worldwide. Analyzing this work helps in understanding the transition from romanticism to realism in drama and the role of literature as a tool for social critique.

3. Objectives of Study :

1. To study the realistic portrayal of poverty and social injustice in Maxim Gorky's The Lower Depths.
2. To analyze the major themes of the play, especially human suffering, dignity, and moral conflict.
3. To examine the philosophical conflict between truth and illusion as represented by the characters Luka and Satine.
4. To study the characterization of marginalized individuals and their social significance in the play.
5. To evaluate the relevance of The Lower Depths in the contemporary social context.

4. Assumptions :

1. The play The Lower Depths realistically depicts poverty and social injustice prevailing in early twentieth-century society.
2. Human suffering, loss of dignity, and moral conflict are central themes that dominate the dramatic structure of the play.
3. The conflict between truth and illusion significantly influences the thoughts and actions of the

characters, particularly Luka and Satine.

4. The characters in The Lower Depths represent marginalized social groups, highlighting the impact of social and economic oppression.
5. The themes and issues presented in The Lower Depths remain relevant to contemporary society, reflecting ongoing social problems.

5. Research Methodology:

- Information Collection
- Field Study
- Analytical Methods
- Statistical Information
- Conclusions and Recommendations

6. Subject Analysis :

Maxim Gorky's The Lower Depths is a profound social and philosophical drama that examines the lives of people existing at the lowest level of society. The subject of the play revolves around human suffering caused by poverty, social inequality, and moral degradation. Set in a dilapidated night shelter, the play brings together individuals who have been rejected by society and forced to live on its margins. This confined space becomes a symbolic representation of social stagnation, where human beings struggle not only for physical survival but also for dignity, hope, and meaning in life.

The central subject of The Lower Depths is the brutal reality of poverty and its destructive impact on human life. Gorky presents poverty not as an individual failure but as a social condition created by injustice and exploitation. The characters—thieves, beggars, prostitutes, unemployed workers, and fallen intellectuals—are victims of circumstances beyond their control. Their broken lives, shattered dreams, and moral decline expose the cruelty of a society that neglects its weakest members. Through realistic dialogue and situations, Gorky highlights how continuous deprivation erodes self-respect and human values.

Another important subject of the play is the conflict between truth and illusion. This philosophical debate is embodied in the characters of Luka and Satine. Luka believes in offering comforting lies to ease suffering, arguing that hope, even if false, can help people endure pain. On the other hand, Satine advocates truth and intellectual freedom, asserting that false consolation degrades human dignity. This conflict forms the ideological core of the play and raises fundamental questions about morality, compassion, and the role of truth in human life. Gorky does not provide a clear resolution, leaving the audience to reflect on which approach is more humane.

The play also critically analyzes the loss of human dignity under oppressive social conditions. Many characters have lost faith in themselves and society, turning to alcohol, crime, or violence as means of escape. Relationships are marked by cruelty, despair, and emotional numbness. However, beneath this degradation lies a persistent desire for respect, love, and recognition. Gorky suggests that even in the lowest depths of existence, the human spirit continues to seek meaning and self-worth.

Furthermore, The Lower Depths examines social hypocrisy and the failure of moral institutions. Religion, law, and social norms appear powerless to rescue the characters from misery. Luka's departure from the shelter symbolizes the temporary nature of false hope, while the tragic fate of characters like Actor underscores the devastating consequences of illusion without real change. Through this, Gorky emphasizes the need for social reform rather than superficial compassion.

The subject analysis of The Lower Depths reveals that the play is not merely about poverty but about the human condition under extreme social pressure. Gorky uses realism to expose injustice, provoke moral questioning, and challenge societal indifference. The play stands as a timeless critique of social inequality and a powerful call for human empathy and responsibility.

6.1 Themes of the Play :

One of the dominant themes of The Lower Depths is poverty and social injustice. Gorky presents poverty as a structural problem rooted in exploitation and neglect. The characters' lives demonstrate how economic deprivation limits opportunity and perpetuates suffering across generations. Another central theme is the conflict between truth and illusion. Luka's comforting lies contrast sharply with Satine's insistence on truth and intellectual freedom. This debate raises questions about whether hope, even if false, is necessary for survival, or whether truth alone can restore dignity.

The theme of human dignity runs throughout the play. Despite their circumstances, the characters resist complete dehumanization. Their desire for respect and recognition affirms their inherent worth, challenging societal indifference. Finally, the play explores social responsibility. By depicting the consequences of neglect, Gorky implicitly calls for empathy and reform, suggesting that individual suffering is inseparable from collective moral failure.

6.2 Characterization :

Gorky's characters are drawn as social types rather than traditional heroes. Each represents a segment of marginalized society, shaped by economic and social forces. Luka embodies compassion and illusion, offering solace through comforting stories. Satine represents intellectual rebellion and the affirmation of human dignity through truth. Other characters, such as the Actor and Vaska Pepel, illustrate the tragic consequences of broken dreams and limited choices. Their past aspirations contrast sharply with their present despair, highlighting the destructive impact of poverty.

Female characters, including Natasha and Vasilisa, reveal the gendered dimensions of suffering. Their experiences expose additional layers of exploitation and vulnerability. Through this ensemble, Gorky creates a collective portrait of society's underclass, emphasizing shared suffering while preserving individual complexity.

6.3 Philosophical Conflict: Truth vs Illusion :

The philosophical heart of The Lower Depths lies in the debate between truth and illusion. Luka's belief in compassionate deception suggests that hope, even if unfounded, can sustain life. Satine's opposing view asserts that truth is essential for human dignity and freedom. This conflict is not resolved within the play, reflecting Gorky's refusal to offer simplistic answers. Instead, the tragic outcomes experienced by some characters highlight the dangers of illusion when unaccompanied by real change. The debate invites audiences to consider the ethical dimensions of compassion. Is it kinder to comfort with lies or to confront harsh realities? Gorky leaves this question open, encouraging

reflection rather than prescription.

6.4 Dramatic Technique and Realism :

Gorky's dramatic technique reinforces the play's themes. The confined setting creates intensity and emphasizes social stagnation. Dialogue-driven scenes focus on psychological conflict rather than external action. The play's realism is evident in its language, characterization, and situations.

By avoiding melodrama, Gorky achieves authenticity and emotional impact. The shelter becomes a symbolic space representing both physical and spiritual confinement. This approach marked a significant development in modern drama, influencing later realist and socially engaged playwrights.

6.5 Relevance to Contemporary Society :

Although written over a century ago, The Lower Depths remains relevant today. Issues such as homelessness, addiction, and social exclusion persist worldwide. The play's critique of inequality resonates with contemporary audiences confronting similar challenges. By humanizing the marginalized, Gorky challenges stereotypes and fosters empathy. The play encourages reflection on societal responsibility and the ethical implications of neglect. As such, The Lower Depths continues to serve as a powerful reminder of literature's capacity to illuminate social truths and inspire moral awareness.

7. Conclusion:

In conclusion, The Lower Depths by Maxim Gorky stands as one of the most powerful and enduring works of social realist drama. Through its uncompromising portrayal of life among society's most marginalized individuals, the play exposes the harsh realities of poverty, social injustice, and moral degradation. Gorky does not present poverty as a personal failure but as a consequence of an unjust social system that denies individuals dignity, opportunity, and compassion. The night shelter, as the central setting of the play, serves as a symbolic representation of social stagnation and human confinement, where the oppressed are trapped both physically and spiritually.

The study of The Lower Depths reveals that the play goes beyond a mere depiction of suffering and despair. It raises profound philosophical questions about truth, illusion, and human survival. The ideological conflict between Luka and Satine forms the moral and intellectual core of the drama. Luka's compassionate lies offer temporary relief to the characters, while Satine's insistence on truth emphasizes intellectual freedom and human dignity. Gorky deliberately leaves this conflict unresolved, compelling the audience to reflect on whether comforting illusions or harsh truths are more humane in the face of extreme suffering.

Characterization plays a crucial role in conveying the play's message. Each character represents a social type shaped by economic hardship and social neglect. Despite their moral degradation and broken lives, the characters retain a deep longing for respect, love, and meaning. This human element prevents the play from becoming merely pessimistic and instead highlights the resilience of the human spirit. The tragic fate of characters such as the Actor underscores the destructive consequences of false hope when it is not supported by real social change.

Ultimately, The Lower Depths remains a timeless and relevant work of literature. The issues it addresses—homelessness, unemployment, addiction, and social exclusion—continue to

exist in modern societies across the world. As a study, the play provides valuable insights into social realism, human psychology, and ethical dilemmas arising from inequality. Maxim Gorky's The Lower Depths thus stands not only as a reflection of its time but also as a powerful call for empathy, justice, and social responsibility, making it an essential text in the study of modern drama.

8. Bibliography :

1. Gorky, Maxim. (2009). The lower depths (Jenny Covan, Trans.). Penguin Classics. (Original work published 1902)
2. Gorky, Maxim. (1964). Plays. Foreign Languages Publishing House.
3. Baldick, Chris. (2015). The Oxford dictionary of literary terms (4th ed.). Oxford University Press.
4. Esslin, Martin. (1980). The theatre of the absurd (3rd ed.). Pelican Books.
5. Gassner, John. (1968). Masters of the drama. Dover Publications.
6. Hauser, Arnold. (1999). The social history of art (Vol. 4). Routledge.
7. Rayfield, Donald. (1999). Understanding Chekhov: A critical study of Chekhov's prose and drama. University of Wisconsin Press.
8. Styan, John Louis. (1965). Modern drama in theory and practice. Cambridge University Press.
9. Williams, Raymond. (1977). Marxism and literature. Oxford University Press.
10. Wellek, René, & Warren, Austin. (2014). Theory of literature. Harcourt, Brace & World.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. प्रीति ग्रोवर
आचार्य
टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

कृष्णा कुमारी
पी.एच.डी. शोधार्थी
टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

सारांश

प्रस्तुत शोध में "उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन" किया गया हैं। अध्ययन में प्राप्त आंकडों के आधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गए है। प्रस्तुत शोध में हनुमानगढ़ जिले की भादरा, नोहर तहसील के राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों तथा निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों को वर्गीकृत क्रम मे यादृच्छिक विधि के अन्तर्गत लाटरी विधि से चयनित किया गया है। उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की तर्क योग्यता मापने के लिए श्री के. बायनी, समय नियोजन मापने के लिए श्री डी. एन. सनसनवाल तथा आत्म विश्वास मापने के लिए श्री मती रेखा गुप्ता द्वारा निर्मित उपकरणों का प्रयोग किया गया है। निष्कर्ष रूप में उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

मुख्य शब्द- उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी, तर्क योग्यता, समय नियोजन एवं आत्मविश्वास।

प्रस्तावना

विद्यार्थी को भावी देश का नींव माना जाता है उसे स्फुर्तीदायक, नैतिक मूल्य, समय बध्दता वाला भी कहा जाता है क्योकि उनके कधे पर भावी जीवन की जिम्मेदारी होनी है एवं एक सफल नागरिक बनने का कार्यभार भी होता है परतु इस सभी कार्य के लिए उनको स्वयं का ज्ञान होना आवश्यक है उसमें स्वयं यह परिपक्ता होनी चाहिए कि वह किन कुशलताओं योग्याताओं एवं प्रवीणताओं से परिपूर्ण है तथा उनके अन्दर कौन-कौन सी दुर्बलता, कमजोरी एवं कमियां निहित है इन तथ्यो को उनमें स्वीकार करने की क्षमता होनी चाहिए। अर्थात उनमें घनात्मक शक्तियों के साथ-साथ ऋणात्मक शीलगुणों को भी स्वीकार करने की सामर्थ होना चाहिए।

उच्च माध्यमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या निजी विद्यालयों के समानान्तर ही है तथा राजकीय विद्यालयों में शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में राजकीय विद्यालयों में शिक्षा का स्तर निजी विद्यालयों के स्तर से बहुत कम है तथा विद्यालयों में विद्यार्थियों की नामाकंन संख्या में भी लगातार गिरावट आ रही है विद्यार्थियों की संख्या में वृद्धि करने शिक्षा की गुणवत्ता

में विकास करने की समस्या का निराकरण करने के लिए प्रशासन द्वारा राजकीय विद्यालयों के स्तर पर लगातार वृद्धि करने की कोशिश ही जा रही है।

प्रस्तुत शोध में उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों में तर्क योग्यता समय नियोजन एवं आत्मविश्वास की समस्या, उन्हें किसी कार्य के प्रति प्रोत्साहन की कमी, विद्यार्थियों के ऊपर उचित ध्यान ना देना, छात्रों को उचित सुविधा का अभाव आदि के कारण छात्रों में मानसिक स्थिरता आ जाती है।

अतः प्रस्तुत शोध में यह जानने का प्रयास किया गया है कि छात्रों का आत्मविश्वास उनके स्वयं का आकंलन, विश्लेषण पहचान उनके समय नियोजन का उनके व्यवहार को किस प्रकार प्रभावित करना है या नही तथा किस सीमा तक आत्मविश्वास तथा समय नियोजन में अन्तर है।

आत्म विश्वास ऐक ऐसा परिर्वत्य है जिसका महत्व हमारे जीवन के हर क्षेत्र में है वैसे ही समय नियोजन का भी महत्व है चाहे वह परिवार हो या समाजिक वातावरण जैसे विद्यालय, खेल का मैदन प्रतियोगिता आदि जगह पर बहुत महत्व है बिना समय नियोजन एवं आत्मविश्वास के सफलता प्राप्त करना आज के युग में असंभव सा प्रतीत होना है जीवन में समय नियोजन का ना होना छात्रो में असतुष्टि, कुष्ठा, तनाव चिंता ही उत्पन्न नही करता बल्कि जीवन में आत्मघाती कदम उठाने पर की मजबुर कर देता है। राज्य में राजकीय विद्यालयों में छात्रों की मुख्य समस्या कि उनमें निजी विद्यालय के छात्रों की तुलना में सुविधाओं की कमी, शिक्षकों का विद्यार्थीयों की तरफ उचित ध्यान ना देना आदि है ऐसी परिस्थिति में विद्यार्थियो के अंदर आत्मविश्वास की कमी हो सकती है। शोधार्थी द्वारा यह ज्ञात किया गया कि राजकीय व्यवस्था के कारण विद्यार्थियो की मानसिक योग्यता, आत्मविश्वास आदि बातों के कारण समय नियोजन बना कर ना चल पाना। क्या तर्क योग्यता जिसमें अपनी कुशलताओं अकुशलताओं प्रबलता एवं प्रवीणता आदि का ज्ञान उनके आत्म विश्वास एवं समय नियोजन को प्रत्यक्ष का अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करना है या किस तरह से भिन्न होता है कि वे अपने जीवन में आत्मविश्वास एवं सयम नियोजन ही प्रवीणता को बढ़ा सके।

प्रस्तुत शोध का महत्व

विद्यार्थियों का सर्वागीण विकास करना विद्यालय का प्रमुख कार्य होता है। यदि विद्यालय में विद्यार्थियों के संपूर्ण विकास की सामग्री उपलब्ध हो तो ही उसमें तार्किक क्षमता का विकास होता है और वह अपनी बुद्धि एवं योग्यता का उपयोग अपनी शैक्षिक उपलब्धि को विकसित करने में करता है। हर विद्यालय का वातावरण अलग-अलग होता है तथा विद्यार्थियों का मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य विद्यालय के वातावरण पर निर्भर करता है तथा उनकी मूल प्रवृत्तियों, प्रयोग एवं शोधन तथा रूचियों का स्वस्थ्य प्रकाशन एवं परिष्करण भी विद्यालय में ही होता है। विद्यालय का मुख्य कार्य विद्यार्थियों के शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं सामाजिक गुणों का विकास करते हुए उसे इस योग्य बनाना की वह भावी जीवन में अपने दायित्वों का निर्वाह सफलता एवं सच्चाई के साथ कर सकें। अतः स्पष्ट है कि विद्यालय का वातावरण बालक की विकासात्मक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर होना चाहिये।

यदि बालक की इच्छाओं, रुचियों को ध्यान में रखा जाता है तो उस विद्यार्थी का मानसिक स्वास्थ्य उत्तम रहता है किंतु यदि उसे अपने विचारों को व्यक्त करने का अवसर नहीं दिया जाता है और यदि उसकी विशिष्ट रूचियों का विकास करने के लिये पाठ्यक्रम सहयोगी क्रियाओं का आयोजन नहीं किया जाता है, तो उसके मानसिक उन्नति का स्पष्ट रूप से विरोध किया जाता है। इसके अतिरिक्त विद्यालय में निरंतर भय और आतंक का वातावरण एवं जाति-भेद का बोलबाला रहता है, तो बालक का मस्तिष्क असंतुलित हो जाता है। यदि पाठ्यक्रम कब बालकों के लिये समान होता है यदि वह अत्याधिक बोझिल होता है, यदि वह बालकों की मांगों और आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं करता है, यदि वह उनकी रूचियों और क्षमताओं के प्रतिकूल होता है, तो वह उनके मानसिक योग्यता का विकास करने में पूर्णतया असफल होता है। कई अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि बालक का मानसिक स्वास्थ्य, समय नियोजन उत्तम होने पर ही उसमें परिस्थिति के अनुसार सोचने समझने

की क्षमता विकसित होती है तथा वो अपने समक्ष आने वाली समस्त समस्याओं का समाधान कर लेता है। इन समस्याओं का समाधान करने में वह अपनी तार्किक क्षमताओं का भी प्रयोग करता है। संबंधित साहित्य के गहन अध्ययन से शोधकर्ता को तर्क योग्यता, समय नियोजन एवं आत्मविश्वास से संबंधित अध्ययन को ढूंढने में सहायता मिली। तर्क योग्यता चर का शैक्षिक प्रभावशीलता, समस्या समाधान, लक्ष्य निर्धारण, आत्मविश्वास, शैक्षणिक उपलब्धि, संज्ञानात्मक जागरूकता, शिक्षण में रूचि निर्णय क्षमता समायोजन, आदि चरों के साथ अध्ययन किया गया है। इसी तरह समय नियोजन का विद्यालयीन वातावरण शैक्षणिक आर्हता, विद्यालय प्रशासन, विद्यालय प्रभावशीलता, शिक्षक प्रबंधन, कार्य संपादन, शैक्षिक उपलब्धि, कार्य सन्तुष्टि आदि चरों के साथ अध्ययन किया गया एवं ऐसे निष्कर्ष प्राप्त हुए। इसी प्रकार आत्मविश्वास का तर्क योग्यता, समस्या समाधान योग्यता, शिक्षण दक्षता, कार्य सन्तुष्टि, तनाव, रूचि, क्रोध लिंग, मानसिक स्वास्थ्य, आयु, संवेगात्मक बुद्धि आदि चरों के साथ अध्ययन किया गया है।

शोध कथन :-

"उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन"

अध्ययन में प्रस्तुत तकनीकी शब्दों की व्याख्या -

तर्क योग्यता :-

तर्क चिंतन का उत्कृष्ट रूप और जटिल मानसिक प्रक्रिया है इसे साधारणतः औपचारिक नियमों से सबंद्ध किया जाता है। तर्कणा में गत अनुभवों का इस प्रकार संयोजन होता है कि समस्या समाधान हो सके यह संयोजन तभी होता है जब गत समाधानों के पुनरोत्पादन से समस्या समाधान नहीं होता है। डेवर ''तर्क चिन्तन की वह प्रक्रिया है जिसका निष्कर्ष होता है अथवा सामान्य नियमों के आधार पर समस्या समाधान होता है। कार्य करण द्वारा समस्या का निराकरण तभी होता है जब संयुक्त रूप से प्रयास करके विचारात्मक प्रारूप तैयार किया जाये एवं समस्या के होने या निराकरण के लिए प्रयास सतत किया जावे।

समय नियोजन :-

समय नियोजन का हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण है समय को नियोजित करके यदि आप कोई कार्य को समय पर पूरा करते है तो आप में समय नियोजन की या समय पर कार्य करने की आदत हो जाती है एक समय की योजना बना के कार्य करने से जीवन में समय का सदुपयोग करते जाते है और जीवन में में आगे बढ़ते जाते है समय नियोजन के सत्य काम करके जीवन में सफलता की ऊंचाइयों को छु सकते है।

आत्म विश्वास :-

आत्मविश्वास दो शब्दों से मिलकर बना है-आत्फविश्वास अर्थात स्वयं में विश्वास स्वयं की क्षमताओं, योग्यताओं को भलीभांति पहचाना और उसके अनुकूल अपने कार्यो को करना ही आत्मविश्वास कहलाता है।

बसन्ना के अनुसार-

सामान्य रूप में आत्मविश्वास में अनुभव की जाने वाली कठिनाईयों को प्रभावशाली तरीके से निराकरण करने तथा सभी क्रियाओं को सही तरीकों से चलाने की एक योग्यता है।

मफी- आत्मविश्वास व्यक्ति का वह रूप है जिसने वह स्वयं को जानता है।

अध्ययन के उद्देश्य :-

(1) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(2) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की समय नियोजन का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(3) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकपनाएँ :-

(1) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

(2) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की समय नियोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

(3) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की आत्मविश्वास में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

न्यादर्श :- प्रस्तुत शोध में न्यादर्श के रूप में हनुमानगढ़ जिले की भादरा, नोहर तहसील के राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों तथा निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत् 300 विद्यार्थियों को यादृच्छिक निर्देशन विधि से चयनित किया गया है।

शोध में प्रयुक्त उपकरण :-

1. तर्क योग्यता मापनी - (श्री के. बायनी)
2. समय नियोजन मापनी - (श्री डी. एन. सनसनवाल)
3. आत्म विश्वास मापनी (श्रीमती रेखा गुप्ता)

प्रदत्तों का विश्लेषण व विवेचन -

(1) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के तार्किक योग्यता में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

सारणी संख्या - 1.1

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों की विद्यार्थियों के तार्किक योग्यता	300	46.33	11.501	1.503	स्वीकृत
निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की तार्किक योग्यता	300	47.25	11.637		

व्याख्या :- परिकल्पना संख्या 1 के राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की तार्किक योग्यता में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की तार्किक योग्यता के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से कम है। अतः यहाँ पर निर्धारित परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की तार्किक योग्यता में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

(2) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो की समय नियोजन में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

सारणी संख्या - 2

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का समय नियोजन	300	139.85	12.485	0.753	स्वीकृत
निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का समय नियोजन	300	139.07	13.095		

परिकल्पना संख्या 2 के अनुसार राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की समय नियोजन में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की समय नियोजन के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से कम है। अतः यहाॅं पर निर्धारित परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों के समय नियोजन में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

(3) राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियो के आत्मविश्वास में कोई सार्थक अन्तर नहीं हैं।

सारणी संख्या - 3

चर	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	सहसम्बन्ध	सार्थकता का स्तर
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का आत्मविश्वास	300	27.88	8.427	1.801	स्वीकृत
निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का आत्मविश्वास	300	26.54	9.747		

परिकल्पना संख्या 3 के अनुसार राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आत्मविश्वास में अन्तर देखने हेतु विश्लेषित आकड़ों के आधार पर टी का मान ज्ञात किया गया जिसके अनुसार राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आत्मविश्वास के मध्यमान व प्रमाप विचलन के आधार पर प्राप्त टी मान सार्थकता के स्तर 0.01 के सारणी मान से कम है। अतः यहाॅं पर निर्धारित परिकल्पना स्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि राजकीय व निजी उच्च माध्यमिक विद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की आत्मविश्वास में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।

शैक्षिक सुझाव-

1. विद्यार्थियों को नियमित एवं योजनाबद्ध अध्ययन की आदत डालनी चाहिए।
2. आत्म-प्रेरणा को बढ़ाकर लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निरंतर प्रयास करना चाहिए।

3. कठिनाइयों में सकारात्मक सोच बनाए रखनी चाहिए।

4. सहपाठियों के साथ समूह अध्ययन का अभ्यास करना चाहिए।

5. पढ़ाई और मनोरंजन के बीच संतुलन बनाना आवश्यक है।

6. शिक्षा में प्रौद्योगिकी का रचनात्मक उपयोग करना चाहिए।

भावी शोध हेतु सुझाव

1. प्रस्तुत शोध में मात्र 600 विद्यार्थियों को सम्मिलित किया गया है। इससे बड़ा न्यादर्श भी लेकर अध्ययन किया जा सकता है।

2. प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकत्री ने राजकीय व निजी राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों को ही शामिल किया है। आगामी शोध के लिए महाविद्यालय के विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास के सम्बन्ध को लेकर भी लिया जा सकता है।

3. विद्यालयों के विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास पर प्रभाव का अध्ययन राष्ट्रीय स्तर पर बड़ा न्यादर्श लेकर पुनः किया जा सकता है।

4. केन्द्रीय विद्यालयों के विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास पर प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है।

सन्दर्भ सूची

1. आर्य पी. के. ''आत्मविश्वास सफलता की सीढी है'' हिन्दी पुस्तिका कक्षा 6, राजस्थान पुस्तक मण्डल
2. कपिल, एच. के. (2006), सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
3. कौर नवजोत, कौर रशमीत ''किशोरों के आत्मविश्वास पर पारिवारिक वातावरण के प्रभाव का अध्ययन" एजुकेशन रिसर्च
4. डॉ. शर्मा, वी. एस. ''शिक्षा मनोविज्ञान'' साहित्य प्रकाशन आगरा (2004)
5. डॉ. अरोड़ा रीता, सुदेश मारवाह (2005) ''शिक्षा मनो विज्ञान एवं सांख्यिकी'' शिक्षा प्रकाशन जयपुर पृश्ठ संख्या (407-430)
6. गर्ग, के.पी. (1990): डेवेलपमेन्ट ऑफ एबीलिटी टू रिजनिंग इन स्कूल, न्यू दिल्ली कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, पृष्ठ संख्या-30
7. पद्मा (2012). उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का उनकी तार्किक क्षमता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, एम. फिल. लघुशोध प्रबंध, सी.वी.रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छ.ग.
8. सिंह, रामपाल और शर्मा, ओ.पी. (2008), शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकीय, आगरा अग्रवाल पब्लिकेशन।
9. सुखिया, एस.पी. (1990) शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व. आगराः विनोद पुस्तक मन्दिर।

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

शिक्षा स्नातक संस्थानों में अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की साम्प्रदायिकता तथा जातिवाद के प्रति अभिवृत्ति : एक अध्ययन

डॉ. सुमन रानी
शोध निर्देशिका -
स्ह आचार्य, शिक्षा विभाग, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर

पवनप्रीत कौर
शोधार्थी - टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर

सार - संक्षेप

शिक्षा के द्वारा बालक की समस्त शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का विकास होता है। बालक जन्म से लेकर अन्तिम समय तक परिवार, पड़ौस, वातावरण, विद्यालय आदि स्त्रोतों से शिक्षा प्राप्त करता रहता है, जिससे बालक में विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों का विकास होता है।

साम्प्रदायिकता

आपसी मत भिन्नता को सम्मान देने की बजाए विरोधाभास का उत्पन्न होना अथवा ऐसी परिस्थितियों का बनना, जिससे व्यक्ति किसी अन्य धर्म के विरोध में अपना व्यक्तव्य प्रस्तुत करे, साम्प्रदायिकता कहलाता है।

जातिवाद :- जातिवाद एक ऐसी भावना है, जिससे प्रेरित होकर व्यक्ति अपनी जाति और उसके उत्थान को ही सब कुछ मानता है। इसके लिए वह देश और समाज के हितों को भुलाकर दूसरी जाति के लोगों के विरोध में खड़े हो जाते हैं। अपनी जाति में विश्वास के कारण इतने अंधे हो जाते हैं कि वह मानवता को भूल जाते हैं।

साम्प्रदायिकता एवं जातिवाद जैसी संकीर्णताओं को समाप्त करने की आवश्यकता है तभी देश का विकास सम्भव हो सकता है। शिक्षा के माध्यम से ही इन समस्याओं का समाधान हो सकता है।

अध्ययन की आवश्यकता एव महत्त्व

देश के नागरिकों को साम्प्रदायिकता तथा जातिवाद जैसी संकीर्णताओं से बचाने के लिए उन्हें इस हेतु जागरूक करना अनिवार्य है। यह जागरूकता शिक्षा के माध्यम से ही लाई जा सकती है। परन्तु सर्वप्रथम शिक्षकों को इस हेतु जागरूक करना अनिवार्य है। हमारे देश की एकता और अखण्डता के लिए साम्प्रदायिकता के बाद दूसरा सबसे बड़ा खतरा है जातिवाद। जातिवाद की समस्या ने हमारे देश को कभी भी सशक्त, सम्पन्न और अखण्ड राष्ट्र नहीं बनने दिया है। देश का विकास तभी सम्भव है जब देश में व्याप्त साम्प्रदायिकता एवं जातिवाद जैसी संकीर्णताओं को समाप्त किया जाए और इन समस्याओं का समाधान शिक्षा के माध्यम से ही किया जा सकता है।

शोध के उद्देश्य

1. शिक्षा स्नातक संस्थानों में अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की साम्प्रदायिकता के प्रति अभिवृत्ति को जानना

2. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले प्रशिक्षणार्थियों की जातिवाद के प्रति अभिवृत्ति को जानना

3. शिक्षा स्नातक संस्थाओं में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले कला संकाय, विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के प्रशिक्षणार्थियों की जातिवाद तथा साम्प्रदायिकता के प्रति अभिवृत्ति को जानना है।

प्रस्तुत शोध की परिकल्पनाएँ

1. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले प्रशिक्षणार्थियों की साम्प्रदायिकता तथा जातिवाद के प्रति अभिवृत्ति में लिंग के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

2. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले कला संकाय, विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के प्रशिक्षणार्थियों की जातिवाद तथा साम्प्रदायिकता के प्रति अभिवृत्ति में लिंग के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

3. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले प्रशिक्षणार्थियों की जातिवाद तथा साम्प्रदायिकता के प्रति अभिवृत्ति में क्षेत्र के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

4. शिक्षा स्नातक संस्थानों में प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले कला संकाय, विज्ञान संकाय एवं वाणिज्य संकाय के प्रशिक्षणार्थियों की साम्प्रदायिकता तथा जातिवाद के प्रति अभिवृत्ति में क्षेत्र के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध विधि

शोध कार्य के लिए अध्ययन विधि एक- संरचना और व्यूह रचना तैयार करती है। प्रस्तुत अध्ययन में मूल रूप से साम्प्रदायिकता, जातिवाद के प्रति प्रशिक्षणार्थियों की अभिवृत्ति को जानने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध के लिए शोध कार्य की प्रकृति को दृष्टिगोचर करते हुए सर्वेक्षण विधि को प्रयुक्त करने का निश्चय किया है।

निष्कर्ष

साम्प्रदायिकता की भावना प्रत्येक मनुष्य के उसके धर्म व सम्प्रदाय के साथ मजबूती से बाँधे रखती है। प्रत्येक व्यक्ति की अपने सम्प्रदाय में आस्था होती है। परन्तु अपने सम्प्रदाय में आस्था के साथ-साथ दूसरों के सम्प्रदाय का सम्मान करना भी जरूरी है। जब तक व्यक्ति में इस प्रकार की सकारात्मक अभिवृत्ति है तो ठीक है। लेकिन यदि व्यक्ति में इस प्रकार की कट्टरता हो तो यह राष्ट्र के लिए खतरनाक हो सकती है।

ठीक इसी प्रकार से प्रत्येक व्यक्ति का अपनी जाति से लगाव होता है। और वह अपनी जाति का सम्मान करता है। परन्तु जब उसमें जातिवाद की भावना जागृत हो जाती है, तो वह अपनी जाति के उत्थान और विकास के लिए राष्ट्र के हितों की अवहेलना करना प्रारम्भ कर देता है। जो राष्ट्र की शान्ति और उसके विकास में बाधा का कारण बनता है। विद्यार्थियों की जातिवाद की भावना से ऊपर उठाने के लिए देश के भावी अध्यापकों को इस हेतु जागृत करना अनिवार्य है।

भावी शोधकर्ताओं हेतु सुझाव

विभिन्न विद्यालयों के विद्यार्थियों की साम्प्रदायिकता व जातिवाद के प्रति अभिवृत्ति को जानने की आवश्यकता है इससे आगामी अध्ययन किया जाना चाहिए। विभिन्न विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की जातिवाद व साम्प्रदायिकता के प्रति अभिवृत्ति का भी आगामी शोध के अन्तर्गत अध्ययन सम्भव है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा. जी. आर. टीचर एज्यूकेशन इन इण्डिया, अनमोल पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1992
2. भार्गव महेश- मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन, हर प्रसाद भार्गव बुक हाउस, शैक्षिक प्रकाशन, आगरा, 1997
3. मंगल, डॉ. अंशु बरौलिया, डॉ. ए. अग्रवाल- शैक्षिक अनुसंधान की विधियाँ व शैक्षिक सांख्यिकी, संस्करण 2007, राधा प्रकाशन मन्दिर, आगरा।
4. सुधिया एवं मल्होत्रा, शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्त्व, 1990-91
5. सक्सेना एन. आर. मिश्रा- अध्यापक शिक्षा, आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ 1997
6. शर्मा आर. ए., शिक्षा के तकनीकी आधार, मेरठ, आर. लाल. बुक डिपो, 2002

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Financial Inclusion 2.0: Bridging the Access-to-Usage Gap Through Digital Infrastructure and Policy Convergence in India and Africa

Jagdish Rai
(Research Scholar) Department of Commerce,
Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala
University, Jhunjhunu, Rajasthan
raijagdishrai@gmail.com

Dr. Aman Gupta
(Assistant Professor), Department of Commerce,
Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala
University, Jhunjhunu, Rajasthan
amangupta76@gmail.com

Abstract:

Financial inclusion has become a central pillar for sustainable economic growth and poverty alleviation globally. India, through its landmark Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana (PMJDY) initiated in 2014, scaled account access from 14.72 crore to 35.27 crore between 2015–16 and 2019–20, raising average balances from ₹ 1,065 to ₹ 2,725 while also expanding financial products such as insurance (PMJJBY and PMSBY) and pension schemes (Atal Pension Yojana). However, a persistent access-to-usage gap limits the impact of these programs. Comparative insights from African digital finance ecosystems demonstrate that agent density, interoperability, and pricing significantly influence transaction behavior and resilience. This paper synthesizes Indian program outcomes, composite Financial Inclusion Index movements, and lessons from Africa's mobile money revolution, proposing a comprehensive policy-operations framework aligned with India's National Strategy for Financial Inclusion (NSFI) 2019–2024 to close the gap between account ownership and active, beneficial financial participation.

Keywords: *Financial inclusion, PMJDY, digital finance, capability, Business Correspondent model, risk protection, gender equity, NSFI, usage gap, consumer protection.*

1. Introduction

Financial inclusion entails ensuring affordable, timely access to a range of financial products and services—such as savings, credit, insurance, pensions, payments—to vulnerable and low-income groups by mainstream financial institutions in a transparent and safe manner (RBI, 2019). Access to formal financial services protects low-income households from exploitation by informal providers and provides tools to smooth consumption, build productive assets, and participate fully in the economy (Malik & Yadav, 2022).

In India, the journey towards widespread financial inclusion spans decades of policy interventions,

starting from bank nationalization in the late 1960s, evolving with innovations like the Kisan Credit Card (1998), no-frills accounts (2004), Business Correspondent (BC) networks (2006), and culminating in large-scale schemes like PMJDY, PMSBY, PMJJBY, and APY launched post-2014 that aim to cover every adult Indian with basic financial services (Malik & Yadav, 2022). While remarkable access expansion has been achieved, growing evidence indicates a persistent gap whereby users hold accounts but do not actively use them or access the full suite of financial products with which policymakers seek to empower them (Malik & Yadav, 2022). This phenomenon has been described as the access-to-usage gap.

This paper aims to present a holistic synthesis of India's inclusion achievements and gaps, analyzing program statistics and inclusion indices up to 2020. It also draws comparative lessons from mobile money-driven inclusion in Africa, where agent networks, technological interoperability, and responsive policies have rapidly expanded usage and built resilience during crises (Simatele, 2021). The paper closes by proposing a framework aligned with India's NSFI 2019–2024 pillars emphasizing integrated infrastructure, capacity building, customer protection, and targeted outreach to convert access into sustained, beneficial financial engagement (RBI, 2019).

2. Historical Evolution and Policy Milestones in India

India's commitment to financial inclusion can be traced back to the nationalization of Life Insurance companies in 1956 and commercial banks in 1969 and 1980, which expanded the reach of state-owned financial institutions to underserved populations (Malik & Yadav, 2022). Over the decades, the Reserve Bank of India (RBI) and the government introduced various policies to expand credit and banking access, including the Lead Bank Scheme and mandated Priority Sector Lending targeting agriculture and low-income groups. A pivotal moment was the introduction of the Kisan Credit Card (KCC) in 1998 to provide hassle-free credit to farmers (Malik & Yadav, 2022).

The 2000s witnessed further efforts such as the launch of zero balance no-frills accounts in 2004 and the BC model in 2006 to provide doorstep banking to rural India (Malik & Yadav, 2022). However, despite creating infrastructure, significant populations remained outside the formal financial system due to affordability barriers, lack of documentation, and trust deficits (Malik & Yadav, 2022). In August 2014, the Indian government launched the landmark Pradhan Mantri Jan Dhan Yojana (PMJDY), leading to a record 18.1 million accounts opened within the first week and aiming to provide universal basic financial access (Malik & Yadav, 2022). Subsequent schemes—Pradhan Mantri Mudra Yojana (PMMY), Pradhan Mantri Suraksha Bima Yojana (PMSBY), Pradhan Mantri Jeevan Jyoti Bima Yojana (PMJJBY), and Atal Pension Yojana (APY)—were layered to enhance credit, insurance, and pension coverage across vulnerable groups (Malik & Yadav, 2022).

Complementing these has been the drive to digitize financial services via Aadhaar-enabled payments, Unified Payments Interface (UPI), and a growing payments infrastructure under National Payments Corporation of India (NPCI) to enhance ease of onboarding and transaction efficiency (RBI, 2019).

Despite these advances, available evidence reveals a persistent usage gap characterized by

dormant accounts and low adoption of credit and insurance products (Malik & Yadav, 2022).

3. Measuring Financial Inclusion in India: The Composite Financial Inclusion Index

To systematically evaluate financial inclusion, the Reserve Bank of India developed a multidimensional Financial Inclusion Index (FII) capturing three pillars: penetration (number of accounts per adult), availability (number of banking outlets and ATMs), and usage (deposit and credit volumes) (RBI, 2019). FII scores range from 0 (complete exclusion) to 1 (complete inclusion), with India falling within the medium inclusion bracket of 0.4–0.6 (Malik & Yadav, 2022).

Empirical analysis reveals an average positive shift of +0.117 in the FII after PMJDY and allied program launches post-2014, underscoring policy impact (Malik & Yadav, 2022). However, disaggregated data shows penetration outpaced availability and usage, signaling targeted strategies to address the activation deficit are vital.

The FII framework has been adapted and extended by several researchers to include socioeconomic determinants such as literacy rates, income levels, urbanization, and infrastructure spread, providing nuanced insights for policy calibration at state and district levels (Goel, 2017; Mondal, 2024).

4. Program Uptake and Impact: Quantitative Evidence

4.1 PMJDY Account Growth and Usage

By March 2020, PMJDY had led to the opening of 35.27 crore accounts with total deposits reaching ¹ 96,107 crore. The average account balance rose from ¹ 1,065 in 2015–16 to ¹ 2,725 in 2019–20, suggesting growing activation albeit with turbulence due to dormancy issues (Malik & Yadav, 2022). RuPay debit card issuance doubled to almost 28 crores during this period, providing payment instrument coverage for new entrants (Malik & Yadav, 2022).

Financial Year	PMJDY Accounts (Crore)	Balance Average (¹)
2015-16	14.72	1065
2016-17	21.43	1665
2017-18	28.17	2235
2018-19	31.44	2497
2019-20	35.27	2725

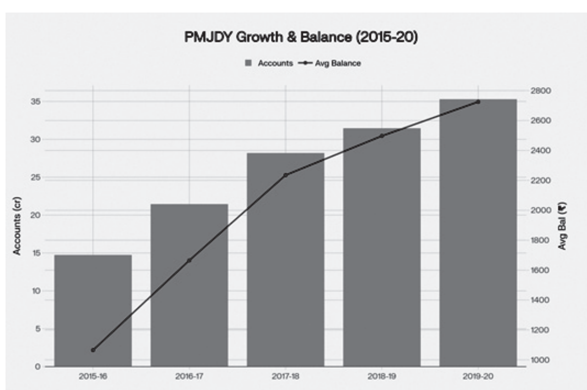

4.2 Credit Provision under PMMY and Other Schemes

Pradhan Mantri Mudra Yojana facilitated micro-credit to entrepreneurs, disbursing almost ¹ 3.3 lakh crore cumulatively by 2019–20, improving small business formalization and credit access (Malik & Yadav, 2022). Kisan Credit Cards continued to expand credit to small and marginal farmers (Malik & Yadav, 2022).

4.3 Social Security Product Adoption

PMJJBY life insurance claims rose from 22,212 in 2015–16 to 35,997 in 2017–18, while PMSBY accident insurance claims witnessed a marked increase from 2,757 to 15,746 in 2018–19, albeit with regional and demographic uptake variances (Malik & Yadav, 2022).

4.4 Old Age Pension Growth

Under Atal Pension Yojana, subscriber numbers rose nearly tenfold to 228.61 lakh by 2020, and assets under management grew sharply to ¹ 12,696 crore, showing increasing recognition of formal retirement products (Malik & Yadav, 2022).

5. Comparative Insights from African Digital Finance Ecosystems

Africa's mobile money revolution showcases the transformative power of dense agent networks, interoperable payment platforms, and customer-friendly fee policies in driving active financial service usage and economic resilience (Simatele, 2021). By 2024, the continent boasts approximately 28 million registered mobile money agents, with nearly 10 million actively transacting monthly, primarily serving rural and previously unbanked populations (LinkedIn, 2025). Seamless interoperability across mobile money platforms fosters ease of transfer and boosts ecosystem participation, while expanding services like microloans, savings accounts, and insurance through mobile wallets has enhanced financial empowerment, especially in countries like Kenya, Ghana, and Nigeria, which lead in adoption and transaction volumes (MarketResearch.com, 2025; GSMA, 2025). The COVID-19 pandemic further accelerated mobile money adoption, exemplified by Uganda's rise to over 27 million accounts, with balances swelling due to government relief disbursements and shifts toward digital transactions, underscoring the critical role of mobile money in mitigating economic shocks (Simatele, 2021). For India, replicating these successes involves prioritizing robust rural agent networks to ensure last-mile service availability, enforcing interoperability for frictionless payments, and implementing equitable fee structures to incentivize repeat usage among low-income groups (Simatele, 2021; RBI, 2019; Malik & Yadav, 2022). Moreover, regulatory frameworks balancing innovation with consumer protection, alongside targeted financial literacy efforts, are essential to sustain trust and elevated participation. Ultimately, Africa's integrated approach offers valuable lessons for India's bank-led inclusion model to evolve from mere account penetration to vibrant, inclusive financial ecosystems that empower the underserved.

6. Technological Innovations and the Regulatory Landscape in India

India boasts a robust digital finance infrastructure, including:

- Aadhaar biometric identities enabling e-KYC,
- Payment systems such as UPI, IMPS, NEFT, and RTGS under NPCI,

- Regulatory sandbox environments encouraging FinTech innovation,
- Differentiated banking licenses for Small Finance Banks and Payments Banks,
- The mandate of interoperable acceptance devices and QR-code payments (RBI, 2019).

These mechanisms have lowered cost-to-serve and improved onboarding but require partnerships with BCs and tailored literacy programs to translate access into full user engagement (RBI, 2019).

7. Challenges and Policy Imperatives to Bridge Access-to-Usage Gap

Key challenges include:

- Dormancy and limited awareness of benefits
- Product misalignment with intermittent incomes,
- Insufficient agent network coverage and operation issues,
- Digital literacy and trust deficits, and barriers faced by vulnerable segments.

Policy recommendations emphasize:

- Strengthening and formalizing the BC network with certification and appropriate incentives,
- Expanding outcome-based financial literacy via CFLs and digital kiosks,
- Leveraging JAM infrastructure for seamless DBT and direct transfer payouts,
- Transparent pricing disclosures including APR/EIR norms,
- Tiered e-KYC for low-friction access without compromising security,
- Robust grievance redress and consumer protection frameworks (RBI, 2019).

8. COVID-19 Pandemic and Financial Inclusion Resilience

The COVID-19 pandemic accelerated the adoption of digital payments dramatically in India, serving as a structural catalyst that transformed the nation's financial landscape by fostering rapid shifts towards contactless financial services amidst mobility restrictions and health concerns (Malik & Yadav, 2022; Simatele, 2021). Leveraging the Jan Dhan–Aadhaar–Mobile (JAM) trinity infrastructure, the government enabled timely and direct delivery of emergency social assistance benefits to millions of vulnerable urban and rural households, greatly reducing leakages and delays (World Bank & CCAF, 2020). Concurrently, regulatory measures relaxed fee structures, heightened transaction limits, and streamlined e-KYC processes to facilitate the onboarding of new digital users remotely, particularly helping those previously excluded due to physical or procedural barriers (RBI, 2019; GPFI, 2021). The surge in digital payment platforms such as Unified Payments Interface (UPI), Aadhaar Enabled Payment System (AEPS), and mobile wallets led to record transactional volumes, with growing penetration beyond metro areas (VNsgu, 2025; PIB, 2024). However, the crisis also exposed systemic challenges, including agent liquidity constraints, digital infrastructure gaps in remote areas, and persistent inequalities in access and usage among older, less literate, and socioeconomically disadvantaged groups, underscoring the need for complementary financial literacy campaigns and durable agent network

support schemes (Malik & Yadav, 2022; Sultana, 2023). Overall, the pandemic revealed digital finance's dual role as an enabler of inclusion and a stress test for resilience, emphasizing that sustained regulatory commitment and ecosystem strengthening are crucial to translating accelerated adoption into lasting and equitable financial inclusion (RBI, 2019; Simatele, 2021; World Bank & CCAF, 2020).

9. Conclusion

India's expanded access to formal financial services post-2014 is a watershed achievement in global inclusion, but the challenge remains converting account ownership into daily, meaningful financial engagement benefitting the most excluded. Integrated policy, technological innovation, and focused capacity building as per the NSFI 2019–2024 roadmap provide a comprehensive way forward. Comparative African lessons reinforce the primacy of interoperable infrastructure, agent networks, and customer-friendly pricing regimes in achieving usage-led inclusion (Malik & Yadav, 2022; RBI, 2019; Simatele, 2021).

References

1. Beleulmi, H. (2024), Women's financial inclusion and empowerment in developing economies, Journal of Economic Development, 45(3), 234–256
2. Drishti IAS. (2025), Financial inclusion in India: Current status and regional disparities, New Delhi: Drishti IAS Publications
3. EY (Ernst & Young) (2025), Financial inclusion survey 2025: Access versus usage patterns in emerging markets, London: EY Global Limited
4. Goel, S. (2017), Socioeconomic determinants of financial inclusion in rural India, Indian Journal of Applied Economics, 28(4), 512–534
5. GPFI (Global Partnership for Financial Inclusion) (2021), Digital financial services and COVID-19 response in emerging markets, Washington, DC: GPFI Secretariat
6. GSMA (2025), The state of mobile money in Africa 2025, London: GSM Association
7. LinkedIn (2025), Mobile money agent networks in Africa: Growth and trends, LinkedIn Insights Report
8. Malik, F. A., & Yadav, D. K. (2022), Financial inclusion schemes in India, Singapore: Springer Nature Singapore
9. MarketResearch.com (2025), Digital finance adoption in sub-Saharan Africa, New York: MarketResearch.com Inc
10. Mondal, A. (2024), Extended FII framework: Incorporating infrastructure and literacy indicators for district-level analysis, Reserve Bank of India Bulletin, 78(2), 45–68
11. PIB (Press Information Bureau) (2024), Digital payments in India: UPI and AEPS transaction growth statistics, New Delhi: Ministry of Information and Broadcasting
12. RBI (Reserve Bank of India) (2019), National strategy for financial inclusion 2019–2024, Mumbai: Reserve Bank of India
13. RBI (Reserve Bank of India) (2024), Financial Inclusion Index 2024: State and district level analysis, Mumbai: Reserve Bank of India
14. Sarma, M. (2024), Regional disparities in financial inclusion: Evidence from state-level data. Economic and Political Weekly, 59(15), 78–92

15. Simatele, M. C. (Ed.) (2021), Financial inclusion: Basic theories and empirical evidence from African countries, AOSIS Publishing - https://doi.org/10.4102/aosis.2021.BK255
16. Social Welfare Vikaspedia (2025), Financial inclusion among scheduled castes and tribes: Barriers and interventions. New Delhi: Ministry of Social Justice and Empowerment
17. Sultana, N. (2023), Digital divide and financial inclusion resilience: Post-pandemic evidence from low-income households. Development Policy Review, 41(6), 523–547.
18. VNsgu, P. (2025), Transaction volumes in digital payments: UPI, AEPS, and mobile wallet adoption patterns. Economic Times Digital Finance Report, 2025
19. World Bank & CCAF (Cambridge Centre for Alternative Finance) (2020), The role of digital finance in pandemic response and economic recovery, Washington, DC: World Bank Group

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

डिजिटल युग में स्मार्ट क्लासरूम और प्रभावी शिक्षक के गुण : शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Dr. Vaishali Singh
Assistant Professor
Education Department
Smt- Anar Devi T.T. College, Bakharana (Kotputli) Jaipur Rajasthan – 303108
Email Id : Vaishalisingh6433@gmail.com

सारांश

डिजिटल युग में शिक्षा प्रणाली तीव्र गति से परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को पारंपरिक कक्षा की सीमाओं से बाहर निकालकर एक नवीन और व्यापक स्वरूप प्रदान किया है। स्मार्ट क्लासरूम इसी परिवर्तन का एक सशक्त उदाहरण है, जिसमें तकनीकी संसाधनों के माध्यम से शिक्षण को अधिक प्रभावी, रुचिकर और सहभागितापूर्ण बनाया जाता है।

हालाँकि, यह मान लेना उचित नहीं होगा कि केवल तकनीक के प्रयोग से ही शिक्षा की गुणवत्ता में स्वतः सुधार हो जाता है। वास्तव में, स्मार्ट क्लासरूम की सफलता काफी हद तक शिक्षक की दक्षता, दृष्टिकोण और शिक्षण शैली पर निर्भर करती है। डिजिटल युग में शिक्षक की भूमिका केवल ज्ञान प्रदाता की नहीं रह गई है, बल्कि वह एक मार्गदर्शक, सहायक और प्रेरक के रूप में उभरकर सामने आया है।

यह शोध पत्र डिजिटल युग में स्मार्ट क्लासरूम की अवधारणा, उसके शैक्षिक महत्व तथा शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया पर उसके प्रभाव का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। साथ ही, इसमें प्रभावी शिक्षक के आवश्यक गुणों पर भी विस्तार से चर्चा की गई है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि तकनीक और शिक्षक के गुणों के समन्वय से ही गुणवत्तापूर्ण शिक्षा संभव है। यह अध्ययन समकालीन शिक्षा व्यवस्था के लिए उपयोगी और मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

प्रस्तावना

21वीं सदी को ज्ञान और सूचना का युग कहा जाता है। इस युग में शिक्षा केवल पुस्तकों और कक्षा तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म, ऑनलाइन संसाधन और स्मार्ट तकनीकों के माध्यम से शिक्षा का स्वरूप व्यापक और बहुआयामी हो गया है। सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तनों ने शिक्षा की परंपरागत रूपरेखा को चुनौती दी है और इसे अधिक लचीला, सहभागी और विद्यार्थिकेंद्रित बनाने की आवश्यकता उत्पन्न की है।

स्मार्ट क्लासरूम इसी बदलाव का प्रतीक है। यह केवल तकनीकी उपकरणों का संग्रह नहीं है, बल्कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका और शिक्षण विधियों में भी मूलभूत परिवर्तन का संकेत देता है। स्मार्ट क्लासरूम में शिक्षक का कार्य केवल पाठ्यक्रम की जानकारी देने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह विद्यार्थियों को मार्गदर्शन देने, उनकी जिज्ञासा

बढ़ाने और उन्हें आत्मनिर्भर अधिगम के लिए प्रेरित करने वाला एक कुशल संचालक बन जाता है।

इस अध्ययन का उद्देश्य डिजिटल युग में स्मार्ट क्लासरूम की भूमिका, उसके शैक्षिक प्रभाव और प्रभावी शिक्षक के आवश्यक गुणों का विश्लेषण करना है। साथ ही यह शोध शिक्षकों और शिक्षा नीति निर्माताओं के लिए मार्गदर्शन भी प्रदान करता है कि तकनीक और शिक्षक की दक्षता का समन्वय कैसे शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ा सकता है।

कुंजी शब्द : डिजिटल युग, स्मार्ट क्लासरूम, प्रभावी शिक्षक, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया, शैक्षिक तकनीक, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, विद्यार्थी-केंद्रित अधिगम, नवाचारी शिक्षण विधियाँ।

डिजिटल युग और शिक्षा का बदलता स्वरूप

डिजिटल युग ने शिक्षा के परंपरागत स्वरूप को मौलिक रूप से बदल दिया है। आज सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (प्ब्ज) के माध्यम से ज्ञान का आदान-प्रदान बहुत तेज़ और सुलभ हो गया है। इंटरनेट, कंप्यूटर, टैबलेट, स्मार्टफोन और विभिन्न शैक्षिक ऐप्स के उपयोग से विद्यार्थी किसी भी समय और किसी भी स्थान से सीख सकते हैं।

इस बदलाव ने शिक्षा के उद्देश्यों को भी व्यापक किया है। केवल तथ्यों और सूचनाओं का संचरण अब पर्याप्त नहीं माना जाता। वर्तमान शिक्षा का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थियों में सृजनात्मक सोच, समस्या समाधान क्षमता, आलोचनात्मक विश्लेषण और आत्मनिर्भर अधिगम को बढ़ावा देना है।

डिजिटल युग में शिक्षा अब पारंपरिक शिक्षक-केंद्रित प्रणाली से विद्यार्थी-केंद्रित प्रणाली की ओर बढ़ रही है। इसमें शिक्षक का कार्य केवल ज्ञान देने का नहीं, बल्कि सीखने की प्रक्रिया में मार्गदर्शन, प्रेरणा और तकनीकी संसाधनों का कुशल उपयोग करना भी शामिल है। डिजिटल उपकरणों और संसाधनों के समुचित प्रयोग से शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के बीच संवाद और सहभागिता बढ़ती है, जिससे सीखने की गुणवत्ता में सुधार होता है।

स्मार्ट क्लासरूम की अवधारणा

स्मार्ट क्लासरूम वह आधुनिक शिक्षण वातावरण है जिसमें तकनीकी संसाधनों और डिजिटल उपकरणों के माध्यम से शिक्षण को अधिक प्रभावी और रुचिकर बनाया जाता है। यह पारंपरिक कक्षा की सीमाओं को तोड़ते हुए विद्यार्थी-केंद्रित अधिगम को प्रोत्साहित करता है।

स्मार्ट क्लासरूम में आम तौर पर निम्नलिखित उपकरण और संसाधन शामिल होते हैं :

स्मार्ट बोर्ड और प्रोजेक्टर : विषयवस्तु को दृश्य और श्रव्य रूप में प्रस्तुत करने के लिए।

कंप्यूटर और टैबलेट : विद्यार्थियों को इंटरैक्टिव सीखने के अवसर प्रदान करने के लिए।

ऑडियो-वीडियो सामग्री : जटिल अवधारणाओं को सरल और स्पष्ट बनाने के लिए।

इंटरनेट और डिजिटल लाइब्रेरी : अद्यतन और विविध शैक्षिक सामग्री तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए।

स्मार्ट क्लासरूम के प्रमुख घटक

स्मार्ट क्लासरूम केवल तकनीकी उपकरणों का संग्रह नहीं है; इसका प्रभाव तभी पूर्ण होता है जब इसमें चार मुख्य घटक संतुलित रूप से मौजूद हों। ये घटक हैं :

1. तकनीकी उपकरण : स्मार्ट बोर्ड, प्रोजेक्टर, कंप्यूटर, टैबलेट और इंटरनेट जैसी तकनीकें शिक्षण को दृश्यात्मक और इंटरैक्टिव बनाती हैं। इन उपकरणों के माध्यम से जटिल विषयों को सरल और रोचक ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है।

2. डिजिटल शैक्षिक सामग्री : ई-पाठ्यपुस्तकें, वीडियो लेक्चर, सिमुलेशन, ऑनलाइन क्विज़ और ऑडियो-वीडियो संसाधन विद्यार्थियों के अधिगम अनुभव को समृद्ध करते हैं।

3. प्रशिक्षित शिक्षक : तकनीक की उपलब्धता अकेले पर्याप्त नहीं है। शिक्षक का प्रशिक्षण और उसकी दक्षता यह सुनिश्चित करती है कि तकनीक का उपयोग सही तरीके से हो और शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में वास्तविक सुधार आए।

4. अनुकूल अधिगम वातावरण : स्मार्ट क्लासरूम में ऐसा वातावरण होना चाहिए जो विद्यार्थियों को सक्रिय रूप से सीखने के लिए प्रेरित करे, उनकी जिज्ञासा बढ़ाए और सहयोगात्मक अधिगम को प्रोत्साहित करे।

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया पर स्मार्ट क्लासरूम का प्रभाव

स्मार्ट क्लासरूम ने शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक सक्रिय, संवादात्मक और प्रभावी बना दिया है। पारंपरिक कक्षाओं में जहाँ विद्यार्थी केवल श्रोता के रूप में रहते थे, वहीं स्मार्ट क्लासरूम में वे सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय सहभागी बन जाते हैं।

मुख्य प्रभाव इस प्रकार हैं :

1. सक्रिय सहभागिता : डिजिटल उपकरणों और इंटरैक्टिव संसाधनों के माध्यम से विद्यार्थी विषय को अनुभवात्मक रूप में समझते हैं और केवल सुनने या पढ़ने तक सीमित नहीं रहते।

2. विषयवस्तु की स्पष्टता : ऑडियो-वीडियो, सिमुलेशन और एनिमेशन का प्रयोग जटिल अवधारणाओं को सरल और समझने योग्य बनाता है।

3. व्यक्तिगत अधिगम का समर्थन : स्मार्ट क्लासरूम विद्यार्थियों को अपनी गति से सीखने और व्यक्तिगत स्तर पर सामग्री का अध्ययन करने की सुविधा प्रदान करता है।

4. सहयोगात्मक अधिगम : डिजिटल मंच समूह परियोजनाओं, चर्चा सत्र और सहयोगात्मक गतिविधियों को संभव बनाता है, जिससे सामाजिक और टीमवर्क कौशल भी विकसित होते हैं।

5. रचनात्मक और आलोचनात्मक सोच : बहुमाध्यमिक सामग्री और वास्तविक जीवन से जुड़े उदाहरण विद्यार्थियों में रचनात्मकता और आलोचनात्मक विश्लेषण की क्षमता को प्रोत्साहित करते हैं।

डिजिटल युग में प्रभावी शिक्षक की भूमिका

डिजिटल युग में शिक्षक की भूमिका पारंपरिक ज्ञान प्रदाता से बदलकर मार्गदर्शक, प्रेरक और तकनीकी उपयोगकर्ता बन गई है। स्मार्ट क्लासरूम और डिजिटल उपकरण तब ही प्रभावी होते हैं जब उन्हें दक्ष और संवेदनशील शिक्षक संचालित करे।

प्रमुख भूमिकाएँ इस प्रकार हैं :

1. मार्गदर्शन और समर्थन : शिक्षक विद्यार्थियों को सीखने की प्रक्रिया में मार्गदर्शन देता है, उनकी जिज्ञासाओं का समाधान करता है और उन्हें आत्मनिर्भर अधिगम की ओर प्रेरित करता है।

2. तकनीक का कुशल उपयोग : शिक्षक को तकनीकी उपकरणों और डिजिटल संसाधनों का सही तरीके से उपयोग करना आना चाहिए, ताकि अधिगम अधिक रोचक और प्रभावी बन सके।

3. विद्यार्थी-केंद्रित दृष्टिकोण : शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी की व्यक्तिगत आवश्यकताओं, अधिगम शैली और मनोवैज्ञानिक पहलुओं को समझकर शिक्षण प्रक्रिया को अनुकूलित करता है।

4. रचनात्मक और नवाचारी शिक्षण विधियाँ : प्रभावी शिक्षक तकनीक और परंपरागत शिक्षण विधियों का मिश्रण करके नवाचार और रचनात्मकता को प्रोत्साहित करता है।

5. प्रेरणा और सहयोग : शिक्षक न केवल ज्ञान साझा करता है, बल्कि विद्यार्थियों को सीखने के प्रति उत्साहित और सहयोगात्मक बनाने का प्रयास करता है।

प्रभावी शिक्षक के आवश्यक गुण

डिजिटल युग में शिक्षक की भूमिका केवल ज्ञान देने तक सीमित नहीं रह गई है। एक प्रभावी शिक्षक में तकनीक, संचार कौशल और मानवीय संवेदनाओं का संतुलन होना आवश्यक है। मुख्य गुण इस प्रकार हैं :

1. **तकनीकी दक्षता :** शिक्षक को डिजिटल उपकरणों, स्मार्ट बोर्ड, ई-लर्निंग प्लेटफ़ॉर्म और अन्य तकनीकी संसाधनों का कुशल प्रयोग आना चाहिए।

2. **विषयगत ज्ञान :** शिक्षक को अपने विषय में गहन जानकारी और नवीनतम परिवर्तनों की समझ होनी चाहिए, जिससे विद्यार्थियों को सटीक और अद्यतन जानकारी मिल सके।

3. **संचार कौशल :** प्रभावी शिक्षक अपनी बात स्पष्ट और समझने योग्य ढंग से प्रस्तुत करता है, और विद्यार्थियों के प्रश्नों का सहजता से उत्तर देता है।

4. **भावनात्मक संवेदनशीलता :** शिक्षक विद्यार्थियों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं, उनके भावनात्मक विकास और सामाजिक संदर्भ को समझता है।

5. **निरंतर सीखने की प्रवृत्ति :** प्रभावी शिक्षक स्वयं भी लगातार सीखता और अपडेट रहता है, ताकि शिक्षण में नवाचार और सुधार संभव हो।

6. **रचनात्मकता और नवाचार :** शिक्षण विधियों में नवाचार लाने और समस्याओं का रचनात्मक समाधान प्रस्तुत करने की क्षमता।

7. **सकारात्मक दृष्टिकोण :** शिक्षक का उत्साही और प्रेरक दृष्टिकोण विद्यार्थियों को सीखने के प्रति प्रेरित करता है।

शोध कार्यप्रणाली

इस शोध में वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक शोध पद्धति का उपयोग किया गया है। इसका उद्देश्य डिजिटल युग में स्मार्ट क्लासरूम और प्रभावी शिक्षक के गुणों को गहनता से समझना और शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया पर उनके प्रभाव का विश्लेषण करना है।

अध्ययन की मुख्य विशेषताएँ

1. **स्रोत :** अध्ययन में मुख्य रूप से द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है, जैसे कि शैक्षिक पुस्तकों, शोध पत्रिकाओं, शैक्षिक रिपोर्टों, और विश्वसनीय ऑनलाइन संसाधनों।

2. **विश्लेषण विधि :** स्मार्ट क्लासरूम के घटक, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया पर प्रभाव और प्रभावी शिक्षक के गुणों का तुलनात्मक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया।

3. **लक्ष्य :** यह शोध मुख्यतः अवधारणात्मक और विश्लेषणात्मक है, जिसका उद्देश्य शिक्षकों, विद्यार्थियों और शिक्षा नीति निर्माताओं को डिजिटल युग में शिक्षण की गुणवत्ता सुधारने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करना है।

4. **सीमाएँ :** यह अध्ययन केवल सैद्धांतिक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण पर आधारित है और इसमें प्राथमिक डेटा संग्रह (जैसे सर्वेक्षण या प्रश्नावली) शामिल नहीं है।

निष्कर्ष

डिजिटल युग में स्मार्ट क्लासरूम ने शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक सक्रिय, सहभागितापूर्ण और परिणाममुखी बना दिया है। तकनीकी उपकरणों और डिजिटल संसाधनों के माध्यम से जटिल अवधारणाओं को सरल रूप में प्रस्तुत करना संभव हुआ है, जिससे विद्यार्थियों की समझ, रुचि और सीखने की क्षमता में वृद्धि हुई है।

हालांकि, स्मार्ट क्लासरूम की सफलता केवल तकनीक पर निर्भर नहीं करती। यह पूरी तरह शिक्षक की दक्षता, दृष्टिकोण और नवाचारी शिक्षण विधियों पर आधारित है। एक प्रभावी शिक्षक तकनीक का सही उपयोग करके विद्यार्थियों को प्रेरित करता है, उन्हें आत्मनिर्भर बनाता है और अधिगम प्रक्रिया को सार्थक बनाता है।

अतः डिजिटल युग में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए तकनीक और शिक्षक के गुणों के समन्वय पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। स्मार्ट क्लासरूम और प्रभावी शिक्षक का सम्मिलित योगदान न केवल विद्यार्थियों की सीखने की क्षमता बढ़ाता है, बल्कि शिक्षा प्रणाली को अधिक समावेशी, रोचक और भविष्योन्मुखी बनाता है।

संदर्भ सूची

1. शर्मा, रामनाथ (2021)। डिजिटल युग में शिक्षा : चुनौतियाँ और संभावनाएँ। नई दिल्ली : ज्ञान पब्लिकेशन।
2. वर्मा, सुनीता (2020)। स्मार्ट क्लासरूम और आधुनिक शिक्षण पद्धतियाँ। जयपुर : शैक्षिक प्रकाशन।
3. सिंह, अजय (2019)। "सूचना और संचार प्रौद्योगिकी का शिक्षण-अधिगम पर प्रभाव।" भारतीय शैक्षिक समीक्षा, खंड 15(3), 45-60।
4. मिश्रा, दीपा (2018)। प्रभावी शिक्षक के गुण और डिजिटल कक्षा में उनका महत्व। पटना : शिक्षण शोध संस्थान।
5. जैन, रोहित (2020)। ई-लर्निंग और स्मार्ट क्लासरूमरू एक विश्लेषणात्मक अध्ययन। मुंबई : शैक्षिक विज्ञान केंद्र।
6. केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) (2021)। डिजिटल शिक्षा और स्मार्ट क्लास निर्देशिका। नई दिल्ली : सीबीएसई प्रकाशन।
7. नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एंड ट्रेनिंग (NCERT) (2020)। शिक्षक प्रशिक्षण और आईसीटी का उपयोग। नई दिल्लीः छब्म्त्ज्।
8. खन्ना, मनीषा (2019)। "तकनीकी युग में शिक्षक की भूमिका।" भारतीय शिक्षक जर्नल, खंड 12(2), 22-35।
9. कुमारी, प्रिया (2021)। स्मार्ट क्लासरूम के प्रभाव और विद्यार्थियों की सहभागिता। दिल्ली : शैक्षिक शोध प्रकाशन।
10. रघुवंशी, संजय (2018)। डिजिटल शिक्षा में नवाचार और शिक्षक दक्षता। लखनऊ : ज्ञानदीप पब्लिकेशन।

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

शिक्षा और बेरोज़गारी की समस्या : शिक्षकों के व्यावसायिक विकास की भूमिका

Dr. Mahesh Chand Gurjar
Education department
Assistant professor
Smt. Anar Devi Teacher's Training College Bakharana (Kotputli) Jaipur Rajasthan-303108
Email Id : Jangalmahesh@gmail.com

सारांश

वर्तमान समय में बेरोज़गारी भारत की एक गंभीर सामाजिक-आर्थिक समस्या बन चुकी है, जिसमें शिक्षित बेरोज़गारी का स्वरूप विशेष रूप से चिंताजनक है। लंबे समय से यह धारणा रही है कि शिक्षा बेरोज़गारी की समस्या का समाधान है, किंतु व्यवहार में यह अपेक्षा पूरी तरह साकार नहीं हो पाई है। इसका प्रमुख कारण शिक्षा प्रणाली और श्रम बाज़ार की आवश्यकताओं के बीच बढ़ता असंतुलन है। आज की शिक्षा प्रणाली में सैद्धांतिक ज्ञान पर अधिक बल दिया जाता है, जबकि कौशल-आधारित, व्यावहारिक और रोजगारोन्मुख शिक्षा अपेक्षित रूप से विकसित नहीं हो सकी है।

इस परिप्रेक्ष्य में शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। शिक्षक न केवल ज्ञान का संप्रेषण करता है, बल्कि वह विद्यार्थियों के दृष्टिकोण, कौशल और भविष्य निर्माण में भी निर्णायक भूमिका निभाता है। यदि शिक्षक स्वयं नवीन शिक्षण विधियों, तकनीकी दक्षताओं और बदलते रोजगार परिदृश्य से परिचित हों, तो वे शिक्षा को अधिक प्रासंगिक और प्रभावी बना सकते हैं। इसी कारण शिक्षकों का व्यावसायिक विकास आज की शिक्षा व्यवस्था की एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

यह शोध-पत्र शिक्षा और बेरोज़गारी की समस्या के आपसी संबंध का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि किस प्रकार शिक्षकों का सतत व्यावसायिक विकास शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार कर सकता है और उसे रोजगारोन्मुख दिशा प्रदान कर सकता है। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षकों के व्यावसायिक विकास को सुदृढ़ किए बिना न तो शिक्षा सुधार संभव है और न ही बेरोज़गारी की समस्या का स्थायी समाधान।

भूमिका

शिक्षा किसी भी समाज के सर्वांगीण विकास की आधारशिला है। यह व्यक्ति को साक्षर बनाने के साथ-साथ उसे सामाजिक, आर्थिक और नैतिक रूप से सक्षम नागरिक भी बनाती है। स्वतंत्रता के बाद भारत में शिक्षा के विस्तार पर विशेष ध्यान दिया गया, जिससे विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की संख्या में वृद्धि हुई।

फिर भी आज देश में शिक्षित बेरोज़गारी एक गंभीर समस्या बन चुकी है। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी बड़ी संख्या में युवा रोजगार से वंचित रहते हैं, जिससे आर्थिक असंतुलन और सामाजिक असंतोष उत्पन्न होता है। यह स्पष्ट है

कि समस्या केवल रोजगार की कमी तक सीमित नहीं है, बल्कि शिक्षा की गुणवत्ता और प्रासंगिकता भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षकों का व्यावसायिक विकास इस संदर्भ में शिक्षा और रोजगार के बीच के अंतर को कम करने का मुख्य साधन है।

कुंजी शब्द : शिक्षा, बेरोज़गारी, शिक्षित बेरोज़गारी, शिक्षक, व्यावसायिक विकास, कौशल-आधारित शिक्षा, रोजगारोन्मुख शिक्षा, शिक्षा की गुणवत्ता, नई शिक्षा नीति 2020

शिक्षा की अवधारणा और उद्देश्य

शिक्षा की अवधारणा समय और समाज के साथ निरंतर विकसित होती रही है। प्राचीन भारतीय परंपरा में शिक्षा का उद्देश्य केवल आजीविका प्राप्त करना नहीं था, बल्कि व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर बल दिया जाता था। गुरुकुल प्रणाली में शिक्षा को जीवनोपयोगी, नैतिक और व्यवहारिक बनाया गया था।

- आत्मनिर्भर बनाए
- समाजोपयोगी बनाए
- व्यावसायिक और तकनीकी दक्षता प्रदान करे
- रोजगार योग्य कौशल विकसित करे

किन्तु व्यवहार में यह देखा जाता है कि शिक्षा का एक बड़ा भाग अभी भी परीक्षा-केंद्रित और डिग्री-प्रधान बना हुआ है। विद्यार्थियों को तथ्यों और सूचनाओं से तो भर दिया जाता है, परंतु उन्हें उन ज्ञानों के व्यावहारिक उपयोग के अवसर कम मिलते हैं। परिणामस्वरूप शिक्षा और रोजगार के बीच एक गहरी खाई उत्पन्न हो जाती है।

बेरोज़गारी : अर्थ, स्वरूप और कारण

बेरोज़गारी का सामान्य अर्थ है—काम करने की इच्छा और क्षमता रखने के बावजूद रोजगार का अभाव। भारत जैसे विकासशील देश में बेरोज़गारी केवल आर्थिक समस्या नहीं, बल्कि सामाजिक और शैक्षिक समस्या भी बन चुकी है।

बेरोज़गारी के प्रमुख स्वरूप

- शिक्षित बेरोज़गारी
- आंशिक बेरोज़गारी
- मौसमी बेरोज़गारी
- छिपी हुई बेरोज़गारी

शिक्षित बेरोज़गारी के प्रमुख कारण

- शिक्षा और उद्योग की आवश्यकताओं के बीच असंतुलन
- कौशल-आधारित शिक्षा का अभाव
- व्यावहारिक प्रशिक्षण की कमी
- पारंपरिक शिक्षण विधियाँ
- शिक्षकों का सीमित व्यावसायिक विकास

इन कारणों में अंतिम कारण अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि शिक्षक ही वह माध्यम हैं जो शिक्षा को रोजगारोन्मुख दिशा दे सकते हैं। यदि शिक्षक स्वयं आधुनिक कौशल, तकनीक और बदलते रोजगार परिदृश्य से परिचित नहीं होंगे, तो शिक्षा प्रणाली अपने लक्ष्य से भटक जाएगी।

भारत में शिक्षित बेरोज़गारी की समस्या

भारत में शिक्षित बेरोज़गारी आज एक गंभीर समस्या है। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद बड़ी संख्या में युवा बेरोज़गार

रह जाते हैं या अपनी योग्यता से कम स्तर के कार्य करने के लिए विवश होते हैं।

यह न केवल आर्थिक संसाधनों की बर्बादी है, बल्कि शिक्षा प्रणाली की प्रभावशीलता पर भी सवाल उठाता है। शिक्षा में व्यावहारिक कौशल और रोजगारोन्मुख प्रशिक्षण का अभाव इस समस्या के मुख्य कारण हैं। शिक्षकों का समयानुकूल प्रशिक्षण न होना भी विद्यार्थियों को रोजगार के अनुकूल तैयार करने में बाधा डालता है।

शिक्षा प्रणाली और बेरोज़गारी के बीच असंतुलन

शिक्षा प्रणाली और रोजगार व्यवस्था के बीच संतुलन का अभाव बेरोज़गारी को और गंभीर बनाता है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में सैद्धांतिक ज्ञान को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि व्यावहारिक कौशल और कार्यानुभव पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता।

विद्यार्थियों को परीक्षाओं में सफलता के लिए तैयार किया जाता है, न कि जीवन और कार्य-जगत की वास्तविक चुनौतियों के लिए। परिणामस्वरूप छात्र डिग्री तो प्राप्त कर लेते हैं, पर आवश्यक कौशलों—जैसे संचार, समस्या-समाधान, टीमवर्क और तकनीकी दक्षता—में कमी रहती है। यही असंतुलन शिक्षकों के व्यावसायिक विकास की आवश्यकता को स्पष्ट करता है, ताकि शिक्षा रोजगारोन्मुख और प्रासंगिक बनी रहे।

शिक्षक की भूमिका : पारंपरिक से आधुनिक तक

परंपरागत शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक को ज्ञान का एकमात्र स्रोत माना जाता था। उनका मुख्य कार्य पाठ्यक्रम को पूर्ण करना और परीक्षाओं के लिए विद्यार्थियों को तैयार करना होता था। किंतु आधुनिक समय में शिक्षक की भूमिका में व्यापक परिवर्तन आया है। आज शिक्षक से अपेक्षा की जाती है कि वह केवल ज्ञानदाता ही नहीं, बल्कि मार्गदर्शक, प्रेरक और परामर्शदाता की भूमिका भी निभाए।

आधुनिक शिक्षक को विद्यार्थियों में रचनात्मक सोच, आलोचनात्मक दृष्टिकोण और व्यावहारिक कौशल विकसित करने की आवश्यकता होती है। इसके लिए शिक्षक का स्वयं तकनीकी रूप से सक्षम होना, नवीन शिक्षण विधियों से परिचित होना और सतत सीखने के लिए तत्पर रहना अनिवार्य है।

जब शिक्षक पारंपरिक दृष्टिकोण से बाहर निकलकर आधुनिक शिक्षण पद्धतियों को अपनाता है, तब वह शिक्षा को रोजगार से जोड़ने में सक्षम होता है। इस परिवर्तन की आधारशिला शिक्षकों का व्यावसायिक विकास ही है, जो उन्हें बदलते समय की माँगों के अनुरूप तैयार करता है।

शिक्षकों के व्यावसायिक विकास की अवधारणा

शिक्षकों का व्यावसायिक विकास एक निरंतर प्रक्रिया है, जिसके तहत शिक्षक अपने ज्ञान, कौशल और शिक्षण क्षमता को बदलती आवश्यकताओं के अनुसार विकसित करता है। यह केवल प्रशिक्षण कार्यक्रम तक सीमित नहीं, बल्कि पूरे व्यावसायिक जीवन में चलने वाली सीखने की प्रक्रिया है।

इसका मुख्य उद्देश्य शिक्षक को सक्षम और प्रभावी बनाना है, ताकि वे विद्यार्थियों को केवल पाठ्यपुस्तक ज्ञान नहीं, बल्कि जीवनोपयोगी और रोजगारोन्मुख कौशल भी प्रदान कर सकें। शिक्षा प्रणाली स्थिर नहीं है, इसलिए शिक्षक का समयानुकूल विकास शिक्षा की गुणवत्ता और प्रासंगिकता बनाए रखने के लिए अनिवार्य है।

व्यावसायिक विकास के प्रमुख आयाम

शिक्षकों के व्यावसायिक विकास के मुख्य आयाम शिक्षा को प्रभावी और रोजगारोन्मुख बनाने में सहायक होते हैं।

शैक्षणिक ज्ञान का विकास : शिक्षक को विषय का गहन और अद्यतन ज्ञान होना चाहिए, जिससे वे विद्यार्थियों को

वर्तमान संदर्भों से जोड़ सकें।

शिक्षण विधियों में नवाचार : पारंपरिक व्याख्यान की बजाय परियोजना आधारित, समस्या-समाधान और अनुभवात्मक शिक्षण विधियाँ अपनाना आवश्यक है।

तकनीकी दक्षता : डिजिटल संसाधनों, स्मार्ट क्लासरूम और ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म का प्रभावी उपयोग तभी संभव है जब शिक्षक तकनीकी रूप से सक्षम हों।

मूल्यांकन और मार्गदर्शन : शिक्षक को विद्यार्थियों की क्षमता और रुचियों को समझकर उचित मार्गदर्शन देना चाहिए।

रोजगारोन्मुख एवं कौशल-आधारित शिक्षा में शिक्षक विकास की भूमिका

आज के समय में रोजगारोन्मुख और कौशल-आधारित शिक्षा की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है। उद्योग, सेवा क्षेत्र और उद्यमिता सभी क्षेत्रों में ऐसे युवाओं की माँग है जिनके पास व्यावहारिक कौशल, समस्या-समाधान क्षमता और अनुकूलनशीलता हो।

शिक्षक यदि अपने व्यावसायिक विकास के माध्यम से इन आवश्यकताओं को समझते हैं, तो वे शिक्षा को केवल सैद्धांतिक ज्ञान तक सीमित नहीं रखते। वे विद्यार्थियों को वास्तविक जीवन की समस्याओं से जोड़ते हैं और उनमें कार्य-कुशलता विकसित करते हैं। इससे शिक्षा और रोजगार के बीच की दूरी कम होती है।

नई शिक्षा नीति 2020 और शिक्षक व्यावसायिक विकास

नई शिक्षा नीति 2020 शिक्षा की गुणवत्ता, समावेशन और रोजगारोन्मुखता पर जोर देती है और शिक्षकों के व्यावसायिक विकास को केंद्रीय मानती है। सतत व्यावसायिक विकास के माध्यम से शिक्षक समय-समय पर नवीन शिक्षण विधियों, तकनीकी साधनों और पाठ्यक्रम परिवर्तनों से परिचित रहते हैं, जिससे शिक्षा अधिक प्रभावी और प्रासंगिक बनती है।

नीति बहु-विषयक शिक्षा, कौशल विकास और अनुभवात्मक अधिगम को प्रोत्साहित करती है। इसके लिए शिक्षक का आधुनिक कौशल और बहु-विषयक दृष्टिकोण आवश्यक है, जो शिक्षा को रोजगारोन्मुख बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

शिक्षकों के व्यावसायिक विकास में चुनौतियाँ एवं व्यावहारिक बाधाएँ

शिक्षकों के व्यावसायिक विकास में कई चुनौतियाँ और बाधाएँ सामने आती हैं।

संसाधनों की कमी : कई संस्थानों में प्रशिक्षण और तकनीकी साधनों का अभाव होता है, जिससे विकास के अवसर सीमित रहते हैं।

समय और कार्यभार : शिक्षकों पर शैक्षणिक और प्रशासनिक कार्यों का बोझ अधिक होता है, जिससे प्रशिक्षण के लिए समय कम मिलता है।

पारंपरिक मानसिकता : कुछ शिक्षक बदलाव को सहज रूप से स्वीकार नहीं करते, जो विकास में बाधा बनती है।

प्रशिक्षण की गुणवत्ता : कई प्रशिक्षण कार्यक्रम औपचारिक होते हैं और व्यवहारिक लाभ कम प्रदान करते हैं।

समाधान एवं सुझाव

- शिक्षकों के लिए नियमित, गुणवत्तापूर्ण और व्यावहारिक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ।
- शिक्षण संस्थानों में तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाए।
- शिक्षकों को नवाचार और शोध के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

● उद्योग और शिक्षा के बीच सहयोग बढ़ाया जाए, ताकि शिक्षक वास्तविक रोजगार आवश्यकताओं से परिचित हो सकें।

● शिक्षकों के व्यावसायिक विकास को पदोन्नति और मूल्यांकन से जोड़ा जाए।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध-पत्र से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा और बेरोज़गारी की समस्या परस्पर गहराई से जुड़ी हुई हैं। वर्तमान समय में केवल डिग्री आधारित शिक्षा युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराने में पर्याप्त सिद्ध नहीं हो रही है, जिसके कारण शिक्षित बेरोज़गारी एक गंभीर चुनौती के रूप में उभर रही है। यह स्थिति शिक्षा प्रणाली की गुणवत्ता और उसकी प्रासंगिकता पर प्रश्न खड़े करती है।

इस संदर्भ में शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। शिक्षक यदि आधुनिक ज्ञान, कौशल और शिक्षण विधियों से युक्त हों, तो वे शिक्षा को रोजगारोन्मुख बना सकते हैं। शिक्षकों का व्यावसायिक विकास न केवल शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाता है, बल्कि विद्यार्थियों को बदलते सामाजिक-आर्थिक परिवेश के अनुरूप तैयार करने में भी सहायक होता है।

अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शिक्षा को बेरोज़गारी की समस्या के समाधान से जोड़ने के लिए शिक्षकों के व्यावसायिक विकास को प्राथमिकता देना अनिवार्य है। सक्षम और प्रशिक्षित शिक्षक ही गुणवत्तापूर्ण, कौशल-आधारित और समाजोपयोगी शिक्षा प्रदान कर सकते हैं।

संदर्भ

1. अग्रवाल, जे. सी. (2019). शिक्षा का दर्शन और समाज. नई दिल्ली : शिप्रा पब्लिकेशंस।
2. कुमार, अरुण. (2020). भारतीय शिक्षा प्रणाली : समस्याएँ और समाधान. नई दिल्ली : अटलांटिक पब्लिशर्स।
3. मिश्रा, आर. पी. (2018). शिक्षा और राष्ट्रीय विकास. वाराणसी : चौखंबा प्रकाशन।
4. भारत सरकार. (2020). राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020. नई दिल्ली : शिक्षा मंत्रालय।
5. वर्मा, एस. पी. (2017). शिक्षक शिक्षा और व्यावसायिक विकास. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
6. सिंह, रामनरेश. (2019). शिक्षा में गुणवत्ता और मूल्यांकन. पटना : भारती भवन।
7. शुक्ला, अर्चना. (2021). शिक्षित बेरोज़गारी : कारण और प्रभाव. नई दिल्ली : प्रभात प्रकाशन।
8. पांडेय, ओमप्रकाश. (2018). शिक्षा, कौशल विकास और रोजगार. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

ग्रामीण भारत में हिंदी का विकास और शुद्ध लेखन की आवश्यकता : व्याकरण, शिक्षा और भाषा के दृष्टिकोण से

Dr. Vaishali Singh
Assistant Professor
Education Department
Smt- Anar Devi T.T. College, Bakharana (Kotputli) Jaipur Rajasthan – 303108
Email Id : Vaishalisingh6433@gmail.com

सारांश

ग्रामीण भारत में हिंदी भाषा का विकास और शुद्ध लेखन आज एक महत्वपूर्ण शैक्षिक एवं सामाजिक आवश्यकता बन गया है। हिंदी न केवल हमारी सांस्कृतिक और भाषाई पहचान का प्रतीक है, बल्कि यह ग्रामीण शिक्षा, प्रशासन और सामाजिक संवाद का भी प्रमुख माध्यम है। ग्रामीण क्षेत्रों में हिंदी का विकास ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से हुआ है, लेकिन शुद्ध लेखन और व्याकरण की दृष्टि से अभी भी चुनौतियाँ मौजूद हैं।

अध्ययन से पता चलता है कि अशुद्ध हिंदी और व्याकरण संबंधी त्रुटियों के कारण शिक्षा, प्रशासनिक कार्य और सामाजिक संचार प्रभावित हो रहे हैं। इसके साथ ही, डिजिटल माध्यम और सोशल मीडिया में हिंग्लिश के बढ़ते प्रयोग से शुद्ध हिंदी की स्वीकार्यता और प्रभाविता कम हो रही है।

इस शोध में ग्रामीण शिक्षा, साहित्य, मीडिया और प्रशासन के माध्यम से हिंदी के विकास का विश्लेषण किया गया है। साथ ही, व्याकरण और शुद्ध लेखन की आवश्यकता और उसके लिए संभावित उपाय प्रस्तुत किए गए हैं। शोध निष्कर्ष में यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा, साहित्य, मीडिया और प्रशासन के संतुलित प्रयासों से ही ग्रामीण भारत में हिंदी का सही विकास और शुद्ध लेखन संभव है।

प्रस्तावना

ग्रामीण भारत में हिंदी भाषा का विकास एक गंभीर सामाजिक और शैक्षिक मुद्दा है। हिंदी न केवल भारत की राजभाषा है, बल्कि यह ग्रामीण जनजीवन में संस्कृति, परंपरा और सामाजिक मूल्यों को सहेजने का प्रमुख माध्यम भी है। ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, साहित्य और मीडिया के माध्यम से हिंदी का प्रसार हुआ है, लेकिन शुद्ध लेखन और व्याकरण की दृष्टि से अभी भी चुनौतियाँ मौजूद हैं। आधुनिक तकनीकी और डिजिटल युग में, गलत हिंदी का प्रचलन बढ़ता जा रहा है, जिससे भाषा की शुद्धता और व्याकरणीय मानक प्रभावित हो रहे हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में हिंदी का विकास केवल भाषा के प्रसार तक सीमित नहीं है। यह शिक्षा के स्तर, सामाजिक चेतना, और रोजगार की संभावनाओं को भी प्रभावित करता है। यदि सही व्याकरण और शुद्ध हिंदी का अभ्यास ग्रामीण स्तर पर

प्रचलित हो, तो इससे न केवल भाषा का मानक बना रहेगा, बल्कि ग्रामीण युवाओं में आत्मविश्वास और संवाद कौशल भी बढ़ेगा।

मुख्य उद्देश्य : इस शोध का उद्देश्य ग्रामीण भारत में हिंदी के विकास की स्थिति का विश्लेषण करना, शुद्ध लेखन की आवश्यकता को उजागर करना और व्याकरण, शिक्षा और भाषा के परिप्रेक्ष्य से सुझाव देना है।

कुंजी शब्द : ग्रामीण भारत, हिंदी का विकास, शुद्ध लेखन, व्याकरण, शिक्षा, भाषा संरक्षण, डिजिटल माध्यम।

ग्रामीण भारत में हिंदी का विकास

ग्रामीण भारत में हिंदी का विकास कई पहलुओं पर आधारित है।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण

हिंदी का विकास प्राचीन साहित्य, भक्ति आंदोलन और स्थानीय बोलियों से हुआ है। जैसे- सूरदास, तुलसीदास और प्रेमचंद जैसे साहित्यकारों ने ग्रामीण जीवन और सांस्कृतिक मूल्यों को हिंदी साहित्य में संजोया। इन लेखकों ने ग्रामीण भाषा की मिठास और सहजता को साहित्य में बनाए रखा, जिससे हिंदी धीरे-धीरे ग्रामीण जनमानस में स्थिर हुई।

सामाजिक और सांस्कृतिक योगदान

ग्रामीण क्षेत्रों में हिंदी न केवल संवाद का माध्यम है बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान का प्रतीक भी है। त्योहार, मेलों, लोकगीतों और कहावतों में हिंदी का प्रचलन स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इन सांस्कृतिक माध्यमों के द्वारा भाषा का प्राकृतिक विकास होता रहा है।

आधुनिक युग में विकास

आज के डिजिटल और शैक्षिक परिवेश में ग्रामीण हिंदी का विकास कई माध्यमों से हो रहा है—शिक्षा, रेडियो, टीवी, मोबाइल एप्स और सोशल मीडिया। हालांकि, इन माध्यमों में भी अशुद्ध शब्दों और अंग्रेजी मिश्रित भाषा के प्रयोग ने शुद्ध हिंदी को प्रभावित किया है।

निष्कर्ष : ग्रामीण भारत में हिंदी का विकास लगातार हुआ है, लेकिन इसे शुद्धता और व्याकरणीय मानक के साथ आगे बढ़ाने की आवश्यकता है।

शुद्ध लेखन की आवश्यकता

हिंदी का शुद्ध लेखन ग्रामीण शिक्षा और सामाजिक चेतना में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

भाषा की शुद्धता

शुद्ध लेखन भाषा की स्पष्टता और संप्रेषणीयता सुनिश्चित करता है। यदि व्याकरण और वर्तनी गलत हों, तो संदेश का अर्थ परिवर्तित हो सकता है और संवाद प्रभावहीन बन सकता है।

शिक्षा के दृष्टिकोण से

ग्रामीण छात्रों के लिए शुद्ध हिंदी का अभ्यास आवश्यक है। शिक्षक और पाठ्यपुस्तकें यदि सही हिंदी का उपयोग करें, तो छात्र भी भाषा को ठीक ढंग से सीखेंगे। शुद्ध लेखन से छात्र परीक्षा में बेहतर प्रदर्शन करते हैं और उनकी लेखन क्षमता में सुधार आता है।

सामाजिक और प्रशासनिक दृष्टिकोण

ग्राम स्तर पर सरकारी योजनाओं, फॉर्म और पत्राचार में शुद्ध हिंदी का प्रयोग न होने से सूचना का प्रसार प्रभावित होता है। इसलिए ग्रामीण प्रशासन और शिक्षा संस्थानों में शुद्ध लेखन की प्रैक्टिस जरूरी है।

डिजिटल माध्यमों में आवश्यकता

आज इंटरनेट, सोशल मीडिया और मोबाइल संदेशों में अशुद्ध हिंदी का व्यापक उपयोग देखा जा रहा है। ग्रामीण युवाओं में भी यह प्रचलन बढ़ रहा है। इससे भाषा की शुद्धता प्रभावित होती है और भाव स्पष्ट रूप से नहीं पहुंच पाता।

व्याकरण का महत्व

व्याकरण किसी भी भाषा की रीढ़ है। यह भाषा को संरचना, स्पष्टता और सौंदर्य प्रदान करता है।

संवाद में स्पष्टता

व्याकरण का सही प्रयोग संवाद को स्पष्ट और समझने योग्य बनाता है। ग्राम स्तर पर लोग अक्सर बोलचाल की भाषा में अशुद्ध व्याकरण का प्रयोग करते हैं, जिससे संदेश में भ्रम उत्पन्न होता है।

लेखन में मानकता

शुद्ध व्याकरण के बिना लेखन असंवेदनशील और अपाठ्य बन जाता है। सरकारी, शैक्षिक और साहित्यिक दस्तावेजों में सही व्याकरण आवश्यक है।

भाषा संरक्षण

व्याकरण और शुद्ध लेखन के अभ्यास से भाषा की सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पहचान सुरक्षित रहती है।

शिक्षा के दृष्टिकोण से हिंदी का महत्व

शिक्षा के क्षेत्र में हिंदी भाषा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। ग्रामीण भारत में शिक्षा के माध्यम से भाषा का विकास सीधे छात्र-छात्राओं की सोच, संचार और ज्ञान अर्जन से जुड़ा हुआ है।

प्रारंभिक शिक्षा और मातृभाषा

ग्रामीण क्षेत्रों में प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम अक्सर हिंदी होती है। मातृभाषा के रूप में हिंदी का प्रयोग बच्चों के बौद्धिक और सामाजिक विकास में सहायक होता है। शोध बताते हैं कि बच्चों को यदि उनकी मातृभाषा में शिक्षा दी जाए, तो उनकी समझ, स्मरण शक्ति और संज्ञानात्मक विकास अधिक प्रभावी होता है।

स्कूल और पाठ्यक्रम में हिंदी

ग्रामीण विद्यालयों में हिंदी को मुख्य भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है। पाठ्यपुस्तकों, कहानी-काव्य और व्याकरण संबंधी अभ्यासों के माध्यम से छात्र हिंदी सीखते हैं। लेकिन कई बार शिक्षक की सीमित भाषा क्षमता और अशुद्ध उदाहरणों के कारण बच्चों में भी गलत हिंदी का प्रयोग बढ़ता है।

डिजिटल शिक्षा और ऑनलाइन माध्यम

आज डिजिटल शिक्षा ने ग्रामीण हिंदी के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ऑनलाइन क्लासेस, ऐप्स और वीडियो के माध्यम से बच्चों को सही हिंदी और व्याकरण सीखने का अवसर मिलता है। हालांकि, डिजिटल सामग्री में मिश्रित भाषा (हिंग्लिश) का अधिक प्रयोग देखा जा रहा है, जो शुद्ध हिंदी के विकास के लिए चुनौती है।

शिक्षकों का प्रशिक्षण

ग्रामीण शिक्षकों का व्याकरण और शुद्ध लेखन में प्रशिक्षण अत्यंत आवश्यक है। शिक्षकों को नियमित कार्यशालाओं और प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से भाषा की शुद्धता का अभ्यास करवाना चाहिए।

भाषा के दृष्टिकोण से हिंदी का विकास

भाषा केवल संवाद का माध्यम नहीं बल्कि संस्कृति, विचार और सामाजिक संरचना का प्रतिबिंब भी है।

बोली और मानक हिंदी

ग्रामीण क्षेत्रों में कई स्थानीय बोलियाँ प्रचलित हैं, जैसे अवधी, ब्रज, भोजपुरी, हरियाणवी आदि। ये बोलियाँ हिंदी भाषा के विकास में योगदान करती हैं, लेकिन मानक हिंदी के लिए उन्हें संतुलित तरीके से शिक्षण में शामिल करना आवश्यक है।

शब्दावली और साहित्य

ग्रामीण साहित्य में शब्दावली का प्राकृतिक विकास हुआ है। कहावतें, लोकगीत, कविताएं और कहानी-साहित्य भाषा की मिठास और सांस्कृतिक पहचान बनाए रखते हैं। शुद्ध लेखन और व्याकरण के माध्यम से इन संसाधनों को संरक्षित करना महत्वपूर्ण है।

मीडिया और संचार

ग्रामीण मीडिया जैसे स्थानीय समाचार पत्र, रेडियो और सोशल मीडिया हिंदी भाषा के विकास में सहायक हैं। यदि इन माध्यमों में शुद्ध हिंदी का प्रयोग बढ़ाया जाए, तो भाषा के मानक और स्वीकार्यता में सुधार होगा।

सुधार के उपाय

ग्रामीण भारत में हिंदी के शुद्ध लेखन और व्याकरण सुधार के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं :

शिक्षण सुधार

- शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शुद्ध हिंदी और व्याकरण पर जोर।
- पाठ्यपुस्तकों और शिक्षण सामग्री में व्याकरण और सही शब्दावली का विशेष ध्यान।
- डिजिटल और मोबाइल एप्लिकेशन के माध्यम से बच्चों और ग्रामीण युवाओं को भाषा सीखने के अवसर।

साहित्य और मीडिया

- ग्रामीण साहित्य और लोकगीतों के माध्यम से सही हिंदी का प्रचार।
- स्थानीय समाचार पत्रों और रेडियो में शुद्ध हिंदी का प्रयोग।
- सोशल मीडिया पर अशुद्ध हिंदी के बजाय मानक हिंदी को प्रोत्साहित करना।

प्रशासनिक स्तर पर प्रयास

- ग्राम स्तर पर सरकारी योजनाओं और पत्राचार में शुद्ध हिंदी का प्रयोग।
- ग्रामीण जनसंपर्क में भाषा विशेषज्ञों और शिक्षकों की भूमिका।

सांस्कृतिक और सामाजिक पहल

- हिंदी साहित्य और व्याकरण पर प्रतियोगिताएं, कार्यशालाएं और भाषण प्रतियोगिताएं।
- बच्चों और युवाओं में शुद्ध हिंदी के प्रति रुचि बढ़ाने के लिए सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम।

निष्कर्ष

ग्रामीण भारत में हिंदी का विकास शिक्षा, संस्कृति और प्रशासन से जुड़ा हुआ है। शुद्ध लेखन और व्याकरण का अभ्यास भाषा की स्पष्टता, सामाजिक संवाद और सांस्कृतिक पहचान के लिए अनिवार्य है।

ग्रामीण क्षेत्र में हिंदी का विकास तभी सफल होगा जब शिक्षा, साहित्य, मीडिया और प्रशासनिक स्तर पर मिलकर प्रयास किए जाएं। शुद्ध हिंदी का प्रयोग न केवल संवाद को प्रभावी बनाता है बल्कि युवाओं में आत्मविश्वास, सृजनात्मक क्षमता और सामाजिक चेतना को भी बढ़ाता है।

इस शोध से स्पष्ट होता है कि व्याकरण, शिक्षा और भाषा के संतुलित दृष्टिकोण से ही ग्रामीण भारत में हिंदी का विकास और शुद्ध लेखन संभव है।

संदर्भ

1. त्रिपाठी, रामनिवास. हिंदी भाषा का इतिहास और विकास. लखनऊ : भारत भारती प्रकाशन, 2018।
2. मिश्र, श्यामसुंदर. हिंदी व्याकरण और लेखन कौशल. दिल्ली : लोकभारती प्रकाशन, 2020।
3. शुक्ल, नरेंद्र, ग्रामीण शिक्षा और भाषा विकास. पटना : ज्ञानदीप प्रकाशन, 2019।
4. पांडेय, माधव, हिंदी साहित्य : ऐतिहासिक और आधुनिक दृष्टिकोण. वाराणसी : चौखम्बा संस्कृत सीरीज, 2017।
5. गुप्ता, अजय, हिंदी शिक्षा और ग्रामीण समाज. जयपुर : सूर्या प्रकाशन, 2021।
6. भारत सरकार, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. नई दिल्ली : केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय, 2020।
7. कुमारी, राधा, "ग्रामीण भारत में हिंदी भाषा की चुनौतियाँ और समाधान." हिंदी शोध पत्रिका, खंड 15, अंक 2, 2021, पृ. 45-60।
8. वर्मा, संदीप, शुद्ध हिंदी लेखन की आवश्यकता, दिल्ली : साहित्य भारती प्रकाशन, 2019।
9. भारती, प्रियंका, "हिंदी और डिजिटल माध्यम : ग्रामीण संदर्भ." भारतीय भाषा और समाज, 2020, पृ. 102-118।
10. मिश्रा, दीपक. हिंदी भाषा और संस्कृति का संरक्षण. लखनऊ : ज्ञान भारती प्रकाशन, 2018।

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

A Comparative Study of Two Different Cultures: The Gaddi and the Khasi Tribes

Suresh Kumar
Ph.D. Scholar, Department of Social Work,
Central University of Himachal Pradesh
Email- sureshkumarcuhp@gmail.com
Mob- 8219576079.

Teiborlang Dkhar
Assistant Professor,
Ri War College, Meghalaya
Email- tebordkhar@gmail.com
Mob-7005157560

Abstract

This study is a comparative study of Gaddi and Khasi tribes of Himachal Pradesh and Meghalaya to understand their distinctive culture and social patterns. The study mainly focuses on the key aspects of comparison, including their origin, historical background, social structure, economic activities, religious beliefs and political organization. The objective of this study is to describe the culture of two different hilly tribes of India. This paper is a descriptive study using secondary sources such as books, articles, and other resources. The Gaddi and the Khasi are hilly tribes. The comparative analysis of the study reveals significant differences between the two tribes, particularly in terms of social organization and gender roles, as the Gaddi society follows a patriarchal system while the Khasi society is predominantly matrilineal. Economic practices also vary, with the Gaddis largely dependent on pastoralism and agriculture, whereas the Khasis are mainly engaged in settled agriculture and allied activities. Despite these differences, both tribes share common challenges related to modernization, education, and socio-economic change. The study highlights the crucial role geographical settings and cultural traditions play in shaping tribal institutions and social life, and emphasizes the importance of preserving indigenous cultural identities in a rapidly changing society.

Keywords- The Khasi & Gaddi, Tribes, Culture, Religion,

Introduction

Tribes are the small communities in India comprising about more or less 8% scattering all over the country. However, the highest concentration of tribes is in central India. Tribes are considered the most backward communities in the country. This paper will focus on the two small tribes of India, the Gaddi and the Khasi, residing in the Himalaya and the Khasi-Jaintia plateau. The Gaddi and the Khasi are listed as the scheduled tribes in the Constitution of India in Article 366(25). The Gaddi tribe inhabits the northern part of Himachal Pradesh of the Himalayan range. The Khasi tribe of Meghalaya is found in the eastern and central parts of the state. They are the most ancient tribe in the region. One of the unique identities among the Khasi is their matrilineal system, which is still

very strong even today. “There are 715 scheduled tribes under Article 342 of the Constitution of India, spread over different states and Union Territories of the country” (Kumar, 2021, p. 47). Tribes of India are scattered all over the country. The highest concentration of the tribes is in central India. Some tribes in central India are Santhals, Kharia, Gonds, Mundas Korkus. The Tribes of northern India are Jats, Khatris, Aroras, Sainis, Kambohs of Punjab, Lahula, Kinnaura, Spitian, Gaddis, Pangwalas, and Gujjars of Himachal.

In the western parts of India, some tribes are the Bhils, Kota of Rajasthan, Gamiths, and Baruch of Gujarat. The southern parts of India are Irulars, Kodars, Kurumba, and others. In Northeast India are, Rabha, Bodo, Karbi, Deori tribe of Assam, the Ao, Paite, Angami, Ao, Rengma of Nagaland, Kuki, Maran, of Manipur, Reang of Manipur, Lushai of Mizoram, Nishi, Mishmi, Wancho, Tangam, Nocte, Apatani, and Singpo of Arunachal Pradesh. In the Island of India, some tribes like the Jarawas, Onges, and Sentinelese tribes are found in the Andaman and Nicobar Islands.

The Gaddi

The Gaddi tribe of the Western Himalayas inhabits the Chamba and Kangra Districts of Himachal Pradesh, which are on either side of the Dhauladhar range. Fuchs (1992, p. 91) mentioned, “The Gaddis are semi-nomadic; they spend half the year in search of fodder for their herds, and the other half they spend in their villages cultivating their meager crops. But they are better shepherds than cultivators. They are sheep and goat herders. They graze their herds with the help of dogs so fierce that they can repel bears and panthers”. The animals are reared for food, sacrifice, and commercial purposes.

Origin of the Gaddi

There are some controversies regarding the origin of the Gaddi tribe. The Encyclopedia of Himachal writes, the word ‘Gaddi is derived from the ‘Gadar’, a Hindi term meaning shepherd or a ewe. “Another group of people claims that Gaddis came to hilly areas they fell victim to the atrocities of the Mohamedans in their despotic rule. They settled in Bharmaur, which is described as Kailash. Kailash is considered Gaddi, connoting the seat or throne of their God, lord Shiva” (Balokhra, 80, p. 20015). Others say that the Gaddi Brahmin came from the plain area of Delhi, and they moved to the Himalayan mountain ranges due to the fear of invaders. Singh (2001, p. 269) writes, Gaddi, the nomenclature is derived from the word ‘Gadaren’, the local word for the hilly tracts of Himachal Pradesh”.

Another theory says that the Gaddi tribe came from Lahore. Fuchs (1992, p. 92) writes that Gaddi “claims to be immigrants from the North Indian plains, of low Rajput Stock. They left Rajputana, fleeing before the Muslim invaders”. At present, they exclusively inhabit the Dhaula Dhar range.

The Gaddis are of two groups, the Gaddi Brahman and Gaddi Rajput. Singh (2001, p. 273) writes, “Gaddi Brahma, they are one of the four groups included under the generic term Gaddi. They believed to have come to Chamba from Delhi along with Raja Ajai Barman during AD 850-870 to serve as religious priests.” They divide themselves into a number of exogamous groups, such as Attri, Bhardwaj, Gautam, Jamdagni, Kashyap, etc, which are further subdivided into smaller groups.

The Gaddi Rajput, on the other hand, are believed to have migrated from Lahore due to religious persecution. Singh writes, “The Gaddi Rajput are divided into high and low social categories consisting

of the Rajput, Khatri, Thakur, and Rathi. Hypergamous unions with these people are permitted" (Singh, 2001, p.272).

The Khasi

The Khasi is the tribe of Meghalaya inhabiting the plateau of the East and Central parts of the Khasi and Jaintia Hills. They call themselves the children of Seven Huts (*Khun-u-Hynniewtrep*). The Khasis live on agriculture for their survival. Cultivation is practiced on the southern slopes of the hills, which are known as *War*. They are surrounded by other large groups of people, such as Bengalee in the south and Assamese in the north and east.

The Khasis divide themselves into different groups based on their region of residence. They are *Khynriam, Pnar, Bhoi, War, Lynngam*. Those who are living in the central part of the plateau of the Khasi and Jaintia hills are called *Lum-'Khasi*' and *'Pnars'* respectively. Those who are living on the southern slopes of the hills bordering Bangladesh are called *'War'*. The people living in the Southwestern part of the state bordering the Garo hills are called *'Lyngngam',* and those who are living in the north are called *'Bhoi'.* Ryngnga and Sarma (2016, p. 14) write, "People inhabiting this central upland zone of the Khasi Hills Regions are locally known as *Hynniew Trep*, and the region is locally known as Ri-Khasi".Ramsiej (1992, p. 49) writes, "the Khasi is the hill tribe living in the Khasi and Jaintia of Meghalaya. Those who are living in the East are known as *Synteng or Pnar*: those who are living in the plateau tableland are known as Khasi, and those who are living in the hills slopes bordering Bangladesh are known as Wars. Those who are living in the north bordering Assam are called Bhoi. Those who are living in the West Khasi Hills District are called *Lyngngam*. Nongkynrih (1979, p. xxiv) writes, "The common nomenclature 'Khasi' is for the inhabitants of the Khasi Hills. *The Synteng*, the *War*, the *Khasi* and the *Bhoi* that are of the same stock".

The origin of the Khasi

There are several theories regarding the origin of the Khasis. All the Khasis believe that they have come from heaven through the *'JingkiengKsiar'* (golden bridge) via *Sohpetbneng* (navel) hill. This hill, the Khasis believe, is the navel of heaven. There was a golden bridge that connected heaven and earth. That is why this hill is known as the *SOHPET BNENG. Sohpet* means the 'Navel', and '*Bneng*' means 'Heaven'. According to the story, the first Khasis who came down from heaven through the golden bridge are called the *Hynniew trep-hynniew skum*(seven huts) Sawian (2010). The recent excavation in 2014 at *Sohpetbneng* Hill proved that the Khasis had been living there between 1300 to 1200 B.C.

According to Umeshwari Dkhar (2015, p. 5) writes, "The Khasis believe that they were directly created by God and placed in these Hills, of which the most sacred ones are the *Sohpet bneng* (navel of heaven) in the north, *the Diengiei* (the sign of sin) peak in the west, and the *Shyllong* (lum Shillong) peak in the south part of Shillong".

The other theories, Hamlet Bareh Ngapkynta (2010) writes, "There is a tradition that the Amwi-Khasi reached their present land from the East and their ancestors were originally connected with the Mekong River. The Mekong in *Amwi* or *Meisan* in Khasi has an equivalent of the senior Aunt, viz, Mother's elder sister in English."

Choudhary (1998) mentioned that the Khasis are the aborigines of the eastern Himalayan region, and the Khasis 1residing in Laos were most probably the deported or displaced branch of the

Himalayan Khasis who did not like to forget their past name and culture of their ancestral home.

People

The Gaddi people must have been an Aryan stock; they have a long, pointed nose like the Aryan Race. Their skin complexion is a little bit fair; they are shorter than the people from the Indian mainland. They are very good and honest people. "Gaddi tribes have strict moral values to which they try to stick always in even in the worst of circumstances. Indian Anthropologists have also observed that Gaddis are highly esteemed for their honesty, friendliness and disposition, and peaceful lifestyle. Crime is rarely found in this community. Most of the Gaddi tribe is non-vegetarian and they even consume goat milk" (indianmirror.com). On the other hand, the Khasis are the offspring of the Mongoloid race. Generally they are short stature and have a flat nose. Gurdon (2019, p. 2) writes, "the colour of the Khasi skin may be described as being usually brown, varying from dark to a light yellowish brown, according to locality". Before the coming of the Christian missionaries to the Khasi hills, the Khasis too had strict moral values; they had a strong belief in the motto, which says, *Ka mai ia ka hok*, which means earn righteousness. However, the onslaught of the Christians on the indigenous faith has turned the society into a Westernized one. D. Khongdup (2023) writes, "The indigenous people of the North East have suffered the onslaught of Christianisation for almost two centuries now. The suffering is not limited to the changed manner of prayer alone. It has resulted in colossal damage to the ethnic way of life, local culture, value systems, and traditions. The Khasi community has been one of the worst sufferers of the missionary tactics of spreading hate and discrimination. To comprehend the enormity of the damage, it is essential to understand what these priceless traditions and customary practices that we have lost". (Khongdup, D. 2023). How the church has uprooted the Khasi community in the north east. Organiser Voice of the Nation. (Retrieved May 16, 2023, from https://organiser.org/2023/03/16/165026/bharat/conversion-and-superstition how-church-has-uprooted-khasi-community-in-north-east/).

Religion

The Gaddis are Hindus by religion and worship Shiva as their main god. They venerate other gods, too, and a host of spirits to whom they sacrifice animals. They expect health and prosperity from Shiva, while they greatly fear the evil spirits who cause sickness, abortion in childbirth, and epidemics among animals. They must be appeased with the sacrifice of goats and sheep. Panchani (1994, p. 137) writes, "The Hinduism of the Gaddi cultural area is not different from that of the Pahari cultural area, but the people here are more inclined towards Sivite practices. Mani Mahesh, the trans-Himalayan God, is supreme for them as he looks at their herds when they are crossing the high peaks and passes of the Himalayas. They offer goat and sheep sacrifices to Siva. The Gaddis, before partaking of food or drink like rice beer, offer it to Siva and sprinkle it in his name". Singh (2001, p. 273) writes, "They are Shaivites and believe in the Shakti cult. They also worship supernatural powers, which they believe prevail in certain objects. "For the Gaddis, the supreme god is Siva" (Singh, 2001, p. 273). "The Gaddis believe in Siva and Parvati and offer sacrifices of sheep and goats. But they also have shrines of Kuleo on mountain passes. The Gaddis believe that a bad spirit can attack an enemy if recourse is taken to Jadu-Tona. The evil effects of Bhutas and Pretas are warded off with the help of the village shaman" (Singh, 2001, p. 273)

On the other hand, Khasis believe in God, the creator called 'U Blei', Kynpham Singh (1979, p. xxix) writes, "God is:

(i) *U Blei Trai Kynrad*: God is the Lord and Master of the Universe,

(ii) *U Blei Nongthaw Nongbuh:* God of the creator and cosmic Force,

(iii) *U Blei Najrong Natbian:* God, all-encompassing, filling the Heaven and Earth,

(iv) *U Blei Nongsei ia ka rynieng ka rta*: God the Giver and Determiner of Life,

(v) *U Blei Nongsambynta-Nongbuhbynta*: God the Dispenser, His is the power to bless the Home and the Clan so that they flourish and multiply. He has the power to give and to take. He is the power to give to each his own intellect, aptitudes".

Besides *U Blei*, they also worship the spirit of nature, like *U Rengkew u basa*. This *Ryngkew Basa* resides in the hill, mountain, or forest. These spirits of nature are called *Lei Synshar* (the ruling goddess). This *Lei synshar* is the god of animals and other living beings. These gods are *Lei Lum lei wah* (god of hill and water), *Lei Khlaw Lei btab* (god of the forest), etc. The worship of the hills' god among the Khasi is similar to Gaddi; the Khasi, too, sacrifice animals during rituals, such as goats and cocks. Unlike the Gaddi, the Khasi community never had an image of a god or a shrine to worship.

Marriage and Kinship

Both the Khasi as well as the Gaddi practice monogamous marriage; they are also clan exogamous. During marriage, the Khasi male leaves his parents' house and stays in the girl's house. However, among the Gaddis, the male goes and picks up the girl from her house and brings her to his house. In the words of Balokhra (Balokhra, 2015, p.82), "Gaddis considers girls as property of some other house who go to their husband's house after marriage". However, among the Khasi, the male stays in his wife's house after marriage; he does not belong to his in-laws; he still belongs to his own family. Even when he dies, his bones are entered in the sepulcher of his clan. There are similarities between the two tribes when it comes to Elopement. Balokhra (Balokhra, 2015, p.82) writes, "*Jhin Phuk or Brar Phuk* marriage- if a girl elopes with her lover without the consent of the parents, they solemnize the marriage by burning a bush wood and going round the fire eight times, hand in hand or with the bride's sheet tied to the boy's girdle. No ritual is performed". Among the Khasi, too, there is clan exogamy. When it comes to the elopement of the couple, no formal ritual is performed. Having informed their respective parents, the male goes and stays in his wife's house other rituals will follow suit. Divorce is permissible in both tribes. Dowry is very common among the Gaddi tribe, though it is not demanded. There is no Dowry at all among the Khasis.

The Gaddi tribe practices patrilineal kinship, which means the lineage traces from the father. They are patriarchal too. On the other hand, the Khasis are matrilineal kin; they trace their lineage from the mother. They are Patriarchal; however, the power is not on the father but rather on the mother's brother or maternal uncle. The Gaddis practiced the joint family, so did the Khasis, but in a different way. In the words of Gurdon (113, 2019), "The influence of Kni, or Mother's elder brother, in the Khasi family is very great, for he who is the manager on behalf of the mother, his position in the Khasi family being very similar to that of Karta in the Hindu joint family". The kinship ties among the Khasis are very strong; each clan knows its origin, and they even have an association.

Polity

The Khasis were ruled by the king called *Syeim*, but the king was not an absolute ruler; the power

rested with the council of ministers. Among the Khasis, there is no stratification; even the king is just a member of the society and could be removed at any moment. He is the only one who executes the plans and holds the ritual for the state. Gurdon (2019, p. 66) writes, “The head of the Khasi state is the *Siem* or the Chief. A Khasi state is a limited monarchy, the *Siem*’s powers being much circumscribed. According to custom, he can perform no act of any importance without first consulting and obtaining the approval of his durbar, upon which the state mantris”. On the other hand, there was no king among the Gaddis, and the society was regulated by the Brahmins. In the words of Panchani (1994, p.44), “Gaddi society has all the caste divisions of Hindu society. A Gaddi, therefore, may be Brahmin, Rajput, Kohli, Lohar, Rathi, Shipi, etc. The caste division is rigid”. Singh (2001, p. 269) writes, “Under the generic name of Gaddi, there are several castes of unequal status, such as Brahman, the Rajput, the artisan, and the low caste of the area”. Fuchs (1992, p.92) also writes “women are considered of inferior social status in Gaddi Society”. On the other hand, the Khasi women are highly valued. They are the inheritance of the family properties. However, in some communities of the Khasi, such as ‘The War’ community, even the male sibling gets his share, but a big share of the property is the youngest daughter of the family, who holds big responsibilities. She holds a lion’s share of her mother’s property, she holds the family religion, and she takes responsibility for her old-age parents, unmarried siblings, maternal uncle, and so on.

Occupation

Among the Gaddi land division is simple, the simple government land and the private. The land division among the Khasis is very complicated. There are community land, private land, village land, the Ri Raid land, restricted land, and sacred land. Khasi Hills falls under the sixth scheduled area. Therefore, most of the land is owned by the clans. A person can get free access to the community land and Ri Raid for growing crops and building houses. A village land is meant only for building a house. Gurdon (2019, p. 39) writes, “In dealing with agriculture, the lands of the Khasi and Jaintia hills may be divided into the following classes: a) the forest land, b) wet paddy land called *hali or pynthor*, c) high grassland, d) homestead land. Forest lands are cleared by the process known as *jhuming*. The trees are felled in early winter and allowed to lie till January or February”.

The Khasis and the Gaddis’ agriculturists. The Gaddis grow rice, corn, and other vegetables and cultivate apples. They also rear animals such as sheep and goats for subsistence. They are professional in rearing animals, and they also do carpentry, tailoring, small trades, and labour. Their main crafts are weaving. Among the Khasis, in the plateau region, rice is grown, and vegetables such as potatoes and cabbage. They also grow the indigenous snack called *Sohphlang* (native snack), and in the west Khasis, they grow rice and rear goats and cows for subsistence. In the northern part of the region, pineapples grow, and a variety of fruits and vegetables are grown. On the southern slopes of the hills, they practice cultivation such as betel leaf, betel nuts, oranges, etc. Both tribes domesticate bees. The main crafts of the Khasis are the weaving of different baskets with bamboo canes. Most of these arts and crafts are found in the *War* region of the Khasi-Jaintia hills.

Food

“Traditionally, the food of the Gaddi tribe was different from other communities. They used *Vania*, which is a ‘kharif’ grain made by grinding maize. Milk-based meals of the Gaddi shepherd family because livestock are an integral part of an agricultural production system. The meal products are prepared from the milk of the domestic Sheep, Goat, and Cow. The diet of Gaddi is healthy and

stable, consisting of milk and Ghee. Thirty-three Milk products are taken as *Mahani* (preparation out of buttermilk) and *Gurani* (mixture of Gur and milk). The main food crops in the Gaddi tribe are Maize, Wheat, Rice, Potatoes, Barley, and Dals with vegetables. Rice is mainly used as food, as *Lungadi* or *Piddha,* made from rice water obtained after boiling rice and *bhaat*, traditionally cooked rice, also called pucca food. Rice is not grown in tribal areas. The *Poha* and *Pratha* are made from maize and wheat flour. Their staple diet is maize is taken in the form of bread with either dal, available vegetables, with a paste of salt and chilli in the form of *chatni*. Barley and wheat are used in the form of *chapaties*, either single or mixed with Kodra and maize. *Madra* is a dish in marriage, prepared from *rajmah* (Handa, 2005). Panchani (1994, p. 61) also writes, "The food of the Gaddis consists of rice, maize, wheat, millet, vegetables, and pulses. They are very good agriculturists and grow a variety of crops. They are also fond of drinking, particularly a local rice beer and *sur* (a concoction of several herbs)".

Among the Khasi, rice has been the staple food in the plateau region and northern region as well, while in the southern region was millet because the place is conducive for growing millet. Gurdon (2019, p. 53) writes, "The staple food of the Khasis is rice; millet or job's tears are used instead. The latter is boiled, and a sort of porridge is obtained, which is eaten either hot or cold according to fancy". The Khasis are non-vegetarians; they love to eat wild animals too. Khasis eat lots of wild vegetables available locally. Those who inhabit *Bhoi* and *War* are getting vegetables from the forest throughout the year. They also have a very well-known local dish called *Tungrymbai*.

Dress and Costume

The male costumes of the Gaddis and the Khasis are not much different. A Gaddi keeps his hair trimmed and face clean-shaven with or without a moustache. His headgear of a turban of white cloth or a cap. He wears a shirt, *pyjama*, and *Chola* (cloak). The Chola is a long tunic extending to the thighs, generally of homespun wool, gathered at the waist with a *dora* (long woolen rope of black colour). If the *chola* is not worn, then a shirt is sported. The Shepherds among them wear a coat made of homespun wool. The Dora serves as respectable for a respectable tobacco pouch and ignitor (*kuthalu and saz*), small hukka and drat (stiletto)" (Panchani, 1994, p. 181). On the other hand, "The Khasi male keeps his hair trimmed and his face cleanly shaved. The head-dress is a turban of white or colored cloth. Most of the time he wears a sleeveless cloth called it *Jainphong*. All the Khasi women wear a kind of apron called *Jainkyrshah*. The dress of Khasi women has no waist" (Gurdon, 2019, p. 19). Gurdon (2019, p. 19) writes, "It is kept in position by knotting it over both the shoulders. Over the *jain-sem,* another garment called ka jain kup is worn. This is thrown over the shoulders like a cloak, the two ends being knotted in front; it hangs loosely down the back and sides to the ankles. Over the head and shoulders is worn a wrapper called *ka tap-moh-khlieh*. The Khasi women in cold weather wear gaiters which are often long stockings without feet, or, in the case of the poor, pieces of cloth wound around the legs like putties or cloth gaiters". Like any other women, Gaddi women too, love to adorn themselves with ornaments, Balokhra (2015, p. 84) writes, "The Silver ornaments are more common than the golden ones among Gaddi women." In the case of the Gaddi woman, Panchani (1994, p. 157) writes, "The Gaddi woman parts her hair and makes a single or double plait. Her headdress is a long *dupatta*. The body garment is a very distinct skirt called *Gaddini ka Ghagra,* which completely envelops her from shoulders to toes. Its sleeves are loose and full, and it is gathered at the waist by a *dora*, which is about 20 feet long woolen rope. *Choli* is the upper garment. It is made from cotton or muslin. A *Ghagra* needs about eight meters

of cloth, which may be woolen, cotton, or muslin. In Gadderan, the ladies generally wear woolen *ghagras* in winter. The Gaddi lady is profusely decked with ornaments. On the head, they wore a flat silver plate with a ring of silver medallions. The ears have large gold or silver earrings, and nose rings are found on both nostrils. The necklaces are single-stringed or multi-stringed. A necklace with angular silver plates and many strings, and a medallion is worn. This is called *Chander Har* (silver garland) and is the most popular ornament. Some use waistbands of silver. Rings are worn on two or three fingers. Bangles and anklets are popular."

Plate 1 & Plate 2 show the traditional attire of the Gaddi community.

Plate 1. Traditional attire of males of Gaddi tribe   Plate 2. Traditional attire of males of Gaddi tribe

Plate 3 and Plate 4 show the traditional attire of the Khasi Tribe

Plate 3: Traditional attire of males of Khasi tribe.   Plate 4: Traditional attire of female of khasi tribe

All the tribal communities are fond of music and dance. So are the Khasis and the Gaddis. Among the Khasis, the most important festivals are *Ka Shad Nongkrem* (*Nongkrem* dance) and Ka Shad *Weiking* (Thanksgiving Dance). There are several local festivals as well in different parts of the Khasi hills, organized by the respective clans. Gurdon (2019) writes, "The Nongkrem dance is part of what is known as the *Pom-blang* or goat killing ceremony, performed by the *Siem of Khyrim* (or

Nongkrem with the aid of his *sohblei* (high priest) and various Lyngdohs (or priests) to the *blei Synshar*(the ruling goddess), that the crops may prosper and that there may be a successful era in store for the people of the state." This festival is celebrated in the month of November every year. Another important festival of the Khasi is the *Weiking* dance, which is celebrated in the first or second week of April. Some important festivals of Gaddis are *Baishakhi* or *Bisu,* which is celebrated in April. Balokhra (2002, p .730) writes, "Baisakhi (Bishu, Bisoa): This fair is held at various places in the state. People may carry village deities with a music procession from one place to another. In the upper hills, people perform 'Mala Dace by joining hands to form a large circle. During that time, some games like archery and wrestling are also played. This festival is more popular in the lower hills". Shivratri is an individual festival that is celebrated in February. Minjar is celebrated in July, Sair is celebrated between Sep-October, Patroru Sagrand is celebrated in August and September, and Mani-Mahesh Yatra is celebrated in August.

Housing design

The house of the Gaddi tribe is made of wood (mostly cedar) and stone, which are mostly of two storeys. Animals are kept on the lower floor, which is called *Obra,* and the floor above the *Obra* is called *Obari*. Obari is a wide-open room in which they weave their sheets or Pattu. There is also a *verandah* inside the house, and this *verandah* is called *Vih*. In Bharmour, the winters are very long and cold. To avoid the cold winter, they shift their kitchen to *Obra*, with their animals, and the entrance is made inside the Obra from which they go to the top floor, which is called '*Chobu*' (a kind of stairs). Grass mats, or *chakla* (cushion), are used for sitting. Now almost all the villages have a complete system of electricity and water. In today's context, the design of houses has changed.

The traditional house of the Khasis is called *Ing pongdung*. It is the custom and tradition of the Khasis that whenever they construct a house, they raise it two to three feet above the ground. They put the dressed stones on all sides, called *Mawshan* (supporting stones), and the structure is built on top of these stones. The house is made of different types of hardwood trees; this wood can last more than a decade due to its exposure to fire. The roof of the house is covered with the particular types of grasses known as '*U Traw* and '*U Phlang Tylli'* or thorny palm trees locally available. There is only one window from the back side. Unlike Gaddi, the Khasi have a separate house for domestic animals such as cows, sheep, or pigs. Although there is a small space under the house, they are not keeping anything. The main reason for raising the structure of the house above the floor is to prevent the wood from rotten fast. Nowadays, with the coming of cement, the house design has also changed. Plates 6 and 7 show the traditional house structure of the Gaddi and Khasi tribes.

Plate 6: A traditional house of Khasis tribe

Plate 7: A traditional house of Gaddi tribe

Conclusion

The Gaddi is a hilly tribe of the Himalayan region inhabiting the western Himalayan region of north India in the state of Himachal Pradesh. On the other hand, the Khasi live in Northeast India in the state of Meghalaya, and they inhabit the Khasi and Jaintia Hills, which are a part of the Chota Nagpur plateau. The Khasi speaks the Austro-Asiatic language, and the Gaddi speaks Western Pahari. These two tribes are quite different from each other in their stature and appearance, language, dress and costume, and almost in every aspect of culture. However, some similarity exists when it comes to religion. The Gaddis declare themselves as Hindu, but the Khasis do not accept themselves as Hindu but rather declare themselves as an ethnic religion. All the tribal religion is part of Hinduism because they worship nature. But the way they worship differs from place to place. For example, the Gaddis sacrifice goats and sheep; for the Khasi, they sacrifice goats and roosters, not sheep.

The Khasis' matrilineal system is very unique in India and in the world as well. That's why it attracts so many writers and publishers. However, there are many areas unresearched by the researchers that need to be explored. The same happens to the Gaddi tribe, there are some places which is not accessible by road due to the rain. As far as I know, the in-depth study in these areas has not been done.

References:

1. Panchani, C. S. (1994). *The Himalayan Tribes*. Konark Publishers PVT LTD.
2. Balokhra, J. M. (2015). *The Wonderland Himachal Pradesh* (2015th Ed.). H.G. Publications.
3. Fuchs, Stephan. (1992). *The Aboriginal Tribes of India, The Aboriginal Tribes of India*. Mittal, INTER-INDIA PUBLICATION, Raja Garden.
4. Gurdon, P. R. T. (2019). *The Khasis*. Akansha Publication House.
5. Khongdup, S. (2023, May 16). *Conversion and superstition*. https://organiser.org.
6. Ngapkynta, H. B. (2016). *The History and Culture of the Khasi people*. Spectrump publications.
7. Nimmi. (n.d.). *Gaddi tribes*. Gaddi tribes, Gaddi, Tribes of Gaddi, Gaddi tribe people, Gaddi community. https://www.indianmirror.com/tribes/gadditribe.html
8. Ramsiej, D. T. (2014). *KaMariang Ha U Khasi Bad Ki Puriskam* . Ri Khasi Book Agency.
9. Ryngnga, P. T., & Sarma, S. T. (20116). *Meghalaya* (2016th Ed.). Geophil Publishing House.
10. Singh, K. S. (2001). *The Scheduled Tribes* (2001st ed., Vol. III). Oxford University Press.
11. Dkhar, U. (2015). *Protection of the Religious practices of Niam Khasi/Niamtre: A legal study*. Rikhasi publications.
12. 'Himachal Pradesh Encyclopedia' by Jag Mohan Balokhra, p.75,78,730, 2002
13. 'Himachal Pradesh Encyclopedia' by Jag Mohan Balokhra, p. 84, 2015
14. 'The Aboriginal Tribes of India' by Stephan Fuchs, p. 91, 92, 1992.
15. 'The Himalayan Tribes' by C.S. Panchani, p. 44, 61,137,153, 154, 157,181, 1994.
16. 'Ka Mariang Ha y Khasi bad ki Purinam-Puriskam' by Dhirendro Ramsiej, p. 49, 1992.
17. 'Meghalaya' by Phiban Khamti Ryngnga and Siddeswar Sarma, p. 14, 2016.
18. 'The History and Culture of the Khasi people' by Hamlet Bareh Ngapkynta, p. 30, 2010
19. 'The Antiquity of Khasi-Jaintia' by Pratima, Choudhary, p. 2, 1998,
20. 'Ki Khun Ki Hajar na jingkieng Ksiar' by Sumar Sing Sawian, p. 17, 2010

21. 'Protection of the Religious practices of Niam Khasi/Niamtre A legal study, by Umeshwari Dkhar, p. 5, 2015.
22. 'Kynpham Singh' by Kynpham Singh, p. xxiv, xxix, 1979.
23. 'The Khasis' by P.R.T Gurdon, p. 39, 66, 113,154, 155, 2019.
24. 'The Scheduled Tribes' by K.S. Singh, p. 269, 273, 2001.
25. https://www.indianmirror.com.tribe
26. D. Khongdup, "Conversion and superstition", May 16, 2023. https://organiser.org
27. Singh K.S, 2001(reprinted), 272. The Scheduled Tribes, Oxford University Press, YMCA Library Building. Jai Singh Road, New Delhi.
28. Kumar, M. (2021). *Tribal India and challenges*. Rawat publications.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

समुदायों की राजनीतिक सहभागिता और प्रतिनिधित्व : लोकतांत्रिक भारत में समावेश की दिशा में एक विश्लेषण

डॉ. अर्चना
सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग,
भक्त फूल सिंह महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलाँ, सोनीपत, हरियाणा

सारांश

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, जिसकी सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि क्या यह हर वर्ग, समुदाय और व्यक्ति को समान रूप से राजनीतिक प्रणाली में भाग लेने और प्रतिनिधित्व पाने का अवसर देता है। हमारे संविधान ने सभी नागरिकों को समानता, स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय और राजनीतिक भागीदारी का अधिकार दिया है। फिर भी, यथार्थ में समाज के अनेक वर्ग, विशेषकर हाशिए पर स्थित समुदाय— जैसे अनुसूचित जातियाँ (SC), अनुसूचित जनजातियाँ (ST), अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC), धार्मिक अल्पसंख्यक और महिलाएँ लंबे समय तक राजनीतिक निर्णय-प्रक्रियाओं से वंचित रहे हैं।

राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अर्थ है— समुदाय विशेष के लोग जनप्रतिनिधियों के रूप में संसद, विधानसभाओं और स्थानीय स्वशासन संस्थाओं में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करें। वहीं राजनीतिक सहभागिता का तात्पर्य केवल चुनावों में मतदान तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें राजनीतिक चर्चा में भाग लेना, विरोध या समर्थन करना, संगठनों में सक्रिय रहना और अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाना शामिल है। भारत ने स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही इन समुदायों के राजनीतिक सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में सीटों का आरक्षण, पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं और पिछड़े वर्गों को प्रतिनिधित्व देना तथा शिक्षा व नौकरियों में आरक्षण जैसी नीतियाँ, राजनीतिक समावेशन की दिशा में मील का पत्थर हैं।

पंचायती राज अधिनियम, 1992 ने स्थानीय स्तर पर लोकतंत्र को सुदृढ़ किया और महिलाओं सहित वंचित वर्गों को राजनीति में सीधे भाग लेने का अवसर प्रदान किया। आज देश में लाखों महिलाएँ और दलित/आदिवासी प्रतिनिधि ग्राम पंचायतों और नगर निकायों में नेतृत्व की भूमिका निभा रहे हैं। यह केवल प्रतिनिधित्व का प्रतीक नहीं, बल्कि एक सशक्त सामाजिक परिवर्तन का संकेत है। इन संवैधानिक प्रयासों के बावजूद, कई चुनौतियाँ अभी भी विद्यमान हैं। चुनावी राजनीति में धनबल, बाहुबल, जातिवादी सोच और पितृसत्तात्मक मानसिकता, हाशिए पर स्थित समुदायों के प्रतिनिधियों की वास्तविक स्वतंत्रता और निर्णय-क्षमता को सीमित करती हैं। कई बार देखा गया है कि चुने गए प्रतिनिधि केवल प्रतीकात्मक बनकर रह जाते हैं, जबकि निर्णय प्रक्रिया में उनका प्रभाव न्यूनतम होता है।

राजनीतिक दलों की भूमिका भी कई बार आलोचनात्मक दृष्टि से देखी जाती है। अधिकतर दल चुनावों में वंचित वर्गों को केवल "वोट बैंक" के रूप में देखते हैं, परंतु उन्हें संगठनात्मक स्तर पर नेतृत्व के अवसर देने में पीछे रह जाते हैं। महिलाओं

को टिकट देने में झिझक, दलित नेताओं को केवल सीमित क्षेत्रीय पहचान देना, और अल्पसंख्यकों को प्रतिनिधित्व न देना– यह सब इस बात की ओर संकेत करता है कि राजनीतिक सहभागिता केवल चुनावी रणनीति बनकर न रह जाए।

इसके विपरीत, कुछ प्रगतिशील उदाहरण भी देखने को मिले हैं। जैसे– दलित आंदोलन से निकले नेता (डॉ. भीमराव अंबेडकर, कांशीराम, मायावती), आदिवासी नेताओं का उदय (हेमंत सोरेन), मुस्लिम और ईसाई समाज से आने वाले जनप्रतिनिधि, तथा पंचायत स्तर पर सफल महिला सरपंचों की कहानियाँ– ये सब दर्शाते हैं कि यदि अवसर और समर्थन मिले तो ये समुदाय नेतृत्व में भी सफल हो सकते हैं।

मूल शब्द : राजनीतिक प्रतिनिधित्व, राजनीतिक सहभागिता, समुदाय, सामाजिक न्याय, आरक्षण, लोकतंत्र, सशक्तिकरण, समावेशन, जनप्रतिनिधि, संगठनात्मक, आलोचनात्मक, पितृसत्तात्मक, निर्णय-क्षमता।

1. प्रस्तावना

भारत एक बहुधार्मिक, बहुजातीय, बहुभाषी और सांस्कृतिक विविधता से परिपूर्ण राष्ट्र है, जिसे दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र माना जाता है। इस लोकतांत्रिक ढाँचे की विशेषता यह है कि यह प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार और स्वतंत्रता प्रदान करता है– चाहे वह किसी भी जाति, धर्म, वर्ग, लिंग या क्षेत्र से संबंध रखता हो। भारतीय संविधान ने "समानता", "न्याय" और "स्वतंत्रता" जैसे मूलभूत सिद्धांतों को आधार बनाकर यह सुनिश्चित किया है कि समाज के सभी वर्गों को राजनीतिक भागीदारी और प्रतिनिधित्व का पूरा अवसर मिले। व्यवहारिक धरातल पर इस लोकतांत्रिक आदर्श की प्राप्ति में कई चुनौतियाँ सामने आती हैं। सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित समुदाय– जैसे अनुसूचित जातियाँ (SC), अनुसूचित जनजातियाँ (ST), अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC), धार्मिक अल्पसंख्यक और महिलाएँ– आज भी राजनीति की मुख्यधारा से अपेक्षित स्तर पर जुड़े नहीं हैं। ये समुदाय ऐतिहासिक रूप से भेदभाव, शोषण और बहिष्करण के शिकार रहे हैं, जिसके कारण उनके सामाजिक-आर्थिक विकास में गंभीर बाधाएँ उत्पन्न हुई।

इन हाशिए पर स्थित समुदायों की पहचान केवल उनकी जनसंख्या संख्या के आधार पर नहीं की जा सकती, बल्कि यह उनके उस ऐतिहासिक, सामाजिक और संस्थागत बहिष्करण की ओर इशारा करती है जो उन्हें संसाधनों, अवसरों और निर्णय लेने की प्रक्रिया से दूर रखता आया है। उदाहरण के लिए, दलितों को सदियों तक सामाजिक बहिष्कार और जातिगत भेदभाव का सामना करना पड़ा; आदिवासी समुदायों को उनके जल, जंगल और जमीन से विस्थापित किया गया; और महिलाओं को पारंपरिक रूप से घरेलू क्षेत्र तक सीमित रखा गया।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य यह है कि लोकतांत्रिक भारत में इन समुदायों की राजनीतिक सहभागिता और प्रतिनिधित्व की स्थिति का सम्यक विश्लेषण किया जाए। इसमें यह समझने का प्रयास किया गया है कि संवैधानिक प्रावधान, आरक्षण व्यवस्था, पंचायती राज संस्थाओं में भागीदारी और राजनीतिक दलों की नीतियाँ इन वर्गों के सशक्तिकरण में कितनी प्रभावशाली रही हैं। साथ ही यह भी अध्ययन किया गया है कि इन समुदायों के प्रतिनिधित्व में मात्रात्मक वृद्धि हुई है या वास्तव में उनकी निर्णयकारी भूमिका भी सुदृढ़ हुई है।

इस विषय का महत्त्व इसलिए भी है क्योंकि राजनीतिक भागीदारी और प्रतिनिधित्व केवल सत्ता में भागीदारी नहीं है, बल्कि यह सामाजिक समावेश, आत्म-सम्मान, और नीति-निर्धारण में भागीदारी का माध्यम है। जब कोई समुदाय अपनी समस्याओं और आवश्यकताओं को स्वयं प्रस्तुत करने में सक्षम होता है, तभी शासन प्रणाली उनकी ओर उत्तरदायी बनती है।

अतः यह शोध न केवल राजनीतिक विज्ञान के क्षेत्र में प्रासंगिक है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, समावेशन और सशक्तिकरण की व्यापक अवधारणाओं को भी छूता है। लोकतंत्र की वास्तविक सफलता तभी मानी जा सकती है जब उसकी पहुँच समाज के अंतिम व्यक्ति तक हो– न केवल काग़ज़ पर, बल्कि व्यवहार में भी।

2. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारतीय समाज की संरचना प्राचीन काल से ही सामाजिक वर्गों और जातियों पर आधारित रही है, जो शक्ति, संसाधन

और अवसरों के असमान वितरण की नींव रही है। विशेषकर दलित, आदिवासी, पिछड़े वर्ग और धार्मिक अल्पसंख्यक जैसे समुदाय, पारंपरिक सामाजिक ढांचे में शोषण, भेदभाव और उपेक्षा का शिकार रहे हैं। इस ऐतिहासिक असमानता ने इन समुदायों को केवल आर्थिक और शैक्षणिक ही नहीं, बल्कि राजनीतिक रूप से भी हाशिए पर धकेल दिया। उनका राजनीतिक अधिकारों में भाग न लेना न केवल उनके सशक्तिकरण में बाधा बना, बल्कि लोकतंत्र के मूल सिद्धांत— समानता, स्वतंत्रता और न्याय— को भी चुनौती देता रहा।

ब्रिटिश शासन काल के दौरान भी, प्रशासनिक संरचनाएँ और राजनीतिक संस्थाएँ मूलतः उच्च जातियों और अभिजात वर्ग के लिए आरक्षित रहीं। भारत में प्रतिनिधित्व की अवधारणा पहली बार भारतीय परिषद अधिनियम (Indian Councils Act) 1909, जिसे 'मॉर्ले-मिंटो सुधार' कहा जाता है, के माध्यम से आई। इस अधिनियम के अंतर्गत सीमित रूप में कुछ समुदायों को विधान परिषदों में प्रतिनिधित्व का अधिकार मिला, लेकिन यह अधिकार सामूहिक नहीं बल्कि व्यक्तियों तक सीमित था।

1932 में ब्रिटिश प्रधानमंत्री रामसे मैकडोनाल्ड द्वारा घोषित 'कम्युनल अवार्ड' ने पहली बार अनुसूचित जातियों को पृथक निर्वाचक मंडल (separate electorates) की सुविधा देने की बात कही। इस प्रस्ताव का उद्देश्य दलितों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व देना था, लेकिन महात्मा गांधी के विरोध के बाद यह मुद्दा विवादास्पद हो गया। इसके परिणामस्वरूप पूना समझौता हुआ, जिसके तहत दलितों को पृथक निर्वाचक मंडल के स्थान पर सामान्य निर्वाचन में आरक्षित सीटें दी गईं। यह समझौता दलित प्रतिनिधित्व की दिशा में एक ऐतिहासिक मोड़ था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत के संविधान ने सामाजिक न्याय और समानता को केन्द्र में रखते हुए, अनुच्छेद 330 और 332 के माध्यम से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए लोकसभा और विधानसभाओं में सीटों का आरक्षण सुनिश्चित किया। इसके अतिरिक्त, अनुच्छेद 15(4) और 16(4) ने राज्य को यह शक्ति दी कि वह सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए विशेष प्रावधान कर सके।

पंचायती राज व्यवस्था में 1992 के 73वें और 74वें संविधान संशोधन अधिनियमों द्वारा स्थानीय निकायों में अनुसूचित जातियों, जनजातियों और महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई, जिससे राजनीतिक प्रतिनिधित्व को जमीनी स्तर तक पहुँचाया जा सका। इस प्रकार भारत में हाशिए पर स्थित समुदायों के राजनीतिक सशक्तिकरण की यात्रा ऐतिहासिक संघर्ष, संवैधानिक विकास और सामाजिक आंदोलनों की देन है। यह पृष्ठभूमि समझने से यह स्पष्ट होता है कि राजनीतिक समावेशन की प्रक्रिया केवल एक राजनीतिक नीति नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय के संघर्ष की अभिव्यक्ति है।

3. राजनीतिक प्रतिनिधित्वरू संरचनात्मक दृष्टिकोण

भारतीय लोकतंत्र का आधारभूत सिद्धांत यह है कि प्रत्येक नागरिक को राजनीतिक भागीदारी और प्रतिनिधित्व का समान अवसर प्राप्त हो। लेकिन भारतीय समाज की ऐतिहासिक विषमता और सामाजिक बहिष्करण को देखते हुए यह स्पष्ट था कि कुछ समुदायों को विशेष संवैधानिक संरक्षण के बिना समान प्रतिनिधित्व नहीं मिल सकेगा। इस उद्देश्य से संविधान ने राजनीतिक प्रतिनिधित्व को संरचनात्मक रूप से न्यायसंगत बनाने के लिए आरक्षण व्यवस्था को अपनाया।

3.1 लोकसभा, राज्यसभा और विधानसभाओं में आरक्षण

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 330 और 332 के अंतर्गत अनुसूचित जातियों (SC) और अनुसूचित जनजातियों (ST) के लिए संसद (लोकसभा) और राज्य विधानसभाओं में सीटों का आरक्षण सुनिश्चित किया गया है। इस व्यवस्था के तहत प्रत्येक राज्य और केंद्र शासित प्रदेश में अनुसूचित वर्गों की जनसंख्या के अनुपात में सीटें आरक्षित की जाती हैं। उदाहरणतः, यदि किसी राज्य में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या 15% है, तो विधान सभा की लगभग 15% सीटें उनके लिए आरक्षित होती हैं। यह व्यवस्था इन वर्गों को राजनीतिक निर्णय-प्रक्रिया में सीधा प्रवेश देने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

राज्यसभा में आरक्षण का कोई सीधा प्रावधान नहीं है क्योंकि इसके सदस्य निर्वाचित नहीं होते, बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से राज्य विधानसभाओं द्वारा चुने जाते हैं। लेकिन राजनीतिक दलों की जिम्मेदारी बनती है कि वे अपने टिकट आवंटन में

समावेशी दृष्टिकोण अपनाएँ।

3.2 पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण

1992 के 73वें और 74वें संविधान संशोधन अधिनियमों ने ग्रामीण और शहरी स्थानीय निकायों (पंचायत और नगर पालिका) में अनुसूचित जातियों, जनजातियों और महिलाओं के लिए आरक्षण का प्रावधान किया। इन संशोधनों ने न केवल राजनीतिक सहभागिता को जमीनी स्तर पर पहुँचाया, बल्कि लाखों वंचित वर्गों को पहली बार नेतृत्व का अवसर दिया। प्रत्येक राज्य में पंचायत की सीटों का कम-से-कम ै ब्ै ज के लिए जनसंख्या के अनुपात में, और महिलाओं के लिए कम से कम 33% आरक्षण अनिवार्य किया गया। कई राज्यों ने इसे बढ़ाकर 50% तक कर दिया है।

3.3 महिला आरक्षण विधेयक 2023 का प्रभाव

"नारी शक्ति वंदन अधिनियम" (महिला आरक्षण विधेयक, 2023) को भारतीय संसद द्वारा पारित किया गया, जिसके अंतर्गत लोकसभा और राज्य विधानसभाओं की सीटों में 33% आरक्षण महिलाओं के लिए निर्धारित किया गया है। यह विधेयक एक ऐतिहासिक उपलब्धि है, जो लंबे समय से लंबित था। इसका उद्देश्य संसद और विधानसभाओं में महिला प्रतिनिधित्व को संस्थागत रूप से सुनिश्चित करना है। यद्यपि यह प्रावधान जनगणना और परिसीमन प्रक्रिया पूर्ण होने के बाद लागू होगा, परंतु यह महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को नया आयाम देने वाला कदम है।

4. राजनीतिक सहभागितारू व्यवहारिक पहलू

राजनीतिक सहभागिता किसी भी लोकतंत्र की आत्मा होती है। यह न केवल मतदान करने की प्रक्रिया तक सीमित होती है, बल्कि इसमें विभिन्न राजनीतिक गतिविधियों में नागरिकों की भागीदारी, विचार-विमर्श, विरोध, आंदोलन, तथा राजनीतिक संगठनों और दलों में सक्रिय भूमिका शामिल होती है। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में राजनीतिक सहभागिता का स्तर समुदाय विशेष की सामाजिक, आर्थिक, और शैक्षणिक स्थिति पर निर्भर करता है। विशेष रूप से हाशिए पर स्थित समुदायों— जैसे अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित जनजातियाँ, अन्य पिछड़ा वर्ग, धार्मिक अल्पसंख्यक और महिलाएँ ऐतिहासिक रूप से राजनीतिक व्यवस्था से अलग-थलग रहे हैं।

हालांकि भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से इन समुदायों की राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि हुई है, फिर भी यह सहभागिता अब भी असमान और सीमित है। उदाहरणतः, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षित सीटों पर उम्मीदवार तो खड़े होते हैं, किंतु चुनाव प्रचार, संसाधनों तक पहुँच, और स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता पर कई बार उच्च जातियों और राजनीतिक दलों का अप्रत्यक्ष नियंत्रण रहता है। इससे प्रतिनिधित्व का लोकतांत्रिक मूल्य कमज़ोर पड़ता है।

4.1 मतदान व्यवहार

हाल के वर्षों में यह देखा गया है कि हाशिए पर स्थित समुदायों का मतदान प्रतिशत बढ़ा है, विशेषकर महिलाओं और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों का। यह जागरूकता और राजनीतिक चेतना में वृद्धि का संकेत है। हालांकि, यह भी सत्य है कि शहरी क्षेत्रों में, या उच्च शिक्षित तबकों में, इन समुदायों की राजनीतिक भागीदारी अपेक्षाकृत कम बनी हुई है, विशेषकर जहाँ प्रतिनिधित्व की संभावनाएँ कमजोर हैं।

4.2 राजनीतिक दलों में भागीदारी

राजनीतिक सहभागिता का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि क्या ये समुदाय राजनीतिक दलों में संगठनात्मक भूमिका निभाते हैं। इस संदर्भ में यह देखा गया है कि दलित, पिछड़ा वर्ग और आदिवासी समुदाय के लोग जमीनी कार्यकर्ता या स्थानीय नेता के रूप में तो सक्रिय हैं, परंतु शीर्ष नेतृत्व या नीतिगत निर्णयों में उनकी उपस्थिति नगण्य रहती है। यही स्थिति महिलाओं के साथ भी है।

4.3 सामाजिक आंदोलन और जागरूकता

दलित आंदोलन, आदिवासी अधिकार आंदोलन, महिला संगठनों के प्रयास और अल्पसंख्यकों के संगठनात्मक संघर्षों

ने राजनीतिक सहभागिता को नई दिशा दी है। बहुजन समाज पार्टी, दलित पैंथर, झारखंड मुक्ति मोर्चा जैसे दल और संगठन इस दिशा में महत्वपूर्ण उदाहरण हैं।

5. बाधाएँ और चुनौतियाँ

भारत जैसे विविधतापूर्ण लोकतंत्र में राजनीतिक समावेशन की प्रक्रिया जटिल और बहुआयामी रही है। यद्यपि संविधान ने हाशिए पर स्थित समुदायों को अधिकार और प्रतिनिधित्व प्रदान किया है, फिर भी व्यवहारिक स्तर पर अनेक संरचनात्मक, सामाजिक और मानसिक बाधाएँ आज भी उनकी राजनीतिक सहभागिता और प्रभावी प्रतिनिधित्व में अवरोध उत्पन्न करती हैं। ये बाधाएँ केवल संस्थागत नहीं, बल्कि गहरे सांस्कृतिक और ऐतिहासिक स्तर पर भी जमी हुई हैं।

5.1 सामाजिक-आर्थिक विषमता

हाशिए पर स्थित समुदायों की राजनीतिक भागीदारी में सबसे बड़ी बाधा आर्थिक और सामाजिक असमानता है। इन समुदायों के अधिकांश लोग निर्धनता, भूमिहीनता, बेरोजगारी और अस्थायी कार्यों पर निर्भर रहते हैं, जिससे उनकी राजनीतिक प्राथमिकताएँ सीमित रह जाती हैं। चुनावी राजनीति में भाग लेना एक महँगा और संसाधन-सघन कार्य है, जिसमें प्रचार, जनसंपर्क और संगठन निर्माण के लिए आर्थिक संसाधनों की आवश्यकता होती है। आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों के लिए चुनाव लड़ना एक कठिन कार्य बन जाता है। सामाजिक स्तर पर जातिगत भेदभाव और ऊँच-नीच की मानसिकता ने भी इन समुदायों को आत्मविश्वास और नेतृत्व से वंचित रखा है।

5.2 जातिवाद, लिंगभेद और सांस्कृतिक दमन

जातिगत संरचना, विशेषकर ग्रामीण भारत में, आज भी मजबूत है। अनुसूचित जातियों के नेताओं को न केवल सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ता है, बल्कि कई बार उन्हें निर्वाचित होने के बाद भी स्वतंत्र रूप से कार्य करने से रोका जाता है। महिलाओं को भी पितृसत्तात्मक सोच के कारण राजनीति में आने से रोका जाता है या यदि वे चुनी भी जाती हैं, तो उनके स्थान पर 'प्रॉक्सी प्रतिनिधि' (पति या परिवार का सदस्य) कार्य करता है। सांस्कृतिक दमन के कारण इन समुदायों की भाषा, परंपराएँ और दृष्टिकोण राजनीतिक विमर्श से बाहर कर दिए जाते हैं, जिससे वे लोकतांत्रिक प्रणाली में उपेक्षित महसूस करते हैं।

5.3 राजनीतिक दलों की सीमित समावेशी रणनीति

हालांकि कई राजनीतिक दल सामाजिक न्याय की बात करते हैं, परंतु वे अक्सर वंचित समुदायों को केवल "वोट बैंक" के रूप में देखते हैं। टिकट वितरण में पारदर्शिता की कमी, शीर्ष नेतृत्व में विविधता का अभाव, और संगठनात्मक पदों पर प्रभुत्वशाली वर्गों का वर्चस्व, इन दलों की सीमित समावेशी रणनीति को दर्शाते हैं। दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक या महिला कार्यकर्ता जमीनी स्तर पर तो सक्रिय होते हैं, परंतु उन्हें नीति निर्धारण की प्रक्रियाओं में शामिल नहीं किया जाता।

5.4 शिक्षा और जागरूकता की कमी

राजनीतिक सहभागिता के लिए राजनीतिक साक्षरता अत्यंत आवश्यक है। हाशिए पर स्थित समुदायों में शिक्षा का स्तर अभी भी अपेक्षाकृत कम है, जिससे उनमें अधिकारों की समझ, संगठन निर्माण, और राजनीतिक संवाद की क्षमता सीमित रहती है। चुनावों में भागीदारी तो बढ़ी है, लेकिन राजनीतिक चेतना, विचारशीलता और दीर्घकालिक रणनीति के स्तर पर अब भी इन समुदायों को सशक्तिकरण की आवश्यकता है।

6. प्रगतिशील पहल और सकारात्मक उदाहरण

हालाँकि हाशिए पर स्थित समुदायों की राजनीतिक सहभागिता में अनेक बाधाएँ मौजूद हैं, फिर भी समय-समय पर कुछ प्रगतिशील पहलें और सकारात्मक उदाहरण ऐसे सामने आए हैं, जिन्होंने लोकतांत्रिक भारत में समावेश की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन प्रयासों ने यह सिद्ध किया है कि यदि अवसर, समर्थन और सशक्तिकरण का वातावरण

उपलब्ध हो, तो ये समुदाय नेतृत्व की भूमिका में प्रभावी रूप से उभर सकते हैं।

6.1 महिलाओं की ग्राम पंचायतों में प्रभावी भूमिका

73वें संविधान संशोधन अधिनियम (1992) के तहत पंचायत राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए न्यूनतम 33% आरक्षण का प्रावधान किया गया, जिसे कई राज्यों ने बढ़ाकर 50% कर दिया है। इस आरक्षण व्यवस्था के तहत लाखों महिलाएँ भारत के गाँवों में सरपंच, पंचायत सदस्य और जिला परिषद प्रमुख के रूप में चुनी गईं। शुरुआती वर्षों में यह आशंका जताई गई थी कि महिलाएँ केवल "प्रॉक्सी" बनकर रहेंगी और उनके स्थान पर उनके पति या परिवार के सदस्य शासन करेंगे। लेकिन समय के साथ यह धारणा टूटी और कई महिला सरपंचों ने स्वच्छता, शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सुरक्षा और जल प्रबंधन जैसे मुद्दों पर ठोस कार्य किए। जैसे बिहार की राजकुमारी देवी, महाराष्ट्र की चंद्रकला सरपंच, और राजस्थान की कल्पना भील, जिन्होंने ग्राम विकास में सक्रिय नेतृत्व प्रदान कर यह साबित किया कि महिलाएँ केवल 'आरक्षित' सीटों की हकदार नहीं, बल्कि नेतृत्व की पूर्ण अधिकारी हैं।

6.2 कुछ सफल जनप्रतिनिधि

मायावती (बहुजन समाज पार्टी) भारतीय राजनीति की एक ऐतिहासिक प्रतीक हैं, जिन्होंने दलित समुदाय से निकलकर न केवल उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री पद को चार बार संभाला, बल्कि करोड़ों वंचित वर्ग के लोगों को यह विश्वास भी दिया कि वे सत्ता के केंद्र तक पहुँच सकते हैं। इसी प्रकार, हेमंत सोरेन, झारखंड मुक्ति मोर्चा से, आदिवासी समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हुए मुख्यमंत्री बने और झारखंड में आदिवासी अधिकारों व संरक्षण को प्राथमिकता दी। ये उदाहरण दर्शाते हैं कि हाशिए के समुदायों से आने वाले व्यक्ति यदि सही दिशा और समर्थन प्राप्त करें, तो वे न केवल सफल जनप्रतिनिधि बन सकते हैं, बल्कि सामाजिक बदलाव के वाहक भी हो सकते हैं।

6.3 राजनीतिक साक्षरता अभियान

देशभर में कई स्वयंसेवी संगठन और सरकारी संस्थान राजनीतिक साक्षरता और जागरूकता अभियान चला रहे हैं। जैसे– नेशनल इलेक्शन वॉच, ADR (Association for Democratic Reforms), और विभिन्न NGOs द्वारा आयोजित "जागरूक मतदाता अभियान", इन अभियानों ने ग्रामीण और वंचित वर्गों में मतदान के महत्व, उम्मीदवारों की पृष्ठभूमि की जानकारी और चुनावी अधिकारों को लेकर जागरूकता फैलाई है।

7. सुधार हेतु सुझाव

भारत में हाशिए पर स्थित समुदायों की राजनीतिक सहभागिता और प्रतिनिधित्व को सशक्त बनाने के लिए जहाँ एक ओर संवैधानिक प्रावधानों और आरक्षण नीतियों ने एक आधार तैयार किया है, वहीं दूसरी ओर इन प्रयासों को और प्रभावशाली और समावेशी बनाने की आवश्यकता है। इस दिशा में व्यवस्थागत सुधार, राजनीतिक शिक्षा, पारदर्शिता और नागरिक सहभागिता जैसे कई पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। नीचे कुछ प्रमुख सुधार सुझाव प्रस्तुत हैं :

7.1 राजनीतिक शिक्षा और नेतृत्व विकास

राजनीतिक सहभागिता का आधार केवल मतदान नहीं, बल्कि राजनीतिक समझ और नेतृत्व क्षमता का विकास है। हाशिए पर स्थित समुदायों, विशेषकर युवाओं और महिलाओं को नेतृत्व प्रशिक्षण, नागरिक अधिकारों की जानकारी, और नीति-निर्माण की प्रक्रिया से अवगत कराना अत्यंत आवश्यक है।

इसके लिए स्कूल-कॉलेज स्तर पर नागरिक शिक्षा (Civic Education) को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए। साथ ही, छळव्े और सरकारी संस्थानों को मिलकर ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में राजनीतिक कार्यशालाओं (Political Workshops) का आयोजन करना चाहिए।

7.2 दलगत स्तर पर समावेशी उम्मीदवार चयन नीति

राजनीतिक दलों को केवल आरक्षित सीटों पर ही नहीं, बल्कि सामान्य सीटों पर भी दलित, आदिवासी, व्ठब्, अल्पसंख्यक

और महिला उम्मीदवारों को टिकट देना चाहिए।

इसके लिए चुनाव आयोग या विधायी स्तर पर दलों के आंतरिक लोकतंत्र और समावेशी संरचना को अनिवार्य बनाने की दिशा में प्रयास किए जाने चाहिए। जैसे महिलाओं के लिए 33% आरक्षण की तरह, दलों को अपने सभी उम्मीदवारों में न्यूनतम प्रतिशत वंचित वर्गों से तय करने की बाध्यता हो सकती है।

7.3 चुनावी सुधाररू पारदर्शिता और जवाबदेही

प्रत्याशियों की शैक्षणिक योग्यता, आपराधिक पृष्ठभूमि, और संपत्ति विवरण जैसी जानकारियाँ आज भी अधिकांश मतदाताओं की पहुँच से दूर हैं। चुनाव आयोग को इसे और अधिक सुलभ, सरल और क्षेत्रीय भाषाओं में प्रचारित करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, उम्मीदवारों के चुनाव खर्च की निगरानी, चुनावी हिंसा पर नियंत्रण, और नकद/सामग्री वितरण पर कड़ा अंकुश लगाया जाना चाहिए ताकि निष्पक्ष प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो सके।

7.4 नागरिक समाज की भागीदारी को प्रोत्साहन

स्वयंसेवी संस्थाओं, शैक्षणिक संस्थानों, महिला एवं युवा संगठनों को लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत करने में बड़ी भूमिका निभानी चाहिए। ये संस्थाएँ जन जागरूकता, वंचित वर्गों की आवाज़ को मंच देने, और नीतिगत सुझावों के निर्माण में सहायक हो सकती हैं।

8. निष्कर्ष

भारत का लोकतंत्र विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक प्रयोगों में से एक है, जहाँ विविधता केवल एक सामाजिक वास्तविकता नहीं, बल्कि राजनीतिक संरचना की नींव भी है। इस विविधता में उन समुदायों की भी भागीदारी होनी चाहिए जो लंबे समय से सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से हाशिए पर रहे हैं। लोकतंत्र का मूल तत्त्व यह है कि प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह किसी भी वर्ग, जाति, लिंग या धर्म से जुड़ा हो, अपनी आवाज़, आकांक्षाओं और अधिकारों को राजनीतिक प्रक्रिया के माध्यम से अभिव्यक्त कर सके।

इस शोध के माध्यम से यह स्पष्ट हुआ है कि राजनीतिक समावेशन ही लोकतंत्र की सफलता की कुंजी है। यदि समाज का कोई हिस्सा राजनीतिक निर्णय-प्रक्रिया से बाहर रह जाता है, तो लोकतंत्र का स्वरूप अधूरा और एकांगी बन जाता है। हाशिए पर स्थित समुदायों जैसे अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित जनजातियाँ, पिछड़ा वर्ग, धार्मिक अल्पसंख्यक और महिलाओं को राजनीति में केवल भाग लेने का नहीं, बल्कि निर्णय लेने की शक्ति प्राप्त होनी चाहिए। संविधान निर्माताओं ने इस आवश्यकता को पहचानते हुए अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए संसद व विधानसभाओं में आरक्षण, महिलाओं के लिए पंचायतों में प्रतिनिधित्व, और सामाजिक न्याय से संबंधित अनेक प्रावधानों को सम्मिलित किया। लेकिन केवल संवैधानिक प्रावधान पर्याप्त नहीं हैं। वास्तविक परिवर्तन तब आता है जब समाज की मानसिकता बदले, राजनीतिक संस्थाएँ समावेशी बनें, और वंचित समुदायों को राजनीतिक प्रशिक्षण, संसाधन और आत्मविश्वास प्रदान किया जाए।

इस अध्ययन से यह भी सामने आया है कि राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि तो हुई है, लेकिन गुणवत्ता और स्वतंत्रता के स्तर पर अब भी बहुत काम किया जाना बाकी है। कई बार प्रतिनिधित्व केवल प्रतीकात्मक बनकर रह जाता है, जिसमें प्रतिनिधियों की स्वतंत्र निर्णय लेने की शक्ति सीमित होती है। राजनीतिक दलों की रणनीतियों, चुनावी प्रक्रिया में पारदर्शिता की कमी, और सामाजिक व सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों के कारण यह प्रक्रिया बाधित होती है।

इसलिए आवश्यक है कि हम राजनीतिक समावेशन को सिर्फ़ विधिक या संवैधानिक मुद्दा न मानकर एक सामाजिक आंदोलन और संस्थागत सुधार की प्रक्रिया के रूप में देखें। राजनीतिक शिक्षा, नेतृत्व विकास, चुनावी सुधार और नागरिक समाज की भागीदारी को सुदृढ़ बनाना समय की माँग है। यदि भारत को एक सशक्त, न्यायपूर्ण और टिकाऊ लोकतंत्र बनाना है, तो हाशिए पर स्थित समुदायों की आवाज को न केवल सुना जाए, बल्कि उन्हें नीति-निर्माण की प्रक्रिया में प्रभावी भागीदारी भी दी जाए। जब तक हर व्यक्ति स्वयं को राजनीतिक व्यवस्था का सक्रिय हिस्सा नहीं मानेगा, तब तक "जनता के लिए,

जनता द्वारा, जनता का शासन''— केवल एक आदर्श वाक्य बनकर रह जाएगा।

अतः यह अनिवार्य है कि भारत एक ऐसा लोकतंत्र बनाए जहाँ हर वर्ग की समान भागीदारी सुनिश्चित हो— न केवल कागज़ों पर, बल्कि वास्तविकता में।

संदर्भ सूची

- बी. आर. अंबेडकर, (1945). जाति का उन्मूलन (Annihilation of Caste). नयी दिल्ली : नेशनल बुक ट्रस्ट।
- घनश्याम शाह, (2010). Social Movements in India: A Review of Literature- सेज पब्लिकेशंस।
- रिंकू पॉल, (2020). भारत में दलित राजनीति : संघर्ष, प्रतिनिधित्व और परिवर्तन. नई दिल्ली : ओरिएंट ब्लैकस्वान।
- गुरु गोपाल Experience, Caste and the Everyday Social
- Election Commission of India (ECI). (2023). Statistical Reports on General Elections. https://eci.gov.in
- Ministry of Panchayati Raj, Government of India. (2022). Panchayati Raj and Women Empowerment. https://www.panchayat.gov.in
- The Constitution of India. (संविधान के अनुच्छेद 330, 332, 243D आदि) - भारत सरकार का आधिकारिक प्रकाशन
- Government of India. (2023). The Constitution (106th Amendment) Act, 2023 - Women's Reservation Bill नारी शक्ति वंदन अधिनियम) PRS India - https://prsindia.org
- Sukhadeo Thorat, & Newman, S. Katherine Newman, (2012). Blocked by Caste: Economic Discrimination in Modern India. Oxford University Press.
- Christophe Jaffrelot, (2003). India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India. Permanent Black?
- Times of India Editorial. (2023). "Women's Reservation Bill: Historic Step or Symbolism?". https://timesofindia.indiatimes.com
- Sanjay Kumar, (2021). Electoral Politics in India: Resurgence of the Bharatiya Janata Party. Routledge India.
- Centre for the Study of Developing Societies (CSDS). (2022). Lokniti Reports on Political Participation. https://www.lokniti.org
- Scroll.in. (2023). "Dalit Leaders and Political Representation: Beyond Symbolism". https://scroll.in
- The Hindu. (2024). ßGrassroots Governance and Women's Leadership in Panchayatsß. https://www.thehindu.com
- Ashutosh. Kumar, (2017). Democracy, Development and Discontent in South Asia. Sage Publications India.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

अंतरिक्ष एवं खगोल विज्ञान अनुसंधान में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) भारतीय वेधशालाओं पर विशेष दृष्टि

Ravi Kumar
(Research scholar)
Faculty ofArts, Craft & Social Science
Tantia University, Sri Ganganagar.(Raj)

Dr. Mukesh Kumar
Supervisor -
Assistant professor
Tantia University, Sri Ganganagar.(Raj)

सारांश (Abstract)

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence –AI) ने हाल के वर्षो में खगोल विज्ञान और अंतरिक्ष अनुसंधान के तरीकों में आमूल परिवर्तन किया है। AI आधारित तकनीकें बड़े पैमाने पर प्राप्त खगोलीय आंकड़ों के त्वरित विश्लेषण, पैटर्न पहचान और दुर्लभ घटनाओं की खोज में उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। भारत में Astrosat, GMRT, Devasthal Optical Telescope तथा आगामी LIG & India जैसे प्रकल्प AI- सक्षम डेटा विश्लेषण से नए शोध अवसर उपलब्ध करा रहे हैं। अंतरिक्ष और खगोलशास्त्र का क्षेत्र वैज्ञानिक अनुसंधान का एक जटिल और विशाल हिस्सा है, जिसमें ब्रह्मांड की संरचना, खगोलीय पिंडों की गतिविधि, और ब्रह्मांडीय घटनाओं का अध्ययन किया जाता है। अंतरिक्ष और खगोलशास्त्र जैसे विशाल और जटिल क्षेत्रों से टेलीस्कोप, उपग्रह, अंतरिक्ष मिशन, और सेंसर लगातार डेटा भेज रहे हैं। इस विशाल डेटा को समझने और विश्लेषण करने में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है।

कुंजी-शब्द : कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन लर्निंग, खगोलीय डेटा, AstroSat, GMRT, ILMT, गुरुत्वाकर्षण-तरंग

प्रस्तावना - खगोल विज्ञान परंपरागत रूप से प्रेक्षणीय डेटा और भौतिक सिद्धांतों पर आधारित रहा है। आधुनिक दूरबीनों, रेडियो प्रणाली तथा उपग्रह वेधशालाओं ने प्रति दिन टेराबाइट्स स्तर के डेटा उपलब्ध कराए हैं। इतनी विशाल जानकारी का विश्लेषण पारंपरिक सांख्यिकीय तरीकों से कठिन हो गया है। यही कारण है कि पैटर्न पहचान, विसंगति पता लगाने तथा पूर्वानुमान के लिए मशीन लर्निंग व डीप लर्निंग जैसे AI तंत्र का प्रयोग तेजी से बढ़ा है। Artificial Intelligence आज अंतरिक्ष व खगोल विज्ञान अनुसंधान में एक बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इसका प्रयोग डेटा विश्लेषण से लेकर अंतरिक्ष यात्रा की योजना तक किया जा रहा है। AI तंत्र का खगोल विज्ञान के प्रमुख क्षेत्रों में प्रयोग का विवरण -

1. डेटा विश्लेषण और खोज (DataAnalysis & Discovery) - अंतरिक्ष दूरबीनों (जैसे Hubble, James Webb, Gaia) और रेडियो टेलिस्कोपों (जैसे FAST, SKA) से हर दिन टेराबाइट्स डेटा मिलता है। AI प्रकाश की तीव्रता में छोटे बदलाव (Light CurveAnalysis) पहचानता है। AI आधारित Machine Learning और Deep Learning, ल्गोरिद्म इस विशाल डेटा में पैटर्न, विसंगतियाँ (anomalies) और नए पिंड जैसे तारे, धूमकेतु या बाह्यग्रह (Exoplanets) खोजने में मदद करते हैं। AI आधारित Sky Survey Bots रातभर स्वतः आकाश को स्कैन करते हैं और नए तारे, सुपरनोवा,

नीहारिकाएँ तथा ऐस्टेरॉइड की पहचान करते हैं। NASA के TESS o Kepler के डेटा से Google AI ने हजारों संभावित Exoplanets की पहचान हुई हैं।

2. विशाल डेटा प्रबंधन (Big Data Handling) - आधुनिक वेधशालाओं जैसे रैज़् (Large Synoptic Survey Telescope) हर रात लगभग 20 टेराबाइट डेटा पैदा करता है। Gaia Spacecraft अरबों तारों की स्थिति और गति की जानकारी रिकॉर्ड करता है। इतने बड़े डेटा को मानव द्वारा विश्लेषित करना लगभग असंभव है। AI डेटा को तेजी से छाँटकर महत्वपूर्ण पैटर्न व विसंगतियाँ खोज लेता है।

3. छवि प्रसंस्करण (Image Processing) - आकाशगंगाओं, नीहारिकाओं और ग्रहों की धुंधली तस्वीरों को साफ, स्पष्ट और त्रि-आयामी रूप में प्रस्तुत करने के लिए AI का प्रयोग होता है। यह गहरे अंतरिक्ष में धुंधली वस्तुओं की पहचान (Object Detection) में विशेष रूप से उपयोगी है। ब्लैक होल की पहली तस्वीर (Event Horizon Telescope 2019) के डेटा संयोजन में भी मशीन लर्निंग ने सहायता की थी।

4. खगोल-घटनाओं की भविष्यवाणी (Prediction ofAstronomical Events) - AI सुपरनोवा, गामा-रे विस्फोट (Gamma & ray Bursts) और उल्का पिंडों की टक्कर जैसी घटनाओं की पहचान व पूर्वानुमान में मदद करता है। सौर गतिविधियों (Solar Flares, Coronal Mass ezection) की निगरानी और पृथ्वी पर उनके प्रभावों की चेतावनी में भी AI आधारित मॉडल प्रयोग होते हैं।

5. स्वचालित रोबोटिक अंतरिक्ष यान और रोवर (Autonomous Spacecraft & Rovers) - मंगल रोवर (Curiosity, Perseverance) AI का प्रयोग करके स्वायत्त रूप से नेविगेशन और चट्टानों की पहचान कर पाते हैं। भविष्य के मिशनों में जैसे ।तजमउपे और डंतें उचसम त्मजनतद मेंAI आधारित रोबोट खुद निर्णय लेकर उपकरण चलाएँगे। डीप-स्पेस मिशनों में, जहाँ सिग्नल आने-जाने में मिनटों/घंटों लगते हैं, AI तत्काल निर्णय लेने में सहायक होता है। Mars Perseverance Rover: "AutoNav" नामकAI सिस्टम का प्रयोग कर 3d मानचित्र बनाता और बाधाओं से बचते हुए आगे बढ़ता है। Lunar Gateway और भविष्य के Europa Clipper जैसे मिशनों में भी AI का प्रयोग निर्णय लेने के लिए होगा। डीप स्पेस में, जहाँ संचार में देरी होती है, AI के कारण रोबोट तत्काल प्रतिक्रिया दे सकते हैं।

6. अंतरिक्ष मौसम पूर्वानुमान और उपग्रह संचालन (Space Weather & Satellite Operations) -AI उपग्रहों की कक्षा, ईंधन की खपत और टक्कर-रोधी प्रणाली (Collision Avoidance) को अनुकूलित करता है। भूस्थिर और निम्न-कक्षा उपग्रहों को अंतरिक्ष कचरे (Space Debris) से बचाने के लिएAI आधारित निगरानी प्रणाली प्रयोग की जाती है। AI प्रणालियाँ ईंधन की खपत को अनुकूलित करती हैं और यान की मरम्मत की आवश्यकता पहले ही बता देती हैं।

7. सौर और अंतरिक्ष मौसम का विश्लेषण - सूर्य की सतह पर होने वाली गतिविधियाँ (Sunspots, Solar Flares) का पूर्वानुमान AI से बेहतर हुआ है। यह पृथ्वी के संचार तंत्र, बिजली ग्रिड और उपग्रहों पर होने वाले संभावित नुकसान से पहले चेतावनी देता है।

8. ब्लैक होल और डार्क मैटर रिसर्च - EHT (Event Horizon Telescope) द्वारा प्राप्त असंख्य डेटा को AI ने जोड़कर 2019 में ब्लैक होल की छवि बनाई। डार्क मैटर वितरण, गुरुत्वाकर्षण लेंसिंग (Gravitational Lensing) और कॉस्मिक माइक्रोवेव बैकग्राउंड (CMB) के विश्लेषण में भी मशीन लर्निंग सहायक है।

9. अनुसंधान एवं शिक्षा में सहायक (ResearchAssistance) -AI आधारित भाषा मॉडल वैज्ञानिक लेखन, डेटा विजुअलाइजेशन और गणनाओं में सहायता करते हैं। छात्रों व शोधकर्ताओं के लिए जटिल खगोलीय डेटा को सरल भाषा में समझाने में भी AI टूल मददगार हैं।

10. भविष्य के रुझान (Future Prospects)

AIAstronaut Assistants – जैसे CIMON (ISS में प्रयोग किया गया) जो अंतरिक्ष यात्रियों को प्रयोगशालाओं

और मरम्मत में मदद करता है।

AI Simulation – ब्रह्मांड की उत्पत्ति और आकाशगंगाओं के विकास के लिए उन्नत सिमुलेशन है।

AI & Integrated Telescopes – अगली पीढ़ी के टेलिस्कोप में रीयल-टाइम डाटा विश्लेषण में मदद करता है।

भारत के प्रमुख खगोलीय वेधशालाएँ - भारत ने पिछले कुछ दशकों में खगोल विज्ञान (Astronomy) और खगोल भौतिकी (Astrophysics) के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। देश में कई स्थलीय (Ground & based) वेधशालाएँ और अंतरिक्ष-आधारित (Space & based) मिशन कार्यरत हैं, जो ब्रह्मांडीय डेटा प्रदान करते हैं।

1. अंतरिक्ष-आधारित (Space-based) वेधशालाएँ -

I.AstroSat (ISRO) - अस्ट्रोसैट भारत का पहला समर्पित खगोलीय वेधशाला उपग्रह है। भारत की पहली बहु-तरंगदैर्ध्य अंतरिक्ष वेधशाला, जो न्ट से X-Ray तक अवलोकन करती है। इसे भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) ने 28 सितंबर 2015 को श्रीहरिकोटा के सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से PSLV & C30 रॉकेट द्वारा प्रक्षेपित किया था। इसका मुख्य उद्देश्य ब्रह्मांड के विभिन्न खगोलीय पिंडों और विकिरणों का अध्ययन करना है। पराबैंगनी (UV), दृश्य (Optical), और एक्स-रे (X-ray) क्षेत्रों में अवलोकन करना। तारों, आकाशगंगाओं, ब्लैक होल और सुपरनोवा के अध्ययन के लिए डेटा उपलब्ध कराता है। अस्ट्रोसैट में 5 प्रमुख वैज्ञानिक उपकरण लगे हैं :

a. यूवी टेलीस्कोप (UVIt – Ultra Violet Imaging Telescope) : पराबैंगनी और दृश्य प्रकाश में आकाशगंगाओं व तारों की छवियाँ लेता है।

b. एलएएक्सपीसी (LAXPc – LargeArea X-ray Proportional Counter) : उच्च ऊर्जा एक्स-रे विकिरण का पता लगाता है।

c. एसजीडी (SXT-Soft X-ray Telescope) : कम ऊर्जा के एक्स-रे विकिरण का अध्ययन करता है।

d. कैडएम टेलिस्कोप (CZTi – CadmiumZ-inc-Telluride Imager) : उच्च ऊर्जा एक्स-रे और गामा किरणों का विश्लेषण करता है।

e. स्कैनिंग स्काई मॉनिटर (SSM – Scanning Sky Monitor) : पूरे आकाश में नए एक्स-रे स्रोतों को खोजता है।

AstroSat का महत्त्व :

- भारत ने अंतरिक्ष खगोल विज्ञान के क्षेत्र में पहली बार अपना उपग्रह बनाया।
- यह अमेरिका के Hubble Space Telescope की तरह बहु-तरंगदैर्ध्य (Multi & wavelength) खगोलीय अध्ययन करने वाला उपग्रह है।
- इसने भारतीय वैज्ञानिकों को अंतरराष्ट्रीय खगोलीय अनुसंधान में महत्वपूर्ण योगदान देने का अवसर दिया।

II. Chandrayaan-2 Orbiter &Aditya-L1

a. चंद्रयान-2 ऑर्बिटर : चंद्रमा की सतह और वातावरण का उच्च-रिजॉल्यूशन डेटा।

b. आदित्य-L1 (2023) : सूर्य के कोरोना और सौर गतिविधियों का डेटा एकत्र कर रहा है।

III. Scanning Sky Monitor (SSM) on Astrosat - आकाश में बदलते हुए एक्स-रे स्रोतों को स्कैन कर वैज्ञानिकों को डेटा प्रदान करता है।

2. स्थलीय (Ground-based) वेधशालाएँ -

I. GMRT– Giant Metrewave Radio Telescope (NCRA & TIFR, Pune) & GMR विश्व का सबसे बड़ा मीटर-वेव रेडियो टेलीस्कोप है। इसे NCRA (National Centre for RadioAstrophysics), TIF (Tata Institute of Fundamental Research) पुणे द्वारा विकसित और संचालित किया जाता है। 30 रेडियो डिश ऐन्टेना वाला विश्व-स्तरीय लो-फ्रीक्वेंसी टेलीस्कोप है डिश को 'Y-आकार' में व्यवस्थित किया गया है ताकि व्यापक क्षेत्र से संकेत प्राप्त

किए जा सकें। विश्व के सबसे बड़े लो-फ्रीक्वेंसी रेडियो टेलीस्कोप में से एक, 30 डिश ऐन्टेना (45 m व्यास) लगभग 25 किमी क्षेत्र में फैले है।

GMR के अनुप्रयोग :

- पल्सर सर्च, Hi गैस सर्वे, आकाशगंगा संरचना, फास्ट रेडियो बर्स्ट (FRB) के अध्ययन में उपयोगी है।
- हाइड्रोजन गैस, पल्सर, ब्लैक होल और आकाशगंगाओं के रेडियो सिग्नल का अध्ययन।
- GMRT का उपयोग मुख्यतः रेडियो तरंगों के माध्यम से ब्रह्मांड के रहस्यों को जानने, बिग बैंग के बाद प्रारंभिक ब्रह्मांड की संरचना का अध्ययन के लिए किया जाता है।
- सौर मंडल से परे की रेडियो तरंगों और चुंबकीय क्षेत्रों का पता लगाना

II. Devasthal Observatory (ARIES, uSuhrky) &ARIES (आर्यभट्ट प्रेक्षणीय विज्ञान संस्थान) भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एक प्रमुख खगोलीय अनुसंधान संस्थान है जो भारत के सबसे महत्वपूर्ण स्थलीय (Ground based) वेधशालाओं में से एक हैं ARIES के अंतर्गत देवस्थल वेधशाला, नैनीताल (उत्तराखंड) में दो प्रमुख दूरबीनें हाल के वर्षों में स्थापित की गईं :

a. देवस्थल ऑप्टिकल टेलीस्कोप (DOT)

b. इंटरनेशनल लिक्विड मिरर टेलीस्कोप (ILMT)

a. देवस्थल ऑप्टिकल टेलीस्कोप (DOT) : DOt भारत की सबसे बड़ी स्थलीय ऑप्टिकल दूरबीन है। इसमें 3.6 मीटर व्यास वाला (ऑप्टिकल टेलीस्कोप) दर्पण है। इसकी निर्माता बेल्जियम की कंपनी AMOS (Advanced Mecdinical and Optical Systems) है ओर इसका संचालन ARIES (भारत), बेल्जियम और कनाडा के सहयोग से करता है।

वैज्ञानिक उपयोग - ब्रह्मांडीय पिंडों (तारे, ग्रह, आकाशगंगाएँ, सुपरनोवा आदि) को दृश्य (Optical) और इन्फ्रारेड (IR) प्रकाश में देखने में सक्षम है। आकाशगंगाओं की संरचना, ग्रहों के वायुमंडल, एक्सोप्लानेट (अन्य तारों के चारों ओर घूमने वाले ग्रहों) की खोज, सुपरनोवा, न्यूट्रॉन तारे, क्वासर आदि का अध्ययन, आकाशगंगाओं और तारों का निर्माण एवं विकास और गहरे अंतरिक्ष की खोज के लिए उपयोगी है।

b. इंटरनेशनल लिक्विड मिरर टेलीस्कोप (ILMT) - ILM (4m International Liquid Mirror Telescope) : टाइम-डोमेन सर्वे के लिए विशेष। इसमें लिक्विड मिरर टेलीस्कोप व्यास 4 मीटर दर्पण है ओर इसका संचालन भारत, बेल्जियम और कनाडा का संयुक्त प्रोजेक्ट से होता है। ILM विश्व का पहला समर्पित लिक्विड मिरर टेलीस्कोप है जो खगोलीय अवलोकन के लिए तैयार किया गया है। इसमें ठोस काँच के बजाय पारा (Mercury) की एक पतली परत दर्पण के रूप में प्रयोग होती है।

ARIES के वैज्ञानिक उपयोग : बदलते खगोलीय पिंडों (Variable Stars) और अस्थायी घटनाओं (Transient Events) जैसे सुपरनोवा, क्षुद्रग्रह आदि का पता लगाना। ब्रह्मांड के गहरे क्षेत्रों की नियमित निगरानीए ऑप्टिकल सर्वेक्षण और डेटा संग्रह के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

DOt और dk ILMT dk महत्त्व :

- DOt और ILMT दोनों ने मिलकर भारत को वैश्विक खगोल विज्ञान में अग्रणी स्थान दिलाया।
- देवस्थल अब एशिया का एक प्रमुख खगोलीय अनुसंधान केंद्र बन चुका है।
- इन दूरबीनों ने भारतीय वैज्ञानिकों को आधुनिक उपकरणों के साथ अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शोध करने का अवसर प्रदान किया।

III. Kodaikanal Solar Observatory (IIA तमिलनाडु) :- यह 1899 से कार्यरत ऐतिहासिक वेधशाला है जो सूर्य के धब्बे, सौर गतिविधि और सौर चक्रों पर लंबे समय का डेटा उपलब्ध करवाने का कार्य करती है।

IV. Vainu Bappu Observatory (IIA, कवलूर, तमिलनाडु) :- यह ऑप्टिकल वेधशाला, जिसमें 2.3 मीटर Vainu Bappu Telescope लगा है, जो तारों और आकाशगंगाओं का स्पेक्ट्रोस्कोपिक डेटा उपलब्ध करवाने का कार्य करती है।

V. IUCAA - इसकी स्थापना 1988 में प्रख्यात खगोल भौतिक विज्ञानी जयन्त विष्णु नार्लीकर ने पुणे, महाराष्ट्र में की। IUCAA (Inter-University Centre forAstronomy andAstrophysics) पर नियंत्रण भारत सरकार का विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) का है इसका ओर उद्देश्य भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों में खगोल विज्ञान और खगोल भौतिकी अनुसंधान को प्रोत्साहित करना तथा विश्वस्तरीय वैज्ञानिक शोध के लिए आधारभूत ढाँचा उपलब्ध कराना है।

IUCAA के मुख्य कार्य

- देशभर के विश्वविद्यालयों के शोधकर्ताओं को दूरबीनों, डेटा सेंटरों और कंप्यूटिंग संसाधनों का उपयोग करने की सुविधा प्रदान करना।
- खगोल विज्ञान में शोध प्रशिक्षण, कार्यशालाओं और पीएच.डी. कार्यक्रमों का आयोजन।
- विभिन्न वेधशालाओं के लिए उपकरणों, सॉफ्टवेयर और डेटा प्रोसेसिंग तकनीक का विकास।
- गुरुत्वाकर्षीय तरंग विज्ञान, कॉस्मोलॉजी, पल्सर अध्ययन, एक्सोप्लानेट, आकाशगंगा संरचना आदि क्षेत्रों में शोध।

IUCAA की प्रमुख परियोजनाएँ :

- GMR (Giant Metrewave Radio Telescope) : पुणे
- IndIGo / LIG & India : गुरुत्वाकर्षीय तरंग परियोजना
- SKA (Square KilometreArray) : अंतरराष्ट्रीय रेडियो वेधशाला परियोजना
- विभिन्न खगोलीय डेटा सेंटर और सिमुलेशन प्रयोग

VI. Hanle High-Altitude Observatory (Ladakh – IIA) : यह समुद्र तल से 4500 मीटर ऊँचाई पर स्थित भारत की सबसे ऊँची ऑप्टिकल वेधशाला है। यहाँ Himalayan Chandra Telescope (2m) लगा है। इसका उपयोग आकाशगंगा, पल्सर और क्वासर का अवलोकन में किया जाता है।

VII. Gauribidanur Radio Observatory (IIA, कर्नाटक) :- सौर रेडियो उत्सर्जन का अध्ययन करने वाली रेडियो वेधशाला है।

VIII. Ooty Radio Telescope (OR – NCRA, तमिलनाडु) :- यहाँ 530 मीटर लंबा परवलयाकार सिलेंडरनुमा रेडियो टेलीस्कोप है। इसका उपयोग पल्सर और हाइड्रोजन उत्सर्जन का अध्ययन में किया जाता है।

3. डेटा आर्काइव्स और डेटा सेंटर -

I. IndIGo (Indian Initiative in Gravitational-wave Observations) :- भारत का एक वैज्ञानिक सहयोग समूह है जो गुरुत्वाकर्षीय तरंगों (Gravitational Waves) के अनुसंधान और अवलोकन के लिए कार्य करता है। इसी पहल के अंतर्गत 2009 में LIGO-India (Laser Interferometer Gravitational & wave Observatory) परियोजना शुरू की गई है। अमेरिका में पहले से कार्यरत दो LIG वेधशालाओं के बाद, तीसरी ऐसी वेधशाला भारत में बनाई जा रही है। LIGO-India का उद्देश्य पृथ्वी पर गुरुत्वाकर्षीय तरंगों के सटीक मापन हेतु एक उन्नत इंटरफेरोमीटर वेधशाला स्थापित करना, भारत में गुरुत्वाकर्षीय तरंगों पर अनुसंधान के लिए राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना है। LIGO-India वेधशाला का प्रस्तावित स्थानः महाराष्ट्र के हिंगोली जिले के औंधा नगा गाँव है। भारत सरकार ने 2016 में परियोजना की स्वीकृति दी, 2030 के आसपास संचालन शुरू होने की उम्मीद है।

LIGO-India की विशेषताएँ :

- इंटरफेरोमीटर की भुजाएँ : प्रत्येक 4 किलोमीटर लंबी होंगी।

- लेजर किरणों के परावर्तन और तरंगों में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों को मापकर गुरुत्वाकर्षीय तरंगों का पता लगाया जाएगा।
- यह वेधशाला अमेरिका की LIG वेधशालाओं के Advanced LIG स्तर की होगी।

LIGO-India का वैज्ञानिक महत्त्व :

- ब्रह्मांडीय घटनाओं जैसे ब्लैक होल का विलय, न्यूट्रॉन तारों की टक्कर, सुपरनोवा विस्फोट आदि से उत्पन्न गुरुत्वाकर्षीय तरंगों का अध्ययन।
- ब्रह्मांड के शुरुआती युग (Early Universe) के रहस्यों को समझने में मदद।
- भारत को गुरुत्वाकर्षीय तरंग खगोल विज्ञान के वैश्विक नेटवर्क में एक प्रमुख साझेदार बनाना।
- भूकंपीय तरंगों और अन्य कंपन के नियंत्रण हेतु नई तकनीकों का विकास।

LIGO-India का भारत के लिए लाभ :

- भारत उच्च-प्रौद्योगिकी युक्त वैज्ञानिक बुनियादी ढाँचा विकसित करेगा।
- भारतीय वैज्ञानिकों और इंजीनियरों को विश्वस्तरीय शोध अवसर मिलेंगे।
- STEM (Science, Technology, Engineering, Mathematics) शिक्षा और अनुसंधान को प्रोत्साहन।
- अंतरराष्ट्रीय सहयोग और नई वैज्ञानिक खोजों में योगदान।

II. Inter & University (IUCAA, पुणे) :- विभिन्न भारतीय वेधशालाओं (GMRT, Astrosat, DOT आदि) से प्राप्त डेटा को विश्वविद्यालयों और शोधकर्ताओं के लिए उपलब्ध कराता है। यह IUCAA द्वारा संचालित एक डिजिटल डेटा रिपॉजिटरी है। इसका उद्देश्य भारत के विश्वविद्यालयों और अनुसंधान संस्थानों को खगोल विज्ञान और अंतरिक्ष विज्ञान के डेटा तक पहुँच प्रदान करना है।

IUCAA की मुख्य विशेषताएँ :

- खगोलीय सर्वेक्षणों (Astronomical Surveys) और वेधशालाओं से प्राप्त डेटा को संग्रहीत करना।
- GMRT, Astrosat, DOT, ILM जैसी भारतीय वेधशालाओं के डेटा को शोधकर्ताओं के लिए उपलब्ध कराना।
- डेटा शेयरिंग और डेटा एनालिसिस टूल्स की सुविधा देना।
- देश के सभी विश्वविद्यालयों के छात्र-शोधकर्ताओं को रिमोट एक्सेस प्रदान करना।
- अंतरराष्ट्रीय डेटा साझेदारी (जैसे – Virtual Observatory Projects) से जुड़ना।

IUCAA का महत्त्व :

- IUCAA और इसके DataArchives ने भारत में खगोल विज्ञान शोध को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया।
- देशभर के विश्वविद्यालयों को महँगी वेधशालाओं पर निर्भर हुए बिना डेटा विश्लेषण और शोध की सुविधा मिलती है।
- इससे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सहयोग, नई खोजों और छात्र प्रशिक्षण को बढ़ावा मिला।

III. Indian Virtual Observatory (IVO) :- राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय खगोलीय डेटा तक ऑनलाइन पहुँच प्रदान करता है।

IV. ARIES Data Centre (नैनीताल) :- DOT और ILMT से प्राप्त डेटा को शोध हेतु सार्वजनिक करता है।

AI तंत्र का महत्व और योगदान

- अनुसंधान की गति 10 गुना तक बढ़ी, लागत में कमी और सुरक्षा में सुधार हुआ।
- दूरस्थ ग्रहों व गहरे अंतरिक्ष की खोज आसान बनी।
- AI वेधशालाएँ रेडियो, ऑप्टिकल, इन्फ्रारेड, पराबैंगनी और एक्स-रे तरंगदैर्ध्य में ब्रह्मांडीय डेटा उपलब्ध कराती हैं।

- वैज्ञानिकों को अंतरिक्ष के रहस्यों को समझने और अंतरराष्ट्रीय मिशनों में योगदान देने में मदद करती हैं।
- खगोल विज्ञान शिक्षा और शोध में भारत की वैश्विक प्रतिष्ठा बढ़ाती हैं।

निष्कर्ष

कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने खगोल व अंतरिक्ष अनुसंधान की गति और सटीकता दोनों को कई गुना बढ़ा दिया है। यह तकनीक आने वाले समय में डीप स्पेस एक्सप्लोरेशन, ग्रहों पर कॉलोनी बसाने और ब्रह्मांड के शुरुआती दौर की समझ जैसे क्षेत्रों में अहम भूमिका निभाएगी। कृत्रिम बुद्धिमत्ता न केवल वैज्ञानिकों की मदद कर रही है, बल्कि वह अंतरिक्ष मिशनों की "सह-पायलट" बन चुकी है। आने वाले दशक में ब्रह्मांड के रहस्यों को उजागर करने के लिए AI सबसे अहम उपकरणों में से एक होगा। भारत के खगोलीय डेटा-स्रोत और खगोलीय वेधशालाएँ देश को अंतरिक्ष विज्ञान और ब्रह्मांडीय अनुसंधान के क्षेत्र में विश्व के अग्रणी राष्ट्रों में शामिल कर रही हैं।

संदर्भ सूची (References)

1. https://www.isro.gov.in/AstroSat.html
2. https://www.gmrt.ncra.tifr.res.in/
3. https://www.aries.res.in/about-us/devasthal-campus
4. https://www.aries.res.in/ILMT
5. https://www.aries.res.in/DOT
6. https://www.iiap.res.in/centers/kso/
7. https://www.iiap.res.in/centers/vbo/
8. https://www.iucaa.in/en/
9. https://en.wikipedia.org/wiki/Indian_Astronomical_Observatory
10. https://www.gw-indigo.org/tiki-index.php
11. https://www.iucaa.in/en/resources
12. Rodríguez, J-V- et al- (2022), On the Application of Machine Learning in Astronomy, WIREs Data Mining-
13. Li, G- et al- (2025), Machine Learning in Stellar Astronomy: Progress up to 2024, arXiv:2503-01456-
14. Sharma, P- et al- (2025), Computational Astrophysics, Data Science & AI/ML in Astronomy - Indian Perspective, arXiv:2504-00987-
15. ISRO & AstroSat Data Portal: https://astrobrowse-issdc-gov-in
16. GMRT Data Archive (NCRA-TIFR): http://naps-ncra-tifr-res-in/goa/
17. IUCAA-Virtual Observatory & Workshop Proceedings (2023&2025)

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Imperial Perceptions of Nature and Animals: Study of Hunting Culture During Mughal Emperor Jahangir (r. 1605-27)

Shivendra Srivastava
Asst. Professor, GDC Sugh-Bhatoli
Dist. Kangra, Himachal Pradesh

Abstract:

Hunting occupied a significant place in Mughal imperial culture, functioning not merely as a royal pastime but as a meaningful practice through which ideas about nature, animals, and kingship were articulated. During the reign of Emperor Jahangir (1605–1627), hunting acquired distinctive intellectual and observational dimensions. This paper examines imperial perceptions of nature and animals through the lens of Jahangir's hunting culture, drawing primarily on his autobiography, *Tuzuk-i Jahangiri*. It argues that Jahangir viewed hunting expeditions as spaces for close observation of the natural world, where animals were studied, classified, and evaluated, rather than simply killed. Jahangir's detailed descriptions reveal an empirical curiosity that shaped Mughal understandings of nature. Hunting was not just mere killing of an animal but a well thought activity. At the same time, hunting remained deeply embedded in imperial ideology, reinforcing the emperor's authority as a ruler capable of mastering both the natural and social order. By situating Jahangir's hunting practices at the intersection of power, belief, and knowledge, this study contributes to broader discussions on Mughal environmental perceptions and early modern cultures of observation in South Asia.

Key words: Mughal, hunting culture, shikargah, human-animal relationship, human-nature interaction.

Introduction:

In Mughal India, hunting occupied a central place in imperial life and was deeply embedded in ideas of kingship, authority, belief, and moral responsibility. Far from being a simple act of sport or leisure, imperial hunting was a carefully organized and symbolically charged practice shaped by religious beliefs, ethical considerations, and political traditions. The hunting culture of the Mughals was an enduring institution, particularly in the period of our study. They were passionate and avid hunters dedicated to this adventurous game. Scholars such as Stephen Blake and John F. Richards have argued that Mughal kingship was performative and ceremonial. Hunting expeditions were ritual enactments of sovereignty. The Mughal emperor used hunting as a political theatre reinforcing his imperial authority. Ebba Koch further demonstrates how hunting scenes in Mughal art visually reinforced the emperor's dominance over both nature and subjects.[1] In these enduring enterprises, hunting grounds played a pivotal role in shaping socio-political and cultural life of the Mughals. This

section examines Mughal hunting culture, particularly under Jahangir, as a complex institution where faith, power, and human–animal–environment relationships intersected. By exploring hunting and non-hunting practices, associated beliefs, and ritual observances, it highlights how imperial hunts functioned as expressions of sovereignty, moral duty, and cultural values in the Mughal world.[2]

As evident, hunting was not just a mere game of rushing for an animal in the forest, but it was a systematic and planned exercise. Different techniques were involved in capturing and shooting the animal. Great care was taken so that the animal could not escape, as it was considered unfortunate for the empire. In this part of the study, we will explore hunting and not-hunting ideas since certain beliefs were associated with hunting and dedicating days for observing no-hunt. After all, faith and beliefs played a significant role in the medieval society. We must not forget to explore this aspect of the imperial hunting culture.

The Mughal hunting ground was not just the terrain where Emperor could enact the hunt, but it was far more than the conventional definition of hunting says. Instead, it was conceptualized as the negotiated terrain from where ideas of kingship and authority could be projected. The imperial hunting culture involved interactions between three players, namely human, animal and environment. The relationship among the three reveals how the hunting ground was conceived and experienced. However, hunting was a part of the continuation of tradition since Timurids, as it provided legitimacy and proved them the rightful successor of their forefathers. In this chapter, there will be a comparative study between the reigns of Akbar and his son Jahangir in terms of hunting achievements which grew subsequently.[3]

As Mughals considered it legitimate to kill animals during hunt and battles, many animals were deprived of their souls for the adventure of the Mughals.[4] However, abandoning hunting on certain days was considered pious. As a matter of belief leaving hunting was considered as healing for the loved ones from their diseases. For instance, when prince Shuja, the son of Shahjahan, got severely ill from infantile epilepsy and could not be treated by any material medication. Considering his life might save the lives of several animals, Jahangir took a vow not to kill any animal with his hand.[5] Amazingly, Shah Shuja recovered, but later, he resumed hunting (with his hand) because of the rebellious nature of the Shahjahan. This was not for the first time. Earlier, Emperor Akbar, when scared for the life of his son (Salim) in the womb, took a pledge not to go hunting with leopards on Fridays, although which he used to do very frequently. Following his example, Jahangir did the same throughout his life.[6]

Similarly, on the auspicious days of Sunday and Thursday of every week, Jahangir did not hunt, considering the former as a day of Akbar's birthday and the latter as a day of his coronation. At one instance, as a result of this vow, when *Bakr Eid* or the feast of the sacrifice fell on Thursday, the animals were slaughtered on the following day. But it is not unworthy of mention that their awe for hunting was never compromised. They still hunted on forbidden days with animals like falcons, cheetahs and hawks, if not by a musket. Some references suggest that fishing was continued even on forbidden days.[7]

Mughals considered themselves as saviors of the people. Protecting the subjects from wild animals was not their only moral but kingly duty. Whenever the lion or tiger was reported harassing the villagers and travelers, it was considered the moral duty of the emperor to eliminate the peril from the people[8]. Interestingly, Jahangir, who was tied with a vow not to kill any animal on Sundays,

hunted the lion on the pretext of its danger to the people.[9] In addition to this, there is a reference to the tiger, which was harassing the people. Since it was a non-hunting day (Sunday), he sent his son Shahjahan to eliminate the menace to the people.[10] In this way, Abul Fazl notes his Majesty would not hurt a fly but hunt a lion, which was associated with a higher purpose.[11]

The number of people involved was so large that the targeted animal could not escape since, according to the belief, it was considered unfortunate for the empire. Great care was taken to encircle the animal using nets and buffaloes as stops. Abul Fazal notes as many people were involved during these hunts as were required to go for the conquest. For instance, the capture of the Ranthambore fort began as a hunting expedition.[12]

It is not worth mentioning that all that was hunted could be eaten since Islam forbids consuming non-herbivores animals. In several instances, Jahangir notes he preferred eating those animals, which do not eat anything rubbish. For this, he got the stomach open of the hunted animal and examined it. Since hunting was not anything less than an uncertain and adventurous game, if the prey escaped and could not be located, divine help was sought. For instance, when Jahangir was hunting at the Palam ground and one of the nilgais escaped from the shooting range, after a vigorous chase when it was hunted, its meat was served to the poor in the name of Khwaja Moinuddin Chisti. Interestingly, Jahangir usually preferred the flesh of an animal to which he has hunted himself. Moreover, he let open the stomach of the strange animals in his presence and if anything, disgusting it has eaten, was not consumed.[13]

No matter how many animals were killed during this game, the Mughals valued more to the creatures that do not harm others. For instance, Jahangir considered *humay* (similar to phoenix) superior to all birds as it feeds on bones and does not harm any life. There is a reference to a soldier who died falling from a mountain pinnacle during a hunting exercise. This made Jahangir very upset, and his soul left ill stricken body a few days later.[14] This incident is evident of the fact that though the Mughals killed large number of animals but they were not emotionless during hunt. Hunting was not a safe game, as evident from *Tujuk-i-Jahangiri*, astrologers and astronomers' advice was constantly sought for departing from the city. Imperial banners were raised at an auspicious hour to the hunting ground. As a custom, a report was made at the end for the number of animals killed during these expeditions.[15]

It was a symbol of conciliation between the king and the forces of nature that had to be conquered to protect his subjects. The emperor has to exercise not only his authority over people but also nature. Hunting so integral to the Mughals that they spent considerable time in this enterprise, received guests, ambassadors accepted homage, inspected rarities offered by *amirs*, intimates of court and notables of the empire. Even the critical news like the death of Salima begum and the surrender of Rana Amar Singh was received by the Jahangir when he was out for hunting. Along the way, Mughals went hunting and touring. Therefore, both went hand in hand. In this way, hunting was an essential part of Mughal entertainment and recreational practices. Usually, it was carried after noon time. However, hunting was not exclusively enjoyed by the emperor, but he was joined by the princes and ladies of the harem. Even Nurjahan actively participated in the hunt and is said to have killed several lions.

Conclusion

In this way, hunting could not be understood as the mere game of chase but legitimized act connected to the belief, which gave validity. As hunting was a part of the continuation of the Timurid practice, it was instrumental for projecting kingship and authority. However, sparing the lives of animals on certain days meant piety and useful for healing purpose. All that was hunted could not be eaten, and Islamic practice was observed. We also know the divine helped was sought when necessary and on success meat was served to the poor. Therefore, it was not just the ruthless killing of animals but were related to specific ideas of hunt.

References:

1 Stephen P. Blake, *Shahjahanabad: The Sovereign City in Mughal India, 1639*–1739 (Cambridge: Cambridge University Press, 1991), 45–47; John F. Richards, *The Mughal Empire* (Cambridge: Cambridge University Press, 1993), 66–69; Ebba Koch, *Mughal Art and Imperial Ideology: Collected Essays* (New Delhi: Oxford University Press, 2001), 132–135.

2 Shaha Altaf Papia. "Imperial Hunting Grounds: A New Reading of Mughal Cultural History." PhD diss., 2018.

3 Ibid

4 Jahangir, Jahangirnama: Memoirs of Jahangir, Emperor of India, trans. Wheeler M. Thackston (New York: Oxford University Press, 1999) P.53

5 Ibid p.281.

6 Abul Fzl. "Ain-i-Akbari, vol." *Eng. Tr. Blochman, Calcutta* (1873): 57-58. p.300.

7 Jahangir, Jahangirnama: Memoirs of Jahangir, Emperor of India, trans. Wheeler M. Thackston (New York: Oxford University Press, 1999) p.119.

8 Abul Fazl. "Ain-i-Akbari, vol." *Eng. Tr. Blochman, Calcutta* (1873): 57-58. p.294.

9 Jahangir, Jahangirnama: Memoirs of Jahangir, Emperor of India, trans. Wheeler M. Thackston (New York: Oxford University Press, 1999) p.213.

10 Ibid p.278.

11 Abu'l-Fazl, The Akbar Na-ma- of Abu-l-Fazl [Akbarnama], 3 vols, trans. H. Beveridge (Calcutta: Asiatic Society, 1907–12, repr. 2010), vol. 2 p.292.

12 Ibid p.292.

13 Jahangir, Jahangirnama: Memoirs of Jahangir, Emperor of India, trans. Wheeler M. Thackston (New York: Oxford University Press, 1999) p.119.

14 Ibid p.456.

15 Ibid p.454.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

वैदिक युग में यज्ञ पर्यावरण संरक्षण का प्राचीन उपाय

सीमा देवी
शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

प्राकृतिक संसाधनों अर्थात् जल, वायु, भूमि, वनस्पति व जीवजन्तु आदि का संतुलित प्रयोग करना तथा भविष्य के लिए उनकी रक्षा करना ही पर्यावरण संरक्षण है। पर्यावरण संरक्षण का वैदिक उपाय यज्ञ है। वैदिक काल से अपनी यात्रा आरम्भ कर यज्ञ ही एकमात्र आधुनिक युग तक पहुंचा है। यज्ञ की लोकोपकार जनकल्याण की उदात्तभावना अतीत से लेकर वर्तमान तक एक समान रही है। यज्ञ शब्द ''यज्'' धातु + ञ्य प्रत्यय से निश्पन्न होता है जिसका अर्थ है देव पूजा, दान स्वाध्याय व नैतिक कर्तव्य।

'यज्ञ' शब्द की निष्पत्ति यज् धातु धातु से होती है जिसका अर्थ है पूजन या देवता की सेवा। ञ्य प्रत्यय से यह संज्ञा बनती है-यज्ञ। जो वेदों में पूजा, त्याग और समर्पण का प्रतीक है। वैदिक संस्कृति में यज्ञ न केवल धार्मिक कर्म था बल्कि प्रकृति के संरक्षण का एक व्यवस्थित वैज्ञानिक और आध्यात्मिक साधन भी था। यज्ञ के प्रमुख पुरोहित, यज्ञवेदि, यज्ञ प्रक्रिया के प्रकार, स्तम्भ आधुनिक द्रव्यों आदि के नाम वेदों में उल्लिखित हुए हैं। वेदों के आधार पर ही यज्ञ के स्वरूप को समझ कर उसके द्वारा पर्यावरण संरक्षण का कार्य करने उचित होगा।

यज्ञ का वर्णन ऋ्वेद के प्रथम मंत्र में भी किया गया है–

अग्निमीळे पुरोहितम्, यज्ञस्य देवमृत्विजम्, होतारम् रत्नधातमम्।

ऋग्वेद में यज्ञ के चारों प्रमुख पुरोहितों व उनके कार्यों उल्लेख किया गया है। ऋग्वेदीय पुरोहित ''होता'' ऋचाओं का उच्चारण करता है। यजुर्वेदीय पुरोहित ''अध्वर्यु'' यज्ञ की शारीरिक क्रियांए करता है। सामवेदीय पुराहित ''उद्गाता'' सामवेद का गायन करता है। समस्त वेदों का ज्ञाता ''ब्रह्मा'' कहलाता है जो सभी अनुष्ठानों की त्रुटियों को सुधारता है। अथर्ववेद में गार्हपत्य, आहवनीय तथा दक्षिण तीन प्रमुख अग्नियों का उल्लेख हुआ है। जिनके द्वारा यज्ञ का स्थापन किया जाता है। अथर्ववेद में ही महाव्रत, राजसूय, अग्निहोत्र आदि अनेकों यज्ञों के नाम आए हैं। यः समिधा यः आहुति यो वेदेन ददाष मर्तो अग्नये। यो नमसा स्वध्वरः।। ऋग्वेद में अर्थात् जो समिधाओं, आहुती से, वेद से प्राप्त मंत्रविधि से अन्न व त्यागक्रिया से देवता के लिए अग्नि में यज्ञ आदि को करता है वह योग्य फल पाता है।

यज्ञ की परिभाषा से अभिप्राय है 'यज्ञ के फल' या यज्ञ के प्रयोजन की बात की बात। यज्ञ को ब्राह्मणकार सर्वकामधुक मानते है अर्थात् स्वर्ग प्राप्ति के लिए, पुत्र प्राप्ति के लिए, या आयु की प्राप्ति के लिए यज्ञ करना चाहिए। स्वर्ग में आस्था रखने वाले महर्षि दयानन्द ने इसी धरती पर रहने लोगों के सुखमय जीवन के स्वर्ग का और दुखमय जीवन को नरक यज्ञ का प्रयोजन माना है, इस विषय का वर्णन उन्होंने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के वेद विषय विचार प्रकरण में कर्मकाण्ड अर्थात् यज्ञ के प्रयोजन को स्पश्ट करते हुए लिखा है–अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त जो यज्ञ किए जाते हैं उनमें भली भान्ति शुद्ध किए सुगन्धित मिष्ट पुष्टिकारक और रागनाशक द्रव्यों से आहुतियाँ दी जाती है जिसे वायु और वृष्टिजल की शुद्धि होती

है। इसलिए सारे जगत के लिए यज्ञ सुखकारी है। शुद्ध जल व वायु उ हों तो सम्पूर्ण मानवजाति अच्छा स्वास्थ्य व दीर्घायु को प्राप्त कर सकती है। पर्यावरण शुद्ध होने से आने वाली संतति का जीवन सुखमय होता है। ब्राह्मण ग्रन्थों व दयानन्द जी द्वारा बताए गये प्रयोजनों में कोई भेद नहीं रह जाता।

यज्ञ में वेद मन्त्रों का उच्चारण होने से ये मन्त्र व्यवहार में आाने के साथ-साथ स्मृति का हिस्सा भी बन जाते हैं। यजमान व पुरोहित वेद मन्त्रों में दी गई शिक्षाओं पर ध्यान दे तो व्यवहारिक जीवन सुसंस्कृत होता है। उन्ही मन्त्रों के अर्थों पर विचार करने से मानसिक प्रदूशण समाप्त होता है, वहीं मन्त्रों का उच्चारण करने से ध्वनि प्रदूशण समाप्त होता है। अग्नि में डाली गई आहुतियों वायु व जल को शुद्ध करती हैं। इन प्रयोजनों से यज्ञ का महत्त्व स्थापित होता है। इसीलिए वैदिकवांग्मय का मुख्य अंग यज्ञ है। यज्ञ मनुष्यजीवन का आधार है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यज्ञ भावना निहित है। यज्ञ से सब सम्बन्धित व सुरक्षित होता है।

यज्ञ करने की प्रेरणा देते हुए अथर्ववेद में बताया गया है कि ऋतु, मास, तथा ऋतुपतियों के लिए तथा भूतपतियों के लिए यज्ञ किया जाना चाहिए। सभी प्राणियों के स्वामी के लिए माध्यम से पर्यावरण की रक्षा करना ही एकमात्र प्रयोजन बनता है। इसी प्रकार यज्ञ ही समृद्धि व दीर्घायु के कारण बनते हैं। गाय के घी की आहुतियाँ यज्ञ में दी जाएं ऐसा भी स्पष्ट किया गया है।

कामानस्माकं पूरय प्रति गृह्णाहि नो हविः।

अर्थात् यज्ञ में डाली गई हवि को देवता स्वीकार करते हैं एवं सभी कामनाओं को पूर्ण भी करते हैं। चारो वेदों के प्रमुख विषय भिन्न भिन्न हैं जिसमे यजुर्वेद यज्ञ प्रधान है। यहाँ यज्ञ को सुदृढ बताया गया है। भाव यह है कि यज्ञ कर्म केवल सुदृढ या निर्भय व्यक्ति से ही निष्पन्न हो सकता है। भीतिग्रस्त जन यज्ञ सम्पन्न नहीं कर सकता है। यजुर्वेद हिंसा रहित यज्ञ मे विश्वास करता है। इसमें यज्ञ के लिए अध्वर का प्रयोग बहुत बार हुआ है। यजुर्वेद का मानना है कि अध्वर जैसा अहिंस्य कर्म करने वाला मनुष्य इतना अधिक अहिंसामय हो जाता है कि पृथिवी पर होने वाली वनस्पतियों के मूल को भी कष्ट न देने की अभिलाषा करता है–

पृथिवि देवयजन्योषध्यास्ते मूलं मा हिंसिशम्।

अर्थात्- देवताओं के लिए जिस पृथ्वी पर हवन किया जा रहा है। उस पर उगने वाली औषधियों की जड़ों को भी कष्ट न पहुंचे। इस पूरे ब्रह्माण्ड में छोटे से छोटे जीव व वस्तु की अपनी-अपनी उपयोगिता है। उसे नष्ट करना किसी के हित में भी नहीं है। ''विश्वस्य आरिष्टयै'' यज्ञ का सच्चा उद्देश्य है। सपूर्ण विश्व का कल्याण हो, सबकी सुरक्षा हो. सबका उत्कर्ष हो। यजुर्वेद में अनेक स्थानों पर ''स्वाहा'' शब्द का प्रयोग हुआ है। यज्ञ में जिस किसी देव के नाम से आहुति दी जाती है. उससे सम्बन्धित मन्त्र के साथ ''स्वाहा'' कहा जाता है–

स्वाहा यज्ञ मनसः स्वाहोरोरन्तरिक्षात्स्वाहा।
घावापृथिवीभ्यां स्वाहा वातादूरमे स्वाहा।।

अर्थात् यज्ञ हम मन लगाकर करते हैं, विस्तृत अन्तरिक्ष से यज्ञ करते हैं। द्यु लोक और पृथ्वी लोक के लिए यज्ञ करते हैं। वायु की अनुकूलता से यज्ञ प्रारम्भ करते हैं। यज्ञ में अंतर्हित समर्पण का भाव ही स्वाहा है।

समिधाओं से अग्नि का प्रज्जवलन होता है। वेदों में अनेक वृक्षों की लकडियों का प्रयोग समिधा के रूप में किया जाता है वहीं यजुर्वेद में यज्ञ की अग्नि के लिए सात समिधाएँ बताई गई हैं–

सप्त तेऽग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्तऋषयः सप्त धाम प्रियाणि।
सप्त होत्रा सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्य घृतेन स्वाहा।।

आम्र, बिल्व, पीपल, वट, उदुम्बर, पलाश खदिर हैं। चन्दन, गूलर ढॉक, वेल आदि औषधिगुण युक्त वृक्षों की समिधाएँ भी प्रयुक्त होती है। विशिष्ट देवों के लिए विशिष्ट सामग्री युक्त यज्ञ वातावरण में विशेष प्रभाव डालता है।

वैदिक काल तथा ब्राह्मण काल में यज्ञ के अनेक प्रकार प्रचलित रहे है। आधुनिक काल के इतना करना संभव नहीं

है। मनुस्मृति में मनु द्वारा गृहस्थ के लिए पंच महायज्ञों अर्थात् ब्रह्मयज्ञ, पितृयज्ञ, देवयज्ञ, भूतयज्ञ तथा नृयज्ञ करने का विधान किया है। ये सभी यज्ञ समाज के विकास को संतुलित करने के लिए आवश्यक है। देवयज्ञ पर्यावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसमें प्रातः सांय अग्निहोत्र द्वारा देवताओं को आहुतियों प्रदान की जाती है।

मनुष्य अनेक क्रिया कलापों द्वारा जैवमण्डल को दूषित करता है। इसलिए यह हमारा दायित्व बनता है कि यज्ञ द्वारा प्रदूषण को दूर करते रहे। अग्निहोत्र द्वारा प्रदूषण दूर व वतावरण शुद्ध होता है एवं प्रभावकारी तत्व लहराने लगते हैं। अग्निहोत्र से निकलने वाला सुगन्धयुक्त धुआं मस्तिश्क पर सकारात्मक प्रभाव डालता है।

पश्चिम जर्मनी की संस्कृत तथा वेद के प्रति आस्था चिर-पुरातन रही है। जर्मनी की प्रयोगशाला में मानव स्वास्थ्य के लिए अनुसंधान किए गए जिसमें यज्ञ के धुँए व राख की उपयोगिता को सिद्ध किया गया है। यज्ञ की भस्म के द्वारा चिकित्सकीय उपचार करने से प्राणियों वनस्पतियों और दीर्घ रोगों में निरोधक व रोगनाषक शक्ति पैदा होती है।

संदर्भ

1. ऋग्वेद 1/1/1
2. अथर्ववेद 15.6 (14-15)
3. अथर्ववेद 11.7.6.19
4. ऋग्वेद 8/19.5
5. स्वर्ग कामो यजेत। तैत्तिरीय ब्राह्मण 2.2.10.2, शतपथ ब्राह्मण 1.9 1.3
6. पुत्र कामो यजेत। तैत्तिरीय ब्राह्मण 2.5.1.1, शतपथ ब्राह्मण 1.3 1.9
7. आयुश्कामो यजेत। तैत्तिरीय ब्राह्मण 2.5.1.1
8. स चाग्नि होत्रमारभ्याष्व मेघपर्यन्तेशु यज्ञेशु सुगन्धितमिष्ट पुष्ट रोगनाषकगुणैर्युक्तस्य सम्यक् संस्कारेण शोधितस्य द्रव्यस्य वायुवृष्टिषुद्धिभरणार्थमग्नौ होमें क्रियेत स तद्द्वारा सर्वजन सुखकार्येव भवति। ऋग्वेदादिभाश्यभूमिका, वेदविषयविचार।
9. ऋतून्यज ऋतु पतीनार्तवानुत हायनान्।
समों संवत्सरान्मासान्मूतस्य पतये यजे। अथर्ववेद 10/9
10. अथर्ववेद 3.10.9-10
11. अथर्ववेद 3.10.11
12. अथर्ववेद 3.10.13
13. यजुर्वेद 1.2.3-2.4
14. यजुर्वेद 1. 2.5
15. यजुर्वेद 2.3
16. यजुर्वेद 4.6
17. यजुर्वेद 17.79
18. मनुस्मृति 4.21

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

नई शिक्षा नीति की समस्याएं एवं चुनौतियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डिम्पल अग्रवाल
सहायक प्राध्यापक वाणिज्य
नवीन शासकीय महाविद्यालय, चपले जिला रायगढ़ (छ.ग.)
dimpalgarg457@gmail.com

सार - किसी भी विद्यालयीन एवं महाविद्यालयीन स्तर पर शिक्षा में सुधार करने की आवश्यकता है। पहली शिक्षा नीति 1968 में लागू की गई उसमें जो भी कमी थी उस कमी को दूर करने के लिए 1986 में फिर शिक्षा नीति लागू की गई इसमें भी कमी थी इसलिए कमी को दूर करने के लिए छम्च्2020 लागू किया गया। शिक्षा किसी भी समाज की प्रगति के लिए आवश्यक है। इसलिए शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए के कस्तूरी रंजन की अध्यक्षता में इस समिति का गठन किया गया। इस समिति के गठन के बाद शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हुआ है बहुत ही मुश्किल हुआ इस नई शिक्षा नीति को लागू करने में। कोविड 19 आ गया जब इस नई शिक्षा नीति को लागू करने की सोची गई फिर आखिरकार जब कोविड 19 का दौर समाप्त हुआ तब इस नई शिक्षा नीति को लागू किया गया। इसे लागू करने के बाद भी अभी तक व्यवस्था में सुधार नहीं हो पाया क्योंकि अभी तक इसके नियम एवं शर्तो में सुधार नहीं हो पाया है। यह नई शिक्षा विद्यार्थी को अपनी रुचि के अनुसार पढ़ने एवं शिक्षा के बाद उन्हें काम करने के लिए सोचा गया लेकिन फिर भी अभी तक इसमें सुधार नहीं हो पाया इसके लिए प्रयास किया जा रहा है सब कुछ डिजिटल करने का प्रयास किया जा रहा है लेकिन फिर भी इसमें सुधार करने की आवश्यकता है। इसलिए यह पेपर नई शिक्षा नीति की समस्याओं एवं चुनौतियों की ओर प्रेरित है।

परिचय - NEP 2020 के कस्तुरी रंजन की अध्यक्षता में लागू किया गया। 29 जुलाई 2020 को भारत के केन्द्रीय मंत्रीमण्डल के द्वारा मंजूरी मिली और उसे लागू किया गया जब से इसे लागू किया गया तब सबसे बड़ा परिवर्तन हुआ। इस शिक्षा नीति में 2030 तक सकल नामांकन अनुपात 100% लाने का लक्ष्य रखा गया और आने वाले समय में इसकी पूर्ति भी कर दी जाएगी। इस नीति में सकल घरेलू उत्पाद के 6% हिस्से सार्वजनिक व्यय का लक्ष्य रखा गया है। इसमें मानव संसाधन प्रबंधन मंत्रालय का नाम परिवर्तन करके शिक्षा मंत्रालय कर दिया गया। इस शिक्षा ने बहुत कुछ परिवर्तन कर दिया बच्चों को मनोरंजन का एवं अपनी कार्य क्षमता प्रदर्शित करने का अवसर दिया।

1.) ऐथल, पीएस.(2019) ‘‘भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रस्ताव 2019 और उसके कार्यान्वयन में उच्च शिक्षा का विश्लेषण एवं चुनौतियों ” में उन्होनें बताया कि सतत् विकास लक्ष्य के बारे में बताया और उसमें यह कहा कि शिक्षा का अधिकार सभी को समान रुप से है इस तरह इन्होनें पुरानी शिक्षा नीति 1986 एवं अभी की शिक्षा नीति 2020 दोनों की तुलना करते हुए बताया कि 2020 की शिक्षा नीति से व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार शिक्षा ग्रहण कर सकता है लेकिन इस शिक्षा नीति में कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है।

2.) टेचलर,यू.(1999) ‘‘उच्च शिक्षा नीति और कार्य जगत : बदलती परिस्थितियों और चुनौतियों में उन्होनें बताया

कि प्राचीन शिक्षा प्रणाली से विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण तो करता था लेकिन फिर भी उसे नौकरी के लिए भटकना पड़ता था। इस तरह से उन्होनें नौकरी और पुरानी शिक्षा प्रणाली से चुनौतियों को उजागर किया उन्होंने बताया कि विद्यार्थी शिक्षा तो ग्रहण कर रहा है लेकिन उससे भविश्य के लिए नौकरी एवं व्यवस्था सुधार के कोई भी उपाय नहीं थे।

उद्देश्य

1.) नई शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत छात्र/छात्राओं की जागरुकता एवं रुचि का अध्ययन करना।

2.) नई शिक्षा प्रणाली की चुनौतियों से अवगत होना।

परिकल्पना

1.) नई शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत शिक्षक छात्र/छात्राओं को संतुष्ट नहीं कर पा रहे है।

2.) नई शिक्षा प्रणाली शिक्षकों के लिए चुनौतीपूर्ण नहीं हैं।

अध्ययन की विधि- अध्ययन के लिए महाविद्यालय स्तर पर छात्र/छात्राओं का डाटा एकत्रित किए गए इसके लिए 200 छात्र/छात्राओं के डाटा के आधार पर निष्कर्ष निकाला गया और देखा गया कि नई शिक्षा प्रणाली लागू हुए अभी 2 साल ही हुए इसके नियम एवं तकनीक की जानकारी नहीं है अध्ययन के लिए प्रतिशत विधि, माध्य, काईस्कावयर टेस्ट को अपनाकर डाटा का सारणीकर करके निष्कर्ष निकाला गया। इस तरह से विश्लेशण करके निष्कर्ष दिया गया।

नई शिक्षा नीति छम्च्2020 की प्रमुख चुनौतियां और समस्याएं

1.) शिक्षकों के प्रशिक्षण में कमी - NEP 2020 सभी के लिए नया है और इसके क्रियान्वयन के लिए कार्यशाला एवं सेमिनार का आयोजन समय-समय होता है लेकिन प्राचार्य अपने शिक्षकों को यहां जाने की अनुमति नहीं देते है जिससे वे अपने गुणवत्ता में सुधार नहीं ला पा रहे है यही कारण NEP 2020 बिना शिक्षकों के ज्ञान से अधूरा है।

2.) संसाधनों की कमी - दूरदराज के क्षेत्रों में अभी भी संसाधनों की कमी है इस डिजिटल युग में जहां आनलाइन से हर काम होते है वहां आज भी ग्रामीण क्षेत्र में तकनीकी का अभाव है न तो बेहतर ढंग से नेटवर्क चल रहा है और न कम्प्यूटर,प्रोजेक्टर या आनलाइन साधन है, सरकार इन संसाधनों को उपलब्ध तो कराती है लेकिन इसके उपयोग को नहीं जानने एवं समझने के कारण यह उपयोगी नही बन पाता है इसलिए यह भी एक समस्या है।

3.) वित्त की कमी - वित्त की कमी सबसे बड़ी समस्या है यदि विॐत्त नहीं है तो कोई कार्य भी नहीं होगा इसलिए सबसे पहले इस कमी को दूर करना चाहिए ताकि उन्हें संसाधनों के लिए वित्त की समस्या न हो।

4.) शिक्षकों की कमी - जितनें ज्यादा विद्यार्थी उपलब्ध है उतनी संख्या में शिक्षक नहीं शिक्षकों की कमी के कारण बच्चों को शिक्षा सही ढंग से उपलब्ध नहीं हो पा रही है। ज्यादा से ज्यादा संख्या में शिक्षकों की भती करना चाहिए जिससे कि बेहतर एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षक उपलब्ध हो पाए एवं विद्यार्थी को NEP 2020 के तहत ज्ञान प्राप्त हो सके।

5.) मूल्यांकन और पाठ्यक्रम - NEP 2020 के तहत मूल्यांकन एवं पाठयक्रम की जो प्रक्रिया है वह बहुत लम्बी है अर्थात् पाठयकम्र में थोड़ा सा बदलाव करना चाहिए एवं जो मूल्यांकन की प्रक्रिया है उसमें परिवर्तन करना चाहिए ताकि बच्चों को अच्छे से मार्क्स मिल सके एवं उनकी स्थिति में सुधार हो सके।

सुझाव

1.) यदि नई शिक्षा प्रणाली में सुधार करना है तो शिक्षकों की गुणवत्ता में सुधार के लिए समय-समय पर कार्यक्रम एवं कार्यशाला का आयोजन किया जाना चाहिए।

2.) सरकार को आनलाइन प्लेटफार्म के माध्यम से शिक्षा ग्रहण की प्रक्रिया को सरल एवं मनोरंजनपूर्ण बनाना चाहिए।

3.) बहुत से महाविद्यालय के प्राचार्य अपने यहां के शिक्षकों को कोई भी कोर्स करने की अनुमति नहीं देते है जिसके कारण वे आज की इस नई कार्यव्यवस्था में सुधार नहीं कर पाते है इसलिए प्राचार्य को इसकी अनुमति प्रदान करना चाहिए जिससे वे अपनी गुणवत्ता में सुधार कर सके।

4.) शोध की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए शिक्षकों को पीएचडी की अनुमति प्रदान करने के साथ-साथ उन्हें विभिन्न कांन्फ्रेंस एवं सेमिनार में जाने की अनुमति देना चाहिए जिससे कि जब शिक्षक ही बाहर जाकर सिखेगें तो वे अपने छात्र/छात्राओं को भी सिखायेगें।

5.) बच्चों को 6 माह के सेमेस्टर के बाद थोड़ा सा गेप देना चाहिए जिससे ि कवे अपने मस्तिश्क को आराम दे सके।

6.) सिलेबस जो 6 माह के हिसाब से निर्धारित किया गया है उसे कम करके पहले उसे 4 माह में समाप्त करके उसमें परीक्षा भी कराने की व्यवस्था कराना चाहिए तथा उसके बाद रिविजन कराना चाहिए तब अंत में परीक्षा कराके उन्हें 15-20 दिन का रिलक्स देना चाहिए।

7.) सभी पाठ्यक्रम से बच्चों को पहले से अवगत करा देना चाहिए जिससे कि उन्हें आगे अध्ययन में कोई परेशानी न हो।

अध्ययन - अध्ययन के लिए महाविद्यालय स्तर पर छात्र/छात्राओं का डाटा एकत्रित किए गए इसके लिए 200 छात्र/छात्राओं के डाटा के आधार पर निष्कर्ष निकाला गया और देखा गया कि नई शिक्षा प्रणाली को लागू हुए अभी 2 साल ही इसके नियम एवं तकनीक से न तो शिक्षक अच्छे से परिचित है और न ही छात्र/छात्राओं इसलिए दोनों के लिए यह चुनौतीपूर्ण हो गया है। अध्ययन के लिए प्रतिशत विधि,माध्य,कई स्कावयर टेस्ट को अपनाकर डाटा का सारणीकरण करके निष्कर्ष निकाला गया। इस तरह से विश्लेशण करके निष्कर्ष दिया गया।

छात्र/छात्राओं की रुचि एवं उनका प्रतिशत का टेबल एवं रेखाचित्र द्वारा प्रस्तुतीकरण

क्र.	रुचि	छात्र प्रतिशत	छात्राएं प्रतिशत
1	ऐसे बच्चे जो पढ़ाई में रुचि नहीं लेते	5	11
2	वित्त में रुचि	23	16
3	घरेलू कार्यो में व्यस्त	30	22.5
4	आर्थिक गतिविधियों में लगे हुए	37.5	15
5	अन्य कारक	4.5	35.5
	योग : कुल प्रतिशत	100	100

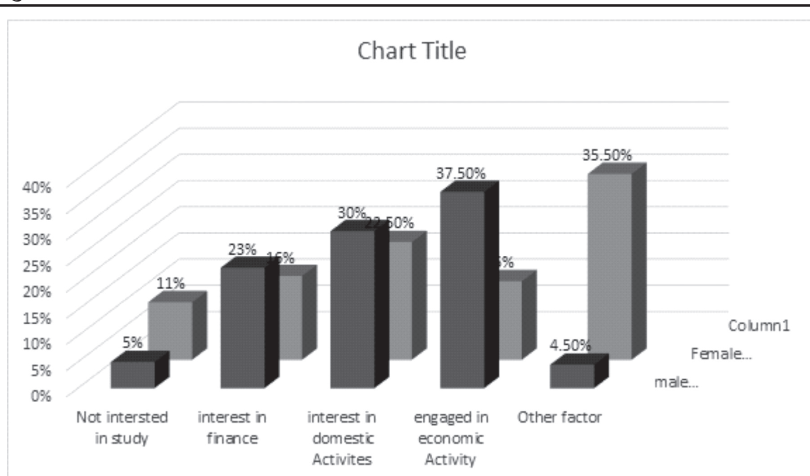

निष्कर्ष में पाया गया कि पढ़ाई में रुचि छात्र की तुलना में छात्राओं को ज्यादा होती है वित्त में रुचि छात्र को ज्यादा होती है, घरेलू कार्यो में व्यस्तता छात्र को ज्यादा होती है क्योंकि उन्हें घर संभालने में ज्यादा ध्यान होता है। पैसा कमाने या आर्थिक गतिविधियों में लगे हुए छात्र की संख्या ज्यादा है तथा अन्य कारकों में छात्र की तुलना में छात्राओं की संख्या ज्यादा है क्योंकि सादी के बाद उन्हें घर संभालना होता है इस तरह से हमारी दूसरी परिकल्पना की नई शिक्षा प्रणाली शिक्षकों के लिए चुनौतीपूर्ण नहीं है यह असत्य सिद्ध हुआ।

ग्रामीण एवं शहरी छात्र/छात्राओं की रुचि का तुलनात्मक अध्ययन शिक्षकों के साथ

क्र.	कार्यो में शिक्षक द्वारा संतुष्ट ग्रामीण छात्र/	छात्राए एवं शिक्षक	शहरी छात्र/छात्राएं एवं शिक्षक द्वारा संतुष्ट
1	पढ़ाई में रुचि	22.5%	39.5%
2	व्यवसाय में रुचि	39%	51%
3	अन्य कारक	38.5%	9.5%
योग		100%	100%

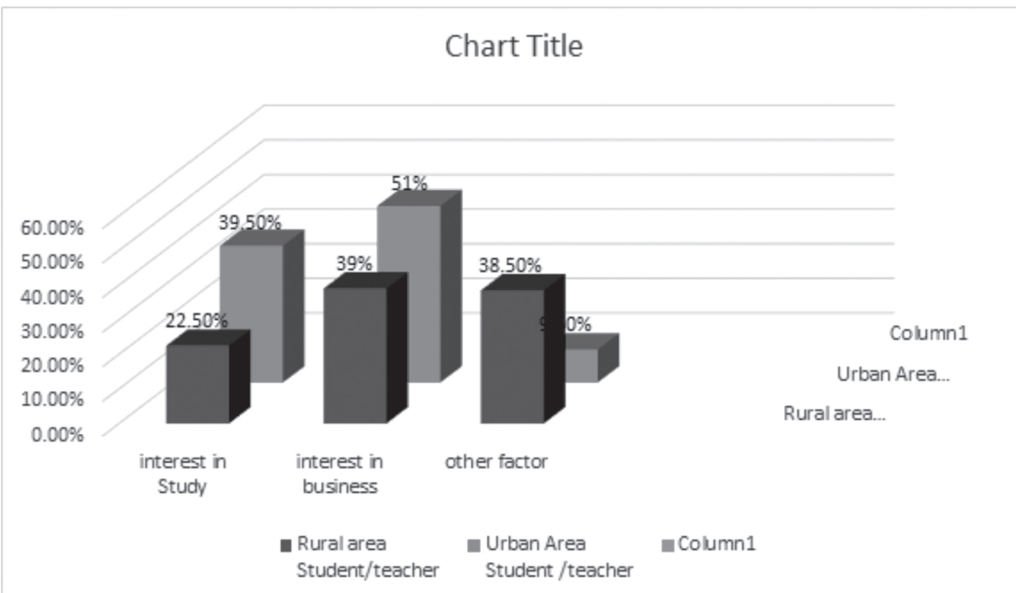

निष्कर्ष में यही पाया गया कि पढ़ाई में रुचि ग्रामीण क्षेत्र की छात्र/छात्राओं की रुचि शहरी क्षेत्र के छात्र/छात्राओं की तुलना में कम होता है इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र के छात्र/छात्राओं को व्यवसाय में रुचि कम है शहरी क्षेत्र की तुलना में अन्य कारको में ग्रामीण क्षेत्र का प्रतिशत शहरी क्षेत्र की तुलना में ज्यादा है इस प्रकार हमारी परिकल्पना सत्य सिद्ध हुई कि शिक्षक छात्र/छात्राओं को संतुश्ट नहीं कर पा रहे है। क्योंकि शिक्षको के लिए चुनौतीपूर्ण है ग्रामीण क्षेत्र की तुलना में शहरी क्षेत्र की तुलना में नियंत्रण करना।

निष्कर्ष - किसी भी तथ्य में सुधार आवश्यक है और यही कारण है कि जो शिक्षा प्रणाली इतने समय से चलता आ रहा है उसमें बहुत सी कमियां थी इसलिए उन कमियों को दूर करने के लिए नई शिक्षा प्रणाली लागू किया गया इस शिक्षा प्रणाली ने छात्र/छात्राओं को बहुत कुछ समझाया उन्हें उनके रुचि के अनुसार एक पेपर के साथ दूसरा पेपर पढ़ सके ऐसा इस नई शिक्षा प्रणाली में किया। इस शिक्षा प्रणाली से छात्र/छात्राएं खुश तो हुए लेकिन इसको समझने में शिक्षक को एवं

छात्र/छात्राओं को समझने में समय लग रहा है सही जानकारी उन्हें मिल पा रही है। साथ ही एक सेमेस्टर समाप्त होता है तुरंत दूसरा सेमेस्टर शुरु हो जाता है जिसके कारण उनके ऊपर काम का एवं पढ़ाई का प्रेशर पड़ रहा है इस तरह उन्होनें बताया कि यह शिक्षा प्रणाली उनके लिए लाभप्रद तो है लेकिन इस नई शिक्षा प्रणाली में उन्हें बहुत मेहनत करने की आवश्यकता है जिसके कारण वे अपने समय को इसी में दे रहे है उनके पास न तो अन्य के लिए जैसे मनोरंजन एवं घर के लिए सही से समय नहीं मिल पा रहा है हांलाकि यह नई शिक्षा प्रणाली मनोरंजन भी दे रहा है एवं समय भी लेकिन छात्र/छात्राओं में बहुत ज्यादा ही गुस्सा है वे इस नई शिक्षा प्रणाली को प्रेशर से अपना रहे है न कि खुशी से इसलिए निष्कर्ष में यही पाया गया कि नई शिक्षा प्रणाली 2020 सभी के लिए चुनौतीपूर्ण है इसलिए इसे सरल बनाना चाहिए एवं इस तरह से इसको डिजाइन करना चाहिए डिजिटल प्लेटफार्म देना चाहिए ताकि बच्चे घर में ही कुछ कक्षाएं करके अपने समय को बचा सके।

References

1.) Teichler,u."Higher education Policy and the world of work Changing Condition and Challenges."

2.) Aithal,S.P.(2019)."Analysis of Higher in Indian National education policy proposal 2019 and its implementation challenges

3.) Altbach,P.G. (1996). The international academic Profession : Portraits Of Fourteen countries.Princeton NJ:Carnegie Foundation For the Advancement Of teaching.

4.) Carnoy,J.(1995).Economics of education:research and studies.oxford:Pergamon.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

कबीर की सामाजिक प्रासंगिकता

डॉ. अलका शर्मा
सह प्रवक्ता, किशन लाल पब्लिक कॉलेज,
रेवाड़ी 123401 (हरियाणा)
मोबाइल सं : 89013 66266
इमेल : sharmaalka125@gmail,com

साहित्य समाज का दर्पण होता है और साहित्य का समाज निरपेक्ष होना संभव नहीं है। यही बात कबीर दास के संदर्भ में भी कहीं जा सकती है। कबीर दास की साहित्य चेतना और उनकी भक्ति समाज से जुड़ी हुई है। कबीर दास की कविता कमजोर, शोषित जनता की कविता है जो शोषक वर्ग का तीव्र विरोध करती है। कबीर की सामाजिक प्रासंगिकता पर विचार करने के क्रम में हमें सर्वप्रथम यह विचार करना होगा कि कबीर की भक्ति पर किन सामाजिक कारकों का प्रभाव है तथा समाज के लिए वह किस प्रकार से उपयोगी है।

कबीर दास का जन्म भारतीय इतिहास के जिस युग में हुआ वह युग मुस्लिम काल के नाम से जाना जाता है। उनके जन्म से बहुत पहले ही दिल्ली में मुस्लिम शासन स्थापित हो चुका था तथा उत्तर भारत की आबादी का एक अच्छा खासा भाग मुस्लिम धर्म स्वीकार कर चुका था। स्वयं कबीर दास जी जिस जुलाहा जाति में पैदा हुए थे वह भी एक दो पीढ़ी पहले मुसलमान हो चुकी थी। उस समय कबीर दास की जुलाहा जाति के समान हिंदू समाज की अनेक दलित जातियां भी इस्लाम धर्म स्वीकार कर चुकी थी लेकिन यह दलित जातियां न तो पूरी तरह हिंदू रही और ना ही पूर्णतरू मुस्लिम बन पाई क्योंकि उनके पुराने संस्कारों व रीति रिवाज में ज्यादा परिवर्तन नहीं आया था। यही नहीं कबीर दास के समय का हिंदू समाज न केवल ऊंची नीची जातियों में बटा था बल्कि उस समय हिंदू समाज में अनेक धर्म, संप्रदाय तथा उपासना पद्धतियों का प्रचार था जिसमें लोग यथार्थ को भूल गए थे और केवल बाह्य अनुष्ठानों आदि को ही उपासना की आत्मा मान बैठे थे।

उस समय साधु संन्यासियों की साधना बाल मुंडाने, बाल बढ़ाने, गेरुआ वस्त्र धारण करने या नग्न रहने आदि तक सीमित थी। कुछ लोग केवल ब्रह्मचर्य को ही सब कुछ मानते थे और उसी के आधार पर मुक्ति की आशा रखते थे। कुछ लोग छापा तिलक को ही सर्वस्व मान बैठे थे। कबीर दास ने तत्कालीन समाज में व्याप्त रूढ़ियों, अंधविश्वासों, बाह्याडंबर, बाह्याचार आदि का विरोध किया। उन्होंने एक-एक रूढ़ि व अंधविश्वास को अलग-अलग लिया और उनका विरोध किया। उनका विरोध हमेशा तर्कपूर्ण रहा है जैसे माला फेरने वालों का विरोध करते हुए उन्होंने कहा है—

माला तो कर में फिरे, जीभ फिरे मुंह माहिं।
मनुवां तो दस दिसि फिरे, यह तो सुमिरन नाहिं।।

उस समय हिंदू समाज में तीन प्रकार के लोग थे—शाक्त, शैव और वैष्णव। जिसमें शाक्त सर्वाधिक पतित हो गए थे। कबीर दास ने उनको बहुत भला-बुरा कहा है जैसे—

'साकत से सूकर भला, सूचा राखे गांव'

इसके अतिरिक्त उस समय हिंदुओं में धर्म, संप्रदायों की बहुत बड़ी संख्या थी। स्वयं कबीर ने इन संप्रदायों का बड़ा मनोरंजक वर्णन किया है–

जोगी जती तपी सनियासी बहु तीरथ भ्रमना,
लुंजित मुंजित मौनि जटाधर, अति तऊ मरना

इस प्रकार एक ओर हिंदू समाज का स्वरूप यह था तो दूसरी ओर देश का शासक मुस्लिम था जो हिंदुओं को अपने से छोटा समझता था और तलवार के बल पर अपने धर्म के प्रचार के लिए पूर्णतया कटिबद्ध था। कबीर मानव मात्र से प्रेम करते थे तथा उनके लिए सभी समान थे। राजा, प्रजा, गरीब, अमीर, हिंदू, मुसलमान आदि सभी उस परम ब्रह्म के अंश थे। कबीर का समाज ऊंच-नीच, हिंदू-मुसलमान, ब्राह्मण-शूद्र, शोषक-शोषित आदि विभिन्न वर्गों में बटा था। कबीर ने इस भेदभाव की समाप्ति के लिए आध्यात्मिक मान्यता का आधार ग्रहण किया। उनका मानना था कि जब स्रष्टा समान रूप से संपूर्ण विश्व में व्याप्त है तब भेदभाव की संभावना कहां रह जाती है–

एकहि जोत सकल घट व्यापक दूजा तत् त न होई।
कह कबीर सुनो रे संतो भटकि मरै जनि कोई।।

आज ही की तरह कबीर के समय में समाज में जाति के आधार पर ऊंच-नीच के भेदभाव मौजूद थे। अनेक निम्न जातियों को अछूत समझा जाता था लेकिन कबीर ने इन सभी का विरोध किया है। इस संबंध में उन्होंने कहा है–

'एक जोति से सब उतपना कौन बाम्हन, कौन सूदा'

उनका मानना था कि ईश्वर ने सभी जातियों की सृष्टि एक ही रूप में की है। सबके शरीर एक ही रक्त, मज्जा, मांस और अस्थि से बने हैं। सबका जन्म एक ही रूप में होता है और मृत्यु के बाद सब की गति एक ही होती है अर्थात जन्म के आधार पर जाति का विचार गलत है। यदि जाति का संबंध जन्म से होता तो इसके प्रमाण गर्भ से ही मिलने लगते। यदि ब्राह्मण श्रेष्ठ होता तो गर्भ से ही वेद पढ़ कर आता–

पेट न काहू वेद पढ़ाया

इस प्रकार कवि ने जाति व्यवस्था के भीतर पनपने वाले ऊंच-नीच के भेद और छुआछूत का खंडन किया है। वे इस मूल बात पर जोर देते हैं कि इस तरह के सामाजिक भेदभाव गलत हैं क्योंकि यह भगवान के बनाए हुए न होकर ब्राह्मणों के दिमाग की उपज है। कबीर के समय का समाज आज ही के समान अलग-अलग धर्मों और संप्रदायों में बटा था जिस कारण समाज में अक्सर मतभेद और झगड़े होते रहते थे। यह बात हमारे आज के युग में भी सच है।

कबीर के समय जैसे हिंदुओं में शैव, वैष्णव, शाक्त, जोगी, मोनी, दिगंबर आदि संप्रदाय थे वैसे ही मुसलमानों के यहां शिया, सुन्नी आदि संप्रदाय थे। उनके विषय में कबीर की सोच बिल्कुल स्पष्ट थी। उनके मतानुसार इस प्रकार के भेद निरर्थक हैं। इनका संबंध धर्म की मूल आत्मा के साथ नहीं है। इनका संबंध पूजा पाठ के तरीकों, साधना के ढंग, संप्रदाय की सूचना देने वाली वेशभूषा आदि बातों से है। कबीर ने इन सभी को पाखंड कहकर इनका विरोध किया है।

कबीर के युग में विभिन्न संप्रदायों के आपसी मतभेदों से भी अधिक बड़ी समस्या हिंदुओं और मुसलमानों के आपसी मतभेदों की थी। उस समय इन दोनों के संबंध बहुत अर्थों में आज जैसे थे लेकिन दोनों के संबंध में एक बहुत बड़ा अंतर यह था कि उस युग में शासक मुसलमान थे। आज वे शासक नहीं है लेकिन इस अंतर के बावजूद दोनों के संबंधों में आज भी मतभेद और तनाव है। कबीर ने दोनों के विषय में जो बात कही है वह उनके युग की तरह आज भी सच है–

हिंदू कहे मोहि राम पियारा, तुर्क कह रहीमाना।
आपस में दोउ लरि लरि मूए, मरम न काहू जाना।।

कबीर ने धार्मिक भेदभाव और कट्टरता के लिए दोनों को ही खरी खोटी सुनाई है। कबीर को हिंदू और मुसलमान दोनों ही प्रिय थे। उनके लिए सभी समान थे इसलिए वे एक ऐसी साधना पद्धति विकसित करना चाहते थे जिसे हिंदू और मुसलमान दोनों ही स्वीकार कर सके इसलिए कवि ने राम को निर्गुण मानते हुए यह बताया कि सभी उस राम के अंश है

तथा अन्य सभी भेद माया जनित भ्रम है। इस प्रकार कवि ने जनता और उनके ईश्वर को एक कर सामाजिक एकता को बल प्रदान किया।

इसके अतिरिक्त कबीर के समय के समाज में जाति और धर्म की तरह पद और धन भी गैर बराबरी के कारण थे। जो धनी था वह निर्धन को तुच्छ समझता था। जो आदमी पद की दृष्टि से जितना बड़ा था वह स्वयं को दूसरों से उतना ही उच्च मानता था पर कबीर ने वैषम्य को अस्वीकारा है। उनकी मान्यता थी कि राजा, सुल्तान या राज्य का अधिकारी होने से कोई व्यक्ति बड़ा नहीं होता और ना ही धनी होने से ऊंचा और गरीब होने से नीचा होता है। धन, वैभव, भोग-विलास और अधिकार-अहंकार आदमी को भगवान से दूर ले जाते हैं। इनके कारण मानव-मानव में दूरी और भेदभाव पैदा हो जाते हैं इसलिए मानव को उतना ही धन अर्जित करना चाहिए जितना जरूरी है। स्वयं कबीर अपने लिए अपने स्वामी (प्रभु) से उतना ही मांगते हैं जितना घर परिवार चलाने के लिए जरूरी है।

साईं इतना दीजिए, जामैं कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूं, साधु न भूखा जाय।।

कबीर के समय में अवतारवाद, बहुदेववाद, मूर्ति पूजा, तीर्थाटन आदि का बोलबाला था। कबीर ने स्पष्ट शब्दों में अवतारवाद का विरोध करते हुए कहा है—

दशरथ सुत तिहुं लोक बखाना,
राम नाम का मरमु है आना।

अर्थात संसार में दशरथ के पुत्र को राम कहा जाता है किंतु ष्रामष का मर्म ही दूसरा है। उन्होंने अवतारवाद का विरोध करते हुए ईश्वर को निर्गुण-निराकार, व घट-घट वासी बताया है। कवि ने मूर्ति पूजा का तीव्र विरोध करते हुए कहा है—

पाहन पूजे हरि मिलै, तो मैं पूजूं पहार।
ताते यह चाकी भली, पीस खाय संसार।।

इस प्रकार कबीर को समाज में जहां भी विसंगति लगी और उस समाज में अंधविश्वास पनपा, उन्होंने उसका डटकर विरोध किया, चाहे वह तीर्थाटन हो या मूर्ति पूजा हो। श्राद्ध आदि की भी कबीर दास ने आलोचना की है। पिता के प्रति पुत्र के प्रेम की विडम्बना जिससे वह पिता से जीते जी तो बात नहीं करता परंतु मरने पर श्राद्ध या पिंडदान करता है पर कबीर दास कहते हैं—

जीवित पित्त कूं बोले अपराध, मुआ पीछैं देही सराध।
कही कबीर मोहि अचरज आवै, कउवा खाय पित्त क्यों पावै।।

इसी प्रकार कबीर दास ने हिंदू समाज में व्याप्त तीर्थ स्थान, जप, तप, माला आदि विभिन्न धार्मिक आडंबरों का विरोध किया और लोगों को उन्हें छोड़ धर्म के यथार्थ स्वरूप को अपनाने तथा उन पर आचरण करने पर बल दिया। कबीर दास मुस्लिम समाज के आडंबरों के भी उतने ही विरोधी थे जितने हिंदू समाज के आडंबरों के।उन्होंने मुस्लिम समाज की सुन्नत, हज, काबा, अजान, कुरबानी और हलाल आदि सभी की आलोचना की है जैसे—

जाको दूध धाइ करी पीजै।
तामाता को बध क्यों कीजै।।

इस प्रकार कबीर ने जो कहा वह तर्को के साथ कहा। इसलिए आज भी कबीर की वाणी हमें उसी तरह सचेत करती है जितनी उनके समय में करती थी। कबीर या उनके समकालीन संत एक ऐसा समाज चाहते थे जिसमें ऊंच-नीच, जाति-वर्ण, हिंदू-मुस्लिम में वैमनस्य न हो। यही समाज में सभी को एक समान मानना निम्न पंक्तियों में दृष्टिगोचर होता है।

आया पर सम चीन्हिए, तब दीखै सरब समान।

वस्तुतः कबीर सामाजिक बराबरी के समाज में ही विश्वास नहीं करते अपितु उस बराबरी को सामाजिक व्यवहार में भी देखना चाहते थे। उनकी यही विशेषता उनकी सामाजिक दृष्टि को समग्रता प्रदान करती है और हमारे अपने समय और

समाज से जोड़ती है। कबीर दास की उपर्युक्त सारी बातें परंपरागत समाज ही नहीं अपितु प्रबुद्ध और प्रगतिवादी समाज के लिए भी इतनी ही सार्थक हैं कि उनको कभी भी अप्रासंगिक नहीं कहा जा सकता। यदि सरल शब्दों में कहना चाहें तो कबीर हिंदी के सबसे बड़े मानवतावादी कवि हैं और इसीलिए वे अपने समय में प्रासंगिक थे, वर्तमान में भी प्रासंगिक हैं और भविष्य में भी प्रासंगिक रहेंगे। उनकी यह प्रासंगिकता मानव समाज के लिए सर्वदा रहेगी।

संदर्भ-ग्रंथ सूची

1 कबीर ग्रंथावली : डॉ. गोविंद त्रिगुणायत

2 कबीर की खोज : राज किशोर

3 हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचंद्र शुक्ल

4 साहित्यिक निबंध : डॉ. राम सजन पांडे

5 कबीर जीवन दर्शन : डॉ. भोलानाथ तिवारी

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

स्त्री चेतना के विकास में हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाओं का योगदान

रंजना
शोधार्थी- के०जी०के०पी०जी० कॉलेज मुरादाबाद
सम्पर्क : 7007418738, ranjana0486@gmail.com

प्रो. चंद्रभान सिंह यादव
शोध पर्यवेक्षक-
हिंदी विभाग, के०जी०के०पी०जी० कॉलेज मुरादाबाद

सार

प्रस्तुत शोधपत्र हिन्दी की साहित्यिक पत्रिकाओं द्वारा स्त्री चेतना के विकास में निभाई गई ऐतिहासिक, वैचारिक और रचनात्मक भूमिका का गहन अध्ययन करता है। हिन्दी साहित्यिक पत्रकारिता ने स्त्री जीवन के अनुभवों, संघर्षों और अस्मिता-संबंधी प्रश्नों को न केवल अभिव्यक्ति दी, बल्कि उन्हें सामाजिक विमर्श के केन्द्र में स्थापित किया। आरंभिक काल में जहाँ स्त्री प्रश्न सामाजिक सुधार और नैतिक पुनर्रचना के संदर्भ में सामने आए, वहीं उत्तर-स्वतंत्रता काल और विशेषतः 1980 के बाद स्त्री चेतना एक सशक्त, आत्मबोधपूर्ण और प्रतिरोधी विमर्श के रूप में विकसित हुई। सरस्वती, धर्मयुग, हंस, तद्भव, समयांतर, कथादेश तथा स्त्रीकाल जैसी साहित्यिक पत्रिकाओं ने स्त्री अस्मिता, देह, श्रम, यौनिकता, जाति और सत्ता-संरचनाओं पर गंभीर बहस को जन्म दिया। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि हिन्दी की साहित्यिक पत्रिकाएँ केवल रचनाओं के प्रकाशन का माध्यम नहीं रहीं, बल्कि स्त्री चेतना के निर्माण, विस्तार और सुदृढ़ीकरण में सक्रिय हस्तक्षेप करती रही हैं।

कुंजी शब्द : स्त्री चेतना, हिन्दी साहित्यिक पत्रिकाएँ, स्त्री विमर्श, स्त्री अस्मिता, साहित्यिक पत्रकारिता

प्रस्तावना

भारतीय समाज में स्त्री का स्थान सदैव विवाद और विमर्श का विषय रहा है। एक ओर उसे शक्ति और सृजन की मूर्ति माना गया, दूसरी ओर उसे सामाजिक, धार्मिक और पारिवारिक बंधनों में कैद कर दिया गया। हिंदी साहित्य ने समय-समय पर स्त्री की स्थिति को अभिव्यक्त किया, परंतु वास्तव में साहित्यिक पत्रिकाएँ ही वह माध्यम बनीं जिनसे स्त्री चेतना का व्यापक प्रसार हुआ। पत्रिकाएँ समाज और साहित्य के बीच संवाद का पुल रही हैं। इन्होंने स्त्री लेखन को मंच दिया, स्त्री से जुड़े मुद्दों पर विमर्श कराया और स्त्री अस्मिता को साहित्यिक धारा के रूप में स्थापित किया। 'सरस्वती', 'हंस', 'स्त्रीकाल', 'कथादेश', 'पहल', 'नया ज्ञानोदय' जैसी पत्रिकाओं ने स्त्री विमर्श को नई दृष्टि दी।

स्त्री चेतना की संकल्पना : स्त्री चेतना का आशय है—स्त्री का अपने अस्तित्व और अधिकारों के प्रति सजग होना, अपने को केवल उपभोग की वस्तु न मानकर संपूर्ण व्यक्ति के रूप में देखना, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक बंधनों का प्रतिरोध करना, और साहित्य के माध्यम से अपनी आवाज को स्थापित करना।

हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाएँ और स्त्री चेतना : हिन्दी साहित्यिक पत्रिकाओं का इतिहास वस्तुतः हिन्दी

समाज के वैचारिक विकास का इतिहास है। साहित्यिक पत्रिकाएँ केवल साहित्य सृजन का मंच नहीं रहीं, बल्कि उन्होंने सामाजिक चेतना के निर्माण में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। समाज में व्याप्त असमानताओं, शोषण और दमन के विरुद्ध साहित्यिक पत्रिकाओं ने समय-समय पर प्रश्न उठाए हैं। स्त्री चेतना का विकास भी इसी वैचारिक प्रक्रिया का अनिवार्य अंग है। स्त्री की सामाजिक स्थिति, उसकी अस्मिता और उसकी आवाज़ को अभिव्यक्त करने में साहित्यिक पत्रिकाएँ एक सशक्त माध्यम बनकर उभरी हैं।

1. सरस्वती (1900)

'सरस्वती पत्रिका का प्रकाशन सन् 1900 ई. में नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी से प्रारंभ हुआ था। इसके संस्थापक और संपादक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी थे। यह पत्रिका हिंदी में आधुनिकता, सामाजिक सुधार, स्त्री शिक्षा, राष्ट्रवाद और साहित्यिक चेतना के प्रचार का प्रमुख माध्यम बनी।

सामाजिक चेतना के विकास में योगदान

'सरस्वती ने समाज में फैली अनेक कुरीतियों—जैसे जातिभेद, अस्पृश्यता, स्त्री-अशिक्षा, पर्दा-प्रथा, दहेज-प्रथा आदि पर प्रहार किया। पत्रिका के माध्यम से सामाजिक सुधार की आवाज़ उठी। द्विवेदीजी ने लेखों में कहा - "समाज की उन्नति तब तक नहीं हो सकती जब तक स्त्रियाँ शिक्षित और स्वतंत्र नहीं होंगी।"

इस प्रकार 'सरस्वती' ने हिंदी समाज में नई सोच को जन्म दिया। 'सरस्वती पहली ऐसी हिंदी पत्रिका थी जिसमें महिला लेखिकाओं को समान मंच मिला। इस पत्रिका में महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, मन्नू भंडारी, जयशंकर प्रसाद आदि लेखकों के साथ-साथ अनेक महिला लेखिकाओं ने लिखा। इसमें स्त्री शिक्षा, स्त्री स्वतंत्रता, स्त्री अधिकार, विवाह और समानता जैसे विषयों पर लेख प्रकाशित हुए। महादेवी वर्मा ने कहा था -"सरस्वती ने हमें लेखनी का मंच दिया, जिससे हमारी मौन पीड़ा स्वर पा सकी।"

इससे हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श का प्रारंभिक स्वर सुनाई दिया। महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में इसने न केवल साहित्य को नई दिशा दी बल्कि स्त्री शिक्षा और स्त्री उत्थान के मुद्दों को उठाया। इस पत्रिका में प्रकाशित कहानियों में गोपालराम गहमरी की कहानियाँ उल्लेखनीय हैं, जिनमें ग्रामीण स्त्रियों के दुख-दर्द और शोषण का यथार्थ चित्रण है। रामनारायण मिश्र के निबंधों में स्त्री शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया गया। सुदर्शन की कहानियों में स्त्री पात्रों की विवशता और उनके सामाजिक संघर्ष दिखाई देते हैं। 'सरस्वती' ने हिंदी समाज में स्त्री चेतना की नींव रखी और स्त्री प्रश्नों को साहित्य का विषय बनाया। सरस्वती पत्रिका' ने केवल साहित्यिक नवजागरण ही नहीं किया, बल्कि उसने सामाजिक, राष्ट्रीय और स्त्री चेतना के विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी कारण हिंदी जगत में इसे "हिंदी नवजागरण की जननी" कहा जाता है।

2. हंस (1929)

'हंस' पत्रिका की स्थापना प्रेमचंद ने जुलाई 1930 में की थी। उनका उद्देश्य था "साहित्य को समाज का दर्पण बनाना और उसके माध्यम से सामाजिक चेतना का प्रसार करना।" बाद में इस पत्रिका का पुनर्प्रकाशन राजेंद्र यादव के संपादन में 1986 में हुआ, जिसने इसे नारी विमर्श और स्त्री चेतना का मंच बना दिया।

प्रेमचंद युग में स्त्री चेतना का आरंभ

प्रेमचंद ने 'हंस' के माध्यम से स्त्रियों से संबंधित अनेक सामाजिक प्रश्न उठाए- स्त्री शिक्षा, पर्दा प्रथा, विधवा विवाह, स्त्री-पुरुष समानता, दहेज जैसी कुरीतियाँ। उन्होंने कहा था-"जब तक स्त्रियाँ स्वतंत्र और शिक्षित नहीं होंगी, तब तक समाज की उन्नति असंभव है।" इससे हिंदी समाज में स्त्री अधिकार और समानता की चेतना फैलने लगी।

राजेंद्र यादव के संपादन में स्त्री विमर्श का विस्तार

1986 में 'हंस' का पुनर्प्रकाशन राजेंद्र यादव ने किया, और इसे पूरी तरह स्त्री विमर्श, दलित विमर्श और समकालीन सामाजिक मुद्दों की पत्रिका बना दिया। उन्होंने स्त्री की शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वतंत्रता को केंद्रीय मुद्दा बनाया। पत्रिका में महिलाओं के लेख, कहानियाँ, कविताएँ और आत्मकथाएँ प्रकाशित होने लगीं। यादव जी ने कहा था- "हंस अब औरत की आवाज़ बनेगा उसकी पीड़ा, उसकी चाह, उसकी अस्मिता का मंच।

महिला लेखिकाओं को मंच

'हंस' ने अनेक महिला लेखिकाओं को पहचान और अभिव्यक्ति का अवसर दिया, जैसे—महादेवी वर्मा, मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान, अनामिका, अलका सरावगी, नीलिमा चौहान, गीतांजलि श्री आदि। इन लेखिकाओं ने अपने लेखन में स्त्री की आत्म-अस्मिता, स्वतंत्रता, यौनिकता, सामाजिक संघर्ष को मुखरता से व्यक्त किया।

स्त्री विमर्श और सामाजिक परिवर्तन

'हंस' ने स्त्री चेतना को केवल भावनात्मक विषय नहीं, बल्कि विचार और आंदोलन का रूप दिया। पत्रिका ने समाज से यह प्रश्न पूछा-"क्या स्त्री केवल देह है या विचार की स्वतंत्र सत्ता?" इस प्रकार इसने स्त्री को सोचने, प्रश्न करने और विद्रोह करने की शक्ति दी। 'हंस' के लेखों और कहानियों में पुरुषवादी समाज के दमन, दोहरे मापदंड, और सत्ता-भोग की प्रवृत्ति पर तीखी चोट की गई। इससे नारी में स्वतंत्र अस्तित्व की चेतना विकसित हुई।

इस पत्रिका ने नारी को अपनी आवाज़, अस्मिता और विचार का मंच दिया। 'हंस' पत्रिका का आरंभ प्रेमचंद ने किया। बाद में राजेंद्र यादव के संपादन में यह पत्रिका स्त्री विमर्श की धुरी बन गई। प्रेमचंद ने स्वयं 'हंस' में स्त्री शिक्षा और सामाजिक सुधार पर लेख लिखे। सुभद्राकुमारी चौहान की कविताएँ 'हंस' में प्रकाशित हुईं जिनमें स्त्री की करुणा और विद्रोह दोनों दिखाई देते हैं। इला चट्टोपाध्याय और निरुपमा दत्त की कहानियों में कामकाजी स्त्रियों के संघर्ष का चित्रण है। राजेंद्र यादव ने स्पष्ट कहा—"हंस का उद्देश्य स्त्री को मौन पात्र से सक्रिय व्यक्तित्व बनाना है।" हंस ने दलित स्त्रियों जैसे कौशल्या बैसंत्री की रचनाएँ भी प्रकाशित कीं, जिससे स्त्री विमर्श का दायरा और व्यापक हुआ।

3. स्त्रीकाल (2000 के बाद)

'स्त्री काल' हिंदी की प्रमुख नारीवादी त्रैमासिक पत्रिका है, जिसकी स्थापना 1990 के दशक में हुई। इसके संस्थापक संपादक हैं - अनिल चमड़िया और बाद में संयुक्ता, कात्यायनी, नीलिमा चौहान जैसी विदुषी महिलाएँ इससे जुड़ीं। पत्रिका का उद्देश्य है -"स्त्री के दृष्टिकोण से समाज, राजनीति, साहित्य और संस्कृति को देखना और उसकी आवाज बनना।

स्त्री चेतना का वैचारिक आधार

'स्त्री काल' ने यह स्थापित किया कि स्त्री केवल घर और परिवार की इकाई नहीं, बल्कि समाज की विचारशील, सृजनशील और स्वतंत्र इकाई है। पत्रिका ने स्त्री के अस्मिता-बोध, आत्मनिर्भरता, लैंगिक समानता और यौनिक स्वतंत्रता जैसे विषयों को प्रमुखता दी। यह पत्रिका कहती है -"स्त्री को केवल समान अधिकार ही नहीं, समान अवसर और सम्मान भी चाहिए।" स्त्री लेखन को मंच प्रदान करना'स्त्री काल' ने अनेक महिला लेखिकाओं, विचारकों और पत्रकारों को मंच दिया। इसमें प्रकाशित लेखिकाएँ हैं- अनामिका, नीलिमा चौहान, कात्यायनी, सुधा अरोड़ा, मैत्रेयी पुष्पा, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग आदि। लेखिकाओं ने स्त्री की दबी आवाज़ को शब्द दिए। इसने समाज में यह चेतना फैलायी कि स्त्री का लेखन भी बौद्धिक विमर्श का हिस्सा है, न कि केवल भावनात्मक अभिव्यक्ति।

पितृसत्ता के विरुद्ध विमर्श : 'स्त्री काल' ने पुरुष प्रधान समाज की संरचना पर गहरा प्रहार किया। इसमें प्रकाशित लेखों ने यह बताया कि स्त्री शोषण केवल शारीरिक या आर्थिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और मानसिक भी है। यह पत्रिका

स्त्री को उसकी राजनीतिक और सामाजिक चेतना से जोड़ती है। “स्त्री काल ने नारी को यह समझाया कि विरोध केवल पुरुष से नहीं, उन परिस्थितियों से है जो उसे सीमित करती हैं।”

स्त्री अधिकारों और आंदोलनों की अभिव्यक्ति

पत्रिका ने भारत में चल रहे महिला आंदोलनों, घरेलू हिंसा विरोध, समान वेतन, शिक्षा, और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों पर खुलकर लेख प्रकाशित किए। यह केवल साहित्यिक पत्रिका नहीं, बल्कि एक विचार मंच और आंदोलनकारी पत्रिका भी है। इसमें ‘मी टू आंदोलन’, ‘शरीर की राजनीति, ‘स्त्री और मीडिया’ जैसे विषयों पर विशेषांक प्रकाशित हुए हैं।

दलित और आदिवासी स्त्रियों की आवाज़

‘स्त्री काल’ ने स्त्री विमर्श को केवल मध्यवगीय महिलाओं तक सीमित नहीं रखा। इसमें दलित, आदिवासी और श्रमिक स्त्रियों की समस्याओं को भी समान महत्व दिया गया। इससे स्त्री विमर्श वर्ग और जाति दोनों आयामों से समृद्ध हुआ।

साहित्य में स्त्री दृष्टि का प्रसार

‘स्त्री काल’ ने साहित्य को स्त्री के अनुभवों, संवेदनाओं और संघर्षों के माध्यम से नया रूप दिया। इस पत्रिका में प्रकाशित कविताएँ, कहानियाँ और आलोचनाएँ स्त्री अनुभवों की प्रामाणिक गवाही बन गईं।‘स्त्री काल पत्रिका ने हिंदी साहित्य और समाज दोनों में स्त्री चेतना के विकास में ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। इसने नारी को अपनी आवाज़, दृष्टि और पहचान दी। “स्त्री काल ने नारी को मौन से संवाद तक पहुँचाया।वह अब प्रश्न करती है, विचार करती है, और निर्णय लेती है।”स्त्रीकाल पत्रिका पूर्णतः स्त्री विमर्श को समर्पित है। इसमें दलित स्त्रियों की आत्मकथाएँ जैसे कौशल्या बैसंत्री उच्चवगीय की ‘दोहरा अभिशाप’, बामा की ‘करुक्कु’ पर लेख प्रकाशित हुए। संगिता जोगिंदर और अनिता भारती जैसी दलित लेखिकाओं की कविताएँ और कहानियाँ इसमें प्रकाशित होकर स्त्री विमर्श को हाशिए के समाज तक ले गईं। इस पत्रिका में आदिवासी स्त्रियों पर विशेष अंक प्रकाशित हुए, जिसमें उनकी सामाजिक-आर्थिक समस्याओं और लैंगिक असमानता का चित्रण है। ‘स्त्रीकाल’ ने स्त्री विमर्श को केवल स्त्रियों तक सीमित न रखकर उसे बहुस्तरीय बना दिया।

4. कथादेश

‘कथादेश’ पत्रिका की स्थापना 1990 के दशक में हुई थी। इसके संपादक हैं—हरिनारायण, और बाद में हरिशंकर परसाई, मृदुला गर्ग, अखिलेश, प्रियंवद, और संजीव जैसे लेखकों का सहयोग रहा। यह पत्रिका हिंदी की समकालीन कहानियों, सामाजिक विमर्श और नारी चेतना का प्रमुख मंच बनी। इसका उद्देश्य है—“समाज के बदलते परिदृश्य को साहित्य की दृष्टि से समझना और नई चेतना को अभिव्यक्ति देना।”

स्त्री विमर्श के लिए स्वतंत्र मंच

‘कथादेश’ ने अपने प्रारंभ से ही स्त्रियों को स्वतंत्र रचनात्मक मंच प्रदान किया। पत्रिका में महिलाओं द्वारा लिखी कहानियाँ, निबंध, संस्मरण, और साक्षात्कार प्रकाशित होते हैं। यह पत्रिका स्त्री की दृष्टि से समाज को देखने का आग्रह करती है। “स्त्री केवल कथा की पात्र नहीं, अब वह कथा की रचयिता है”—यही दृष्टि ‘कथादेश’ की पहचान है। स्त्री जीवन और संघर्षो की अभिव्यक्ति ‘कथादेश’ में प्रकाशित कहानियाँ स्त्री के घरेलू संघर्ष, कामकाजी जीवन, समानता के अधिकार, शोषण और दमन के विरोध, जैसे मुद्दों को बहुत गहराई से प्रस्तुत करती हैं। उदाहरण के लिए —कृष्णा सोबती, मैत्रेयी पुष्पा, अनामिका, मृदुला गर्ग, नासिरा शर्मा, गीतांजलि श्री, अल्पना मिश्र आदि की रचनाएँ ‘कथादेश’ में लगातार प्रकाशित होती रही हैं, जो स्त्री अस्मिता को नए अर्थ देती हैं।

‘कथादेश’ ने स्त्री चेतना को पुरुष सत्ता की आलोचना और समानता की मांग से जोड़ा। इसमें प्रकाशित लेखों और

कहानियों में स्त्री की आवाज़ प्रतिरोध की आवाज़ बनकर उभरती है। स्त्री अब केवल सहनशील नहीं, बल्कि विरोध और परिवर्तन की प्रतीक है। "स्त्री की चुप्पी भी संवाद बन गई है" —यह दृष्टिकोण 'कथादेश' की कहानियों का सार है। 'कथादेश' ने यह दिखाया कि आधुनिक स्त्री केवल परिवार की नहीं, बल्कि समाज, राजनीति और संस्कृति की सक्रिय भागीदार है। उसने शहरीकरण, नौकरी, रिश्ते, मातृत्व और पहचान संकट जैसे नए विषयों को जोड़ा। इन कथाओं में स्त्री अपनी आत्मनिर्भरता, विचारशीलता और संघर्षशीलता के साथ सामने आती है। 'कथादेश' ने अनेक नई महिला लेखिकाओं को पहचान दी —जैसे-नीलिमा चौहान, सुधा अरोड़ा, चित्रा मुद्गल, संजना प्रधान, कविता, ज्योत्सना मिलन आदि। इन लेखिकाओं ने स्त्री के विविध रूपों —माँ, प्रेमिका, कार्यकर्ता, लेखक, विद्रोही और नागरिक —को अभिव्यक्ति दी। "कथादेश ने नारी को कथा से इतिहास तक पहुँचाया —वह अब अपनी कहानी खुद लिखती है।"

'कथादेश' पत्रिका ने स्त्री चेतना को कहानियों और विशेष अंकों के माध्यम से प्रस्तुत किया। चित्रा मुद्गल की कहानियाँ 'कथादेश' में छपीं जिनमें कामकाजी स्त्रियों और मजदूर वर्ग की स्त्रियों की समस्याएँ आईं। ममता कालिया ने अपनी कहानियों और व्यंग्यात्मक शैली से स्त्री की घरेलू और सामाजिक विडंबनाओं को उजागर किया। नासिरा शर्मा की कहानियाँ भी 'कथादेश' में प्रकाशित हुईं जिनमें मुस्लिम समाज की स्त्रियों की समस्याएँ सामने आईं। इस प्रकार 'कथादेश' ने स्त्री विमर्श को बहुसांस्कृतिक दृष्टि दी।

5. पहल

'पहल' पत्रिका ने समाज, राजनीति और साहित्य को जोड़ते हुए स्त्री प्रश्नों को उठाया। इसमें मैत्रेयी पुष्पा की कहानियाँ छपीं जो ग्रामीण स्त्री के संघर्ष और विद्रोह को व्यक्त करती हैं। कुसुम वियोगी और अर्चना वर्मा की कविताएँ भी स्त्री की अस्मिता और स्वतंत्रता पर केंद्रित हैं। 'पहल' ने स्त्री चेतना को समाजवादी और राजनीतिक आंदोलनों से जोड़ते हुए प्रस्तुत किया।

6. नया ज्ञानोदय

'नया ज्ञानोदय' हिंदी की प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका है, जो भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित होती है। इस पत्रिका ने आधुनिक हिंदी साहित्य में स्त्री चेतना को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

स्त्री के मुद्दों को महत्व दिया

'नया ज्ञानोदय' ने स्त्री के संघर्ष, अधिकार, शिक्षा, रोजगार और अस्मिता से जुड़े मुद्दों को जगह दी। इससे समाज में स्त्री को लेकर नई सोच विकसित होती है। पत्रिका ने अनामिका, चित्रा मुद्गल, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, नासिरा शर्मा जैसी प्रमुख लेखिकाओं की रचनाएँ प्रकाशित कीं। इन लेखिकाओं ने स्त्री की स्वतंत्रता, पहचान और आत्मसम्मान को साहित्य में मजबूत आवाज़ दी। पत्रिका ने बार-बार यह प्रश्न उठाया कि- स्त्री को बराबरी का दर्जा कब मिलेगा? इससे समाज में स्त्री समानता की चेतना को बल मिला। 'नया ज्ञानोदय' ने हिंदी साहित्य में स्त्री चेतना को नई दिशा दी। इसने स्त्री को विचार, संघर्ष और सृजन की पहचान दी। 'नया ज्ञानोदय' पत्रिका (भारतीय ज्ञानपीठ) ने समकालीन साहित्य को मंच दिया। इसमें नीलम शर्मा, रेखा सेठी और मधु कांकरिया जैसी लेखिकाओं की कहानियाँ और कविताएँ प्रकाशित हुईं। इन रचनाओं में स्त्री का आधुनिक संघर्ष—नौकरी, परिवार, सामाजिक असमानता और यौनिक स्वतंत्रता का चित्रण है। 'नया ज्ञानोदय' ने नई पीढ़ी की स्त्रियों की आवाज को सामने लाने का कार्य किया।

हिंदी साहित्य में स्त्री चेतना का विकास साहित्यिक पत्रिकाओं के बिना संभव नहीं था। 'सरस्वती' ने स्त्री शिक्षा और सुधार का बीजारोपण किया। 'हंस' ने स्त्री विमर्श को सामाजिक विमर्श का केंद्र बनाया। 'स्त्रीकाल' ने स्त्री विमर्श को बहुस्तरीय और समावेशी बनाया। कथादेश', 'पहल', 'नया ज्ञानोदय' ने स्त्री जीवन के नए आयाम खोले। इस प्रकार साहित्यिक पत्रिकाओं ने स्त्री चेतना को केवल साहित्य का विषय न बनाकर समाज के प्रत्येक क्षेत्र में चर्चा का केंद्र बना दिया।

संदर्भ सूची

1. सरस्वती पत्रिका (1900-1920 के अंक)
2. हंस पत्रिका (1929, 1986-2013 के अंक)
3. स्त्रीकाल पत्रिका (2000-2020 विशेषांक)
4. कथादेश पत्रिका (विशेष अंक—स्त्री विमर्श)
5. पहल पत्रिका (स्त्री विशेषांक)
6. नया ज्ञानोदय पत्रिका (भारतीय ज्ञानपीठ, 2000 के बाद)
7. कौशल्या बैसंत्री —दोहरा अभिशाप
8. चित्रा मुद्गल —आवां
9. ममता कालिया —बेघर
10. नासिरा शर्मा —पारिजात।

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Ecological Memory in Contemporary French Literature

Dr. Ravi Shankar Kumar
Assistant Prof. in French
Arignar Anna Govt. Arts & Science College, Karaikal
ravishanjnu@gmail.com

Narratives of climate change resonate across world literature, and French literary traditions have long engaged with environmental themes in profound and evocative ways. French authors have crafted compelling works that explore ecology, nature, and humanity's evolving relationship with the planet, offering a rich and thought-provoking journey through environmental consciousness.

In *Le Pays*, Marie Darrieussecq presents an introspective exploration of landscape and environmental identity. Through a deeply personal lens, the novel navigates the complexities of a rapidly transforming world, marked by ecological unease and shifting cultural terrain. It becomes a poignant search for meaning amid the turbulence of climate anxieties and the erosion of familiar landscapes.

J.M.G. Le Clézio's *Désert* (translated as *Desert* in English) offers a lyrical homage to nature while critiquing the encroachments of modernity. Set against the vast and haunting expanse of the early 20th-century Western Sahara, the novel evokes a deep reverence for the desert's timeless beauty and spiritual resonance. It stands as a powerful meditation on displacement, environmental degradation, and the enduring wisdom of indigenous ways of life.

Francophone literature offers a compelling terrain where ecological themes are not only present but often deeply entwined with questions of identity, colonial history, and spiritual or poetic renewal.

Francophone literature does not treat ecology as a separate domain—it is braided into the very fabric of cultural expression, often as a response to rupture. Whether through the volcanic metaphors of Césaire, the mangrove poetics of Glissant, or the vegetal memory in Pineau's narratives, nature is not passive scenery but an active interlocutor.

In this sense, Francophone ecological writing is not merely environmentalist—it is *cosmopoetic*. It invites us to listen to the whispers of sui and remous, to trace the soul (*âme*) of a landscape, and to recognize that every leaf, every gust of wind, carries the weight of history and the promise of renewal.

Key words: *French literature, Cosmopoetic, Displacement, active interlocutor, Environmental identity.*

French literature has a rich and nuanced relationship with nature, often treating it not just as scenery but as a mirror, a muse, and a moral compass. Across centuries, several recurring themes emerge that reflect how French writers have engaged with the natural world.

Let us explore how French literature engages with nature, landscape, and environmental consciousness. Let's also enrich the essay with vivid examples from French literature that illuminate how nature and environmental themes have been explored across time. How have French writers captured the soul of the landscape? What wisdom has emerged from the rustling leaves, reflecting environmental concerns in French literature? What does each gust of wind whisper to the French imagination, as revealed through their novels? And what promises of renewal of nature reborn echo through the pages of French literary tradition?

Do we find answers to these questions in French literature? French readers confidently say yes. French literature offers profound insights into each of these themes. If we explore its pages, we discover how writers have responded to the soul of the landscape, the wisdom of nature, environmental concerns, and the promise of renewal. In the following paragraphs, we will examine the key themes and ideas that French authors have explored in relation to these questions.

Echoes of the Soil in French Writing

French literature portrays nature not as a backdrop but as a living presence—an active companion and moral guide. From serene countrysides to turbulent storms, writers engage in dialogue with the landscape, weaving emotion, philosophy, and ecological awareness into their works.

Jean Giono depicts earth as vital and challenging, George Sand poeticizes agrarian life, and Marguerite Duras shows nature's subtle intrusion into urban modernism as a reminder of loss and longing.

French literature extends beyond beauty to environmental critique, with thinkers like Michel Serres and Pierre Rabhi urging ecological harmony. Through metaphor and direct appeal, they envision renewal where reconnecting with nature fosters healing and resistance.

French literature treats nature as a living voice, guiding compassion and renewal. Authors animate landscapes with emotional and spiritual depth, revealing communion with the natural world beyond mere description.

Ecological Imagination under Planetary Alarm:

In 20th century French literature, nature is a vital force. Jean Giono's *The Man Who Planted Trees* celebrates ecological renewal through stewardship, while Julien Gracq's *The Opposing Shore* portrays landscapes of decay and alienation. Together, their works highlight the tension between regeneration and stagnation, reflecting on human agency and the enduring presence of the natural world.

Jean Giono, famed for his bond with Provence, portrays nature as living spirit and memory. In *The Man Who Planted Trees* (1953), he narrates a shepherd's reforestation of a barren valley, a timeless allegory of ecological restoration and individual stewardship. His lyrical prose renders Provence as a spiritual terrain, animating landscape with vitality and meaning. Here are some standout lines that embody this theme:

"It was his opinion that land was dying for want of trees." [Giono, p.16]

Elzéard Bouffier embodies resilience and ecological wisdom, believing renewal begins with reforestation. His solitude reflects moral clarity, making him a symbolic figure of quiet stewardship.

"All this, at the time I embarked upon my long walk through these deserted regions, was barren and

colourless land.” [Giono, p.5]

In *The Man Who Planted Trees*, the narrator marvels at a barren land transformed by Elzéard Bouffier’s patient reforestation. The desolate landscape becomes a symbol of renewal, embodying the story’s central theme that environmental and spiritual regeneration is possible through humble, consistent effort.

In *The Opposing Shore* (1951), Julien Gracq uses landscapes—sea, marshes, fortresses, and forests—as metaphors for psychological and political tension. Nature evokes mystery, decay, and transcendence, mirroring inner turmoil and historical unease.

Let us examine key excerpts from the novel that evoke the emotional resonance of its landscapes.

“Solitude and boredom. It’s what happens to something that’s felt itself gathered together too long, too...exclusively. The vacuum that occurs at its frontiers—a kind of numbness which is generated on its torpid surface as if it had lost the sense of touch—lost contact.” [Gracq ,p.272]

Gracq critiques self containment as a cause of stagnation and decay, where isolation breeds boredom and alienation. His imagery underscores entropy and the peril of resisting renewal, reflecting his poetics of stasis and ecological transformation.

“That city lies stiff in its grave and ripe on its inert stones—and what can still delight an inert stone except to become, once more, the bed of a raging torrent.” [Gracq ,p.265]

Julien Gracq critiques urban stagnation and ecological suppression, portraying lifeless cities and dormant nature as symbols of collapse. His imagery suggests that controlled landscapes risk decay, while nature remains poised for renewal through upheaval.

Jean Giono’s *The Man Who Planted Trees* portrays reforestation as a spiritual act of renewal, while Julien Gracq’s *The Opposing Shore* depicts nature as a mirror of psychological decay and urban stagnation. Together, they highlight the tension between ecological restoration and civilization’s dissonance with the natural world.

Contemporary French literature heightens ecological urgency, moving from symbolic reflection to planetary warning and concern.

Landscapes of Loss and Listening:

Marguerite Yourcenar and J.M.G. Le Clézio portray nature as memory, resilience, and spiritual presence. Yourcenar’s *Memoirs of Hadrian* reflects fragility and transience, while Le Clézio’s *Desert* and *The African* evoke ecological purity and postcolonial consciousness. Together, they reveal the spiritual and political dimensions of ecological imagination, linking historical reflection with contemporary urgency.

Though historical fiction, Marguerite Yourcenar’s *Memoirs of Hadrian* reflects on nature’s fragility and the impermanence of human constructs, with passages that reveal environmental concern.

“And today, on the Villa’s terrace, watching the slaves treat the orchard trees or weed the flower beds, I think most of all of the coming and going of a watchful gardener.” [Yorcenar, p.132]

In *Memoirs of Hadrian*, the gardener symbolizes imperial stewardship and moral conscience, with the garden reflecting cycles of time, power, and an early ecological awareness rooted in respect for nature.

"I knew very well that this small valley planted with olive trees was not Tempe, but I was reaching the age where each beauteous place recalls another, fairer still, where each delight is weighted with the memory of past joys." [p 261]

In *Memoirs of Hadrian*, a valley of olive trees evokes aging's melancholy and layered memories, contrasting myth with personal reflection. In *Memoirs of Hadrian*, the olive grove symbolizes memory, myth, and aging, reflecting Hadrian's nostalgic meditation on mortality, empire, and nature's enduring spirit.

J.M.G. Le Clézio, Nobel laureate, writes of nature's beauty and fragility. *Desert* contrasts the purity of the desert with modern corruption, while *The African* reflects on colonial damage. His works embody ecological awareness and a longing for lost harmony.

"It's a music born of the heavens and of the clouds, it bounces off the sand of the dunes, spreads out and resonates everywhere, even in the dry thistle leaves." [Le Clézio, p.144]

In *Desert*, J.M.G. Le Clézio portrays sound as a sacred force embodying cultural vitality, memory, and resistance. His imagery links indigenous oral tradition with ecological and postcolonial vision, where sound sustains identity and continuity even in harsh landscapes.

They were sitting on the shingles of the river, and some had pitched their tents or had built shelters out of branches and leaves. [Le Clézio, p.199]

In *Desert*, J.M.G. Le Clézio depicts fragile settlement and survival on a stony riverbank, where displacement and impermanence contrast with resilience and ecological intimacy. The imagery underscores exile, marginalization, and a postcolonial critique of indigenous erasure, affirming a deep bond between land, memory, and survival.

Marguerite Yourcenar and J.M.G. Le Clézio portray nature as memory, conscience, and resistance. Yourcenar's *Memoirs of Hadrian* reflects fragility and stewardship, while Le Clézio's *Desert* and *The African* evoke survival, exile, and ecological continuity. Together, they affirm nature's enduring role in ecological imagination and its spiritual and political resonance in French literature.

Émile Zola's *Germinal* contrasts the lyrical ecologies of Yourcenar and Le Clézio by depicting nature as a wounded body under industrial exploitation. This shift from reflection to indictment expands French ecological imagination, showing nature as both conscience and battleground for survival.

Ecological Consciousness in *Germinal* and *The Roots of Heaven*

Émile Zola's *Germinal* depicts nature as a wounded witness to industrial exploitation, while Romain Gary's *The Roots of Heaven* envisions ecological and moral restoration through the fight to protect elephants. Together, they broaden French ecological literature, linking environmental devastation with struggles for justice, empathy, and renewal.

Émile Zola's *Germinal* primarily depicts labour struggles and social injustice, yet also portrays the ecological toll of coal mining. Through naturalistic detail, Zola presents the scarred landscape as a symbol of exploitation and conflict between industrial greed and nature's rhythms, making the novel an early exploration of environmental consequences.

"Their voices were lost, gusts of wind carrying away the words in a melancholy howl." [Zola, p.6]

In *Germinal*, Zola uses the wind as a poetic witness, mirroring miners' suffering and despair through nature's melancholy.In *Germinal*, Zola's image of the wind symbolizes isolation and silenced protest, reflecting miners' fragile struggle against overwhelming industrial and societal forces.

"Was it not a cry of famine that the March wind rolled up across this naked plain?" [Zola, p.6]

In *Germinal*, Zola personifies the March wind and barren plain as symbols of miners' vulnerability, turning nature into a metaphor for poverty, hunger, and systemic exploitation.

Romain Gary's *The Roots of Heaven* (1956) is an early ecological novel linking environmentalism with human rights. Set in Africa, it portrays a crusade to save elephants as a symbol of dignity and justice, making the work a foundational call to ecological consciousness.

Romain Gary's *The Roots of Heaven* portrays Morel's fight to save elephants as resistance to exploitation, critiquing colonialism's damage to ecosystems and dignity. Elephants become symbols of freedom and majesty, while the clash between idealism and pragmatism highlights the tension between ecological empathy and realpolitik. The novel ultimately urges readers to see nature as a moral companion rather than a mere resource.

"But the elephants are part of that fight. Men are dying to preserve a certain splendour of life. Call it freedom, or dignity. They are dying to preserve a certain natural splendour." [Gary, p.63]

In *The Roots of Heaven*, Romain Gary portrays Morel's fight to protect elephants as a moral imperative, symbolizing freedom, dignity, and ecological struggle. Linking environmental ethics with human rights, the novel presents ecological destruction as a moral crisis and affirms that preserving nature is inseparable from preserving humanity's soul.

Zola's *Germinal* and Gary's *The Roots of Heaven* trace the evolution of ecological consciousness in French literature, from naturalist critique of industrial exploitation to visionary calls for moral and environmental redemption. Both show degradation as social, political, and spiritual crisis, affirming literature's power to bear witness and inspire ecological imagination. Building on this foundation, contemporary thinkers like Rabhi, Bourg, and Latour move from narrative to systemic intervention, linking personal transformation, political critique, and planetary governance to ecological renewal.

Conclusion: French literature entwines human and natural worlds, portraying nature as memory, soul, and relationship. Across centuries—from Giono's valleys and Le Clézio's deserts to Rabhi's ecological thought—landscape emerges as a living presence, reflecting beauty, vulnerability, and a call for care and renewal.

Bibliography

CÉSAIRE,Aimé, Clayton Eshleman (Trans.), *Notebook of a Return to the Native Land*, Wesleyan University Press, 2001

BOURG, Dominique (Ed.), and PAPAUX, Alain (Ed.) Dictionnaire *de la pensée écologique*, PUF,2015

DARRIEUSSECQ, Marie, *Le Pays*, Folio, Gallimard, 2007

DURAS,Marguerite, Herma Briffault (Trans.), *The Sea Wall*, Faber and Faber, London,1952

GARY, Romain, Jonathan Griffin (Trans.), *The Roots of Heaven*, Pocket Books, Inc. New Yourk, 1956

GIONO, Jean, Peter Doyle (Trans.), *The Man Who Planted Trees*, Chelsea Green Publishing Company, 1985

GLISSANT,Édouard, Betsy Wing (Trans.) *Poetics of Relation,* The University of Michigan Press, 1997

GRACQ ,Julien, Richard Howard (Trans.) *The Opposing Shore* , Libraire José Corti ,1951

LATOUR, Bruno, Catharine Porter (Trans.) *Facing Gaia: Eight Lectures on the New Climatic Regime*, Polity Press, UK, 2017

LE CLEZIO, J.M.G., C. Dickson (Trans.), *Desert*, Atlantic Books**,** Ormond House, London, 2010

LE CLEZIO,J.M.G., C. Dickson (Trans.), *The African*, David R. Godine, Boston, 2013

PINEAU, Gisèle, C. Dickson (Trans.), *Macadam Dreams*, Bison Books, 2003

RABHI,Pierre, *Vers la sobriété heureuse*, Acte Sud, Colibris, 2021

RABHI, Pierre,Joseph Rowe (Trans.), *As in the Heart, So in the Earth: Reversing the Desertification of the Soul and the Soil*. Inner Traditions/Bear & Company,2006

SAND, George, Jane Minot Sedgwick (Trans.) *The Devil's Pool*, J.M. Dent & Company, 1895

SAND, George, Eirene Collis (Trans.) *The Country Waif*, Nebraska, 1977

SAND, George, Gretchen van Slyke (Trans.), *Little Fadette*, Penn State University Press, 2017

SERRES ,Michel, Anne-Marie Feenberge-Dibon (Trans.)*Malfeasance: Appropriation Through Pollution?* Stanford University Press, 2010

YOURCENAR, Marguerite, C.Dickson (Trans.), *Memoirs of Hadrian*, London Secker & Warburg, 1955

ZOLA,Émile, Hovelock Elus, (Trans.) *Germinal*, The Nonesuch Press, London, 1942

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

आदिवासी साहित्य में लोकजीवन

प्रमोद कुमार गोंड
शोधार्थी
डॉ. रश्मि जैन
प्राध्यापक, निर्देशक

आदिवासी साहित्य भारतीय साहित्य की वह मूलधारा है, जिसकी संरचना आदिवासी समाज के लोकजीवन से निर्मित होती है। यह साहित्य आदिवासी समुदायों के जीवनानुभव, सांस्कृतिक परंपराओं, प्रकृति-चेतना, श्रम-संस्कृति और संघर्षों की प्रामाणिक अभिव्यक्ति है। "आदिवासी साहित्य का जन्म लोकजीवन की गोद में हुआ है, जहाँ जीवन और प्रकृति का द्वंद्व नहीं, सहअस्तित्व है" (Tete 21)। लोकजीवन यहाँ केवल वर्णनात्मक तत्त्व नहीं, बल्कि साहित्य की चेतना और विचारधारा का मूल आधार है।

लोकजीवन का अर्थ सामान्य जन के दैनिक जीवन, उसकी परंपराओं, लोकविश्वासों, लोकगीतों, लोककथाओं और सामूहिक स्मृतियों से है। आदिवासी समाज में लोकजीवन व्यक्ति-केंद्रित न होकर समुदाय-केंद्रित होता है। यही सामूहिकता आदिवासी साहित्य को मुख्यधारा के व्यक्तिवादी साहित्य से भिन्न पहचान प्रदान करती है।

1. आदिवासी समाज का सामाजिक लोकजीवन

आदिवासी समाज की सामाजिक संरचना समानतामूलक और सहयोग-आधारित होती है। परिवार, गोत्र, कबीला और ग्राम समुदाय सामाजिक जीवन की प्रमुख इकाइयाँ हैं। निर्णय सामूहिक रूप से लिए जाते हैं और सामाजिक न्याय की भावना प्रबल होती है। "आदिवासी समाज में व्यक्ति नहीं, समुदाय केंद्रीय भूमिका में होता है" (Toppo 34)।

आदिवासी साहित्य में यह सामाजिक लोकजीवन अत्यंत स्वाभाविक रूप में चित्रित होता है। यहाँ वर्ग-भेद और ऊँच-नीच की भावना न्यूनतम है। स्त्री और पुरुष दोनों उत्पादन और सामाजिक निर्णयों में सहभागी होते हैं। निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी स्त्री का श्रमिक, संवेदनशील और आत्मनिर्भर रूप स्पष्ट दिखाई देता है।

2. सांस्कृतिक लोकजीवन और परंपराएँ

आदिवासी लोकजीवन का सांस्कृतिक पक्ष अत्यंत समृद्ध और जीवंत है। लोकगीत, लोकनृत्य, पर्व-त्योहार, वेशभूषा और अनुष्ठान आदिवासी संस्कृति की पहचान हैं। करमा, सरहुल, सोहराय, भगोरिया जैसे पर्व सामूहिक उल्लास और सांस्कृतिक निरंतरता के प्रतीक हैं। "आदिवासी पर्व जीवन के संघर्ष के बीच आनंद और सामूहिकता का उत्सव हैं" (Xaxa 4825)।

लोकगीत आदिवासी इतिहास के मौखिक दस्तावेज हैं। इनमें प्रेम, श्रम, प्रकृति और संघर्ष की अनुभूतियाँ सुरक्षित हैं। आदिवासी साहित्य इन लोकगीतों और लोककथाओं को साहित्यिक रूप देकर लोकजीवन को स्थायित्व प्रदान करता है।

3. प्रकृति और लोकजीवन का संबंध

आदिवासी लोकजीवन और प्रकृति के बीच गहरा और अटूट संबंध है। जंगल, नदी, पहाड़ और पशु-पक्षी आदिवासी जीवन के सहचर हैं। प्रकृति यहाँ उपभोग की वस्तु नहीं, बल्कि माता और संरक्षक के रूप में प्रतिष्ठित है। "आदिवासी साहित्य

में प्रकृति जीवन की सहचरी है, शोषण की वस्तु नहीं" (Munda 57)।

आधुनिक विकास के नाम पर हुए जंगल-कटान, खनन और औद्योगीकरण ने आदिवासी लोकजीवन को गहरे संकट में डाल दिया है। आदिवासी साहित्य इस संकट को केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और अस्तित्वगत संकट के रूप में प्रस्तुत करता है।

4. आर्थिक लोकजीवन और श्रम-संस्कृति

आदिवासी समाज का आर्थिक जीवन कृषि, वन-उपज, शिकार और हस्तशिल्प पर आधारित है। श्रम यहाँ जीवन-मूल्य है, न कि केवल जीविका का साधन। सामूहिक श्रम और साझा संसाधन आदिवासी अर्थव्यवस्था की विशेषता हैं। "आदिवासी समाज में श्रम संस्कृति का आधार है" (Tete 39)।

आदिवासी साहित्य पूँजीवादी शोषण, सामंती दमन और राज्य-प्रायोजित विस्थापन के विरुद्ध प्रतिरोध की चेतना को मुखर करता है। यह साहित्य लोकजीवन की रक्षा का वैचारिक मंच बनता है।

5. लोकजीवन, संघर्ष और प्रतिरोध

आधुनिकता के प्रभाव से आदिवासी लोकजीवन संकटग्रस्त हुआ है। विस्थापन, सांस्कृतिक क्षरण और पहचान का संकट आदिवासी साहित्य के प्रमुख विषय हैं। फिर भी यह साहित्य केवल पीड़ा का दस्तावेज नहीं, बल्कि संघर्ष और प्रतिरोध की चेतना का सशक्त माध्यम है। "आदिवासी साहित्य लोकजीवन के माध्यम से प्रतिरोध की भाषा गढ़ता है" (Toppo 62)।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आदिवासी साहित्य में लोकजीवन उसकी आत्मा है। यह लोकजीवन आदिवासी समाज की संस्कृति, प्रकृति-चेतना, श्रम-संस्कृति और संघर्षों को समग्रता में प्रस्तुत करता है। आदिवासी साहित्य भारतीय साहित्य को एक वैकल्पिक, मानवीय और प्रकृति-संगत जीवन-दृष्टि प्रदान करता है। लोकजीवन के बिना आदिवासी साहित्य की कल्पना असंभव है।

संदर्भ

1. Munda, Ramdayal. Adivasi Darshan Aur Sanskriti. Vani Prakashan, 2010, pp. 55-60.
2. Putul, Nirmala. Nagaad Ki Tarah Bajte Shabd. Rajkamal Prakashan, 2004.
3. Tete, Vandana. Adivasi Sahitya: Parampara Aur Samkalinata. Adivasi Adhyayan Kendra, 2015, pp. 21-40.
4. Toppo, Mahadev. Adivasi Asmita Aur Sahitya. Rajkamal Prakashan, 2012, pp. 34-62.
5. Xaxa, Virginius. "Tribes and Social Exclusion." Economic and Political Weekly, vol. 38, no. 46, 2003, pp. 4823-4828.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

अरुण कमल की कविताओं में अभिव्यक्त पारिस्थितिक संकट की पहचान

डॉ. राखी क्लेमन्ट
सहायक आचार्य एवं विभाग अध्यक्षा
हिन्दी विभाग, सेन्ट.पॉल्स कॉलेज, कळमश्शेरी, एरणाकुलम, केरल
ई-मेल : rakhiclement55@gmail.com
मोबाइल : 9895531276

शोधसार

पर्यावरण सभी जीव जन्तुओं के जीवन का आधार है। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश ये पाँच तत्व पर्यावरण या पारिस्थितिकी के अभिन्न अंग है। पारिस्थितिक एवं पर्यावरण प्रकृति से संबंध रखता है। प्रकृति में वायु, जल, मिट्टी, पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं एवं मानव का जो समरसता मिलता है, उसको हम पर्यावरण या परिस्थिति कह सकते हैं।

आजकल शुद्ध एवं स्वच्छंद प्राकृतिक पर्यावरण दूषण का शिकार पैदा हुई है। इसके अनेक कारण होती है। प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक शोषण, जनसंख्या की बढाई, अनियंत्रित औद्योगिकीकरण, अनियोजिक कांक्रीट भवनों का निर्माण, सडकों का निर्माण, जंगलों का विनाश, पर्यावरण असंगत विकास योजनाएं आदि के द्वारा पर्यावरण प्रदूषण तथा पारिस्थितिकीय असंतुलन होते रहते हैं।

समकालीन हिंदी साहित्य में अनेक साहित्यिक रचनाएँ पारिस्थितिक संकट पर आधारित हैं। इनमें कविता एक सशक्त विधा के रूप में उभरकर सामने आती है। कविता के माध्यम से पारिस्थितिक संघर्ष एवं संकट का सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। कविता मानवीय अनुभूतियों की साक्षात्कार है। समकालीन संदर्भ में सबसे बड़ा समस्या पारिस्थितिकी की होती है। पारिस्थितिक बोध को केंद्र में रखकर लिखने वाले समकालीन कवियों में केदारनाथ सिंह, रामदरश मिश्र, अरुण कमल, अशोक बाजपेयी, चंद्रकांत देवताले, किशोरी लाल व्यास, एकांत श्रीवास्तव, ज्ञानेंद्रपति, लीलाधर मंडलोई, शिशुपाल सिंह, निर्मला पुतुल, जितेंद्र पाठक आदि प्रमुख हैं।

अरुण कमल समकालीन हिन्दी काव्य परिदृश्य के एक महत्वपूर्ण कवि हैं, जिनकी कविताएँ सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय समस्याओं को गहरी संवेदलशीलता के साथ अभिव्यक्त करती हैं। उनकी कविताओं में पारिस्थिक संकट का एक प्रमुख विषय के रूप में उभरता है, जिसमें प्रकृति और मानव के बीच के संबन्धों की जटिलता और असंतुलन को दर्शाया गया है। उनके द्वारा रचित काव्य संग्रहों की सभी कविताओं में कहीं न कहीं प्रकृति के प्रति कवि अपनी कुतूहलता प्रकट करते हैं और उसमें पारिस्थितिक संकट का तीव्र एवं सूक्ष्म निरीक्षण समाहित है–

अपनी केवल धार - 1980
सबूत - 1989

नये इलाके में - 1996
पुतली में संसार - 2004
मैं वो शंख महाशंख - 2013

शहरीकरण, भूमंडलीकरण, औद्योरिकीकरण, ग्लोबल वार्मिंग, प्रदूषण जैसे पारिस्थितिक समस्याओं का ज्वलन्त अभिव्यक्ति अरुण कमल की कविताओं में देखा जा सकता है। वे पारिस्थितिक संकट एवं उसके परिणाम के प्रति जागरूक है। कवि के अनुसार नदियाँ माँ है, यह गंगा की तरह पवित्र है। लेकिन आज इस गंगा की स्थिति अत्यंत दूषित एवं दुर्बल होती है। गंगा के इस शोचनीयता के प्रति कवि संवेदनशील है। 'अपनी केवल धार' संग्रह की 'गंगा को प्यार' नामक कविता में गंगा की इस शोचनीय स्थिति का चित्रण कर गंगा के साथ हो रहे षड़यन्त्रों और प्रदूषणों की ओर संकेत किया गया है–

"असंभव। असम्भव है सोचना
जिनकी मिट्टी गंगा पानी से गुंथी है
उनके लिए असम्भव है सोचने की एक दिन
गंगा के ऊपर उठता हुआ पक्षी
विष की धाह से झुलस जाएगा
कि एक दिन गंगा
नहीं रहेगी और फिर गंगा
वे रख आए हैं गंगा के द्वार पर विषपात्र
षड्यन्त्र। गंगा के साथ भी षड्यन्त्र
हिमालय के साथ
पृथ्वी नक्षत्र मण्डल के साथ।"[1]

कवि इस स्थिति पर निरंतर दुखी है। पर्यावरण और नदी की इस दुरवस्था से मोचन के प्रति वे निरंतर कविता लिखी है। आज गंगा की स्थिति विलुप्ति के कगार पर है। इससे बचाने के लिए सरकार निरंतर प्रयास करते रहते हैं। लेकिन यह केवल कागजी कार्यवाही है, नेताओं को पैसा कमाने का माध्यम मात्र बन गया है। नदी को दुरवस्था से बचाने के लिए लोगों को जागरूक करने का प्रयास उन्होंने इस कविता के माध्यम से किया है।

अरुण कमल ने नदियों की समस्याओं को विषय बनाकर अनेक कविताएँ लिखी हैं। वर्तमान युग की नदियों की दशा अधिक दयनीय है। नदियाँ दिन भर दिन प्रदूषित होती रहती है। अरुण कमल के 'पुतली में संसार' काव्य संग्रह की 'इस श्मशान पर' नामक कविता इसके लिए उदाहरण है। नदियों का सूखना और उनके किनारे बसे लोगों का संघर्ष इस कविता का मुख्य विषय है–

"किसे है याद कल यहाँ कितना पानी था
जहाँ डूबी थी नौका वहाँ
एक बच्चा छपकता दौडता जा रहा है
पानी के नीचे चमकता बालु
पर सूखी रेत पर चलते भी लगता है भय
याद था जाती है बाढ की नदी
और चलो और
जहाँ कुछ पानी हैं उतारेंगे
वही है सबसे बढ़िया जगह इस श्मशान।"[2]

कल नदी में पानी था, लेकिन आज इसके स्थान पर रेत है। मानव बाढ का निर्माण करके नदी और परिस्थिति के

ऊपर हस्तक्षेप करने से उनकी हालात शोषण की कगार पर है। अरुण कमल ने इस पर लिखा कि–

"जहां कल पानी था मरने भर
वहां अमृत है।"[3]

वर्तमान युग की भूमंडलीकरण समाज में ग्रामीण संस्कृति, नदी, नाले, कुएँ, तालाब आचार-विचार, खेती और जंगल सबका शोषण कर रहा है। उसके नाते उन्होंने 'गंगा को प्यार' नामक अपनी कविता के माध्यम से पर्यावरण एवं प्रकृति पर पड़े अत्याचारों के खिलाफ अपना विरोध का स्वर उठाता है। 'फिर से' नामक कविता में प्रगति और उसमें बाढ की निर्माण के परिणाम का अत्यंत सूक्ष्म वर्णन किया है। पर्यावरण प्रदूषण के कारण मौसम में अनेक परिवर्तन आ रहे हैं, कहीं सूखा है, कहीं बाढ है, प्रकृति की हालत द्वन्द्व ग्रस्त है। इसके पश्चात् प्रकृति की संतुलन नष्ट हो गई। बाढ के निर्माण के पश्चात की स्थिति को सूक्ष्म निरीक्षण करके कवि कहती है–

"धीरे-धीरे उतरी है बाढ
पता नहीं कौन सी कोख में
बचा हुआ जीवन
फिर से फेंकता है फंदा
फिर से अपनी जमीन पर लौट रहे हैं लोग बाग
लौट रहे हैं पशु पक्षी
लौट रहा है सारा संसार
इस प्रलय के बाद।"[4]

कवि के मन में गाँव के प्रति गहरी संवेदना है। धीरे-धीरे आधुनिक विकास के नाम पर गाँव का शहरीकरण होता रहा है, गाँव नष्ट होते जा रहे हैं। कवि के अनुसार आज के इस युग उल्टा जमान है। गाँवों की स्थिति को उन्होंने 'उल्टा जमाना' नामक कविता के द्वारा स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि–

"तुम्हारे गाँव तक यह सरकार जो दो हफ्ते में
पक्की सड़क बनवा रही है
खुश मत होवो कि इस पर चलेंगी गाड़ियाँ
और तुम घंटे आधे घंटे में शहर पहुँच जाओंगे
और खाने के वक्त तक
वापस घर लौट लौट आओगे
यह भी सोचो कि इसी से होकर
मिनट भर में पहुँचेगी सरकारी फौज
और तुम्हारा गाँव राख बन जाएगा।"[5]

अरुण कमल जी का लक्ष्य केवल प्रकृति का वर्णन करना ही नहीं, उन्होंने प्रकृति सौंदर्य को मानव जीवन के विभिन्न आयामों से जोड़ने का कार्य भी किया है। ऐसी ही एक कविता है 'सौंदर्य'-

"पछाड़ खा रहै हैं अन्धड में पड़े
ललाट से ललाट टकराते
मथ रहे हैं बादलों से भरा आकाश
गरजता है गगन
देखेगा कौल इन संघर्षरत वृक्षों का दुर्द्धर्ष सौन्दर्य।"[6]

प्रथम संग्रह की 'झरना', 'फिर से'; 'सबूत' संग्रह की 'जीवनधारा'; 'नए इलाके' में संग्रह की 'अगहन'; 'पुतली में

संसार' की 'आजीवन' आदि कविताओं में प्रकृति के प्रति अपनी कुतूहलता को कभी प्रकट करते हैं।

आज हमारे जीवन ग्लोबल वार्मिंग की विभीषिका से गुजरना पड़ती है। कार्बनिक गैसों के उत्सर्जन से ओज़ोन परत पर अनेक छिद्र बन रहा है। धरती पर ताप दिन-प्रतिदिन बढ़ता है। अरुण कमल ग्लोबल वार्मिंग के दुष्परिणाम के प्रति व्यथित है। 'पुतली में संसार' काव्य संग्रह की 'आतप' नामक कविता में धरती की वर्तमान स्थिति का चित्रण किया है–

"आ रही है ग्रीष्म
देह का एक एक रोम अब
खुल रहा है साफ और फैलता हुआ
सूरज के बूबने के बाद भी।"[7]

वर्तमान युग की एक ओर बड़ी समस्या है– जल की समस्या। जल स्रोतों की संस्था कम से कम हुई है। नदी, तालाब, कुएं को औद्योगिक विकास के नाम पर नाश किया है। नदी की स्थिति बहुत दुर्बल बन गया है। अरुण कमल की 'जीवधारा' नामक कविता में पानी की समस्या को उजागर किया है। पानी भरने वाले नदी कोमल एवं शीतल होती है। उसी तरह है धरती भी। जल समृद्ध धरती बहुत निश्चिंत और संतुष्ट है। लेकिन आज धरती की स्थिति दूध भरे धन की तरफ भारी और गमी है। पानी के बिना धरती की संतुलन नष्ट हो जाता है। वह गमी से जला हुआ है–

"खूब बरसा है पानी
जीवन रस में डूब गया है धरती
अभी भी बादल छोप रहे हैं
अमावास्या का हाथ बँटाते
धरती बहुत संतुष्ट बहुत निश्चिन्त है आज
दूध भरे थन की तरह भारी और गर्म।"[8]

समकालीन हिंदी कविता में मौलिक एवं प्रखर अभिव्यक्ति से अरुण कमल ने अपना अलग एवं विशिष्ट स्थान बनाया है। समकालीन कवि परिस्थिति के प्रति जागृत करती है और उसमें परिवर्तन लाने का प्रयास करते हैं। अरुण कमल परिस्थिति के प्रति निरंतर चिंतित एवं व्यथित है। वर्तमान युग की सारी की सारी समस्याएं अरुण कमल की कविता का विषय बन गया है। जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, गोबल वार्मिंग, आवास व्यवस्था जैसे परिस्थिति से संबंधित समस्याओं का चयन करके उसमें सुधार करने का संघर्ष उन्होंने किया है। अतरू उनके काव्य में पारिस्थितिक बोध का सूक्ष्म एवं तीव्र निरीक्षण हमें दृष्टिगत होता है।

निष्कर्ष

समकालीन हिंदी कविता के क्षेत्र में नूतन दृष्टि एवं नयी दिशा प्रदान करने वाले कवियों में अरुण कमल जी का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। अरुण कमल की कविताएँ वर्तमान व्यवस्था के विरुद्ध संघर्षशील करने वाली है। अरुण कमल ने समाज में दम घुटे, तनावग्रस्त परिवेश के, पर्यावरण संतुलन और बिगाड़ कर के काले और सफेद रंग के चित्र अपने काव्य के माध्यम से किया है। उनके काव्य में पारिस्थितिक संकट का तीव्र एवं सूक्ष्म निरीक्षण समाहित है। उनकी कविताएँ पाठकों को पर्यावरण और समाज के प्रति ज़िम्मेदारी का अहसास कराती हैं और इस दिशा में ठोस कदम उठाने के लिए प्रेरित करती है। उनकी कविताएँ स्पष्ट दिखाती है कि पारिस्थितिक संकट केवल पर्यावरणीय मुद्दा नहीं है बल्कि यह सांस्कृतिक, सामाजिक और नैतिक संकट भी है। पारिस्थितिकी का संकट केवल एक समस्या नहीं है, बल्कि मनुष्य की लालस और प्रकृति के प्रति उदासीनता का परिणाम है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गंगा को प्यार, अपनी केवल धार, अरुण कमल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.1980, पृ.सं,63
2. इस श्मशान पर, पुतली में संसार, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.2004, पृ.सं.73
3. -वही-
4. फिर से, अपनी केवल धार, अरुण कमल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.1980, पृ.सं.73
5. उल्टा जमाना, सबूत, अरुण कमल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.1989, पृ.सं.67
6. सौंदर्य, अपनी केवल धार, अरुण कमल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.1980, पृ.सं.14
7. आतप, पुतली में संसार, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.2004, पृ.सं.92
8. जीवधारा, सबूत, अरुण कमल, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.1989, पृ.सं.12

Dr. Rakhi Clement
Assistant Professor & Head
Department Of Hindi
St- Paul'S College Kalamassery
Ernakulam] Kerala – 683503
Mail Id : rakhiclement55@gmail.com
Mob. : 9895531276

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारत में संगीत शिक्षा के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन

Savita Gill
Research scholar, Music Vocal
PGGCG – 11, CHD
Regd- No- 17713000666
Mob. – 9876224332, Email – gillsavita95@gmail.com

सारांश

भारत में संगीत शिक्षा की परंपरा अत्यंत प्राचीन, समृद्ध एवं विविधतापूर्ण रही है। प्राचीन काल से ही संगीत को न केवल मनोरंजन का साधन माना गया, बल्कि इसे शिक्षा, साधना और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का महत्वपूर्ण माध्यम भी स्वीकार किया गया। प्रस्तुत शोध-पत्र का विषय "भारत में संगीत शिक्षा के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन" है, जिसके अंतर्गत भारत में प्रचलित संगीत शिक्षा की विभिन्न प्रणालियों एवं स्वरूपों का विश्लेषण किया गया है।

इस अध्ययन में शास्त्रीय संगीत शिक्षा, लोक संगीत शिक्षा, सुगम एवं फिल्म संगीत शिक्षा, अकादमिक संगीत शिक्षा, तकनीकी संगीत शिक्षा तथा ऑनलाइन संगीत शिक्षा जैसे प्रमुख प्रकारों को सम्मिलित किया गया है। भारतीय शास्त्रीय संगीत शिक्षा मुख्यतः गुरु-शिष्य परंपरा पर आधारित रही है, जिसमें राग, ताल एवं लय के गहन अभ्यास पर विशेष बल दिया जाता है। वहीं लोक संगीत शिक्षा क्षेत्रीय संस्कृति, सामाजिक परंपराओं एवं जनजीवन से गहराई से जुड़ी हुई है।

आधुनिक युग में विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं संगीत संस्थानों द्वारा संचालित अकादमिक संगीत शिक्षा ने संगीत को एक औपचारिक शैक्षणिक विषय के रूप में स्थापित किया है। साथ ही, तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप संगीत प्रौद्योगिकी एवं ऑनलाइन संगीत शिक्षा जैसे नए स्वरूप उभर कर सामने आए हैं, जिन्होंने संगीत सीखने की प्रक्रिया को अधिक सुलभ एवं व्यापक बनाया है। यह शोध-पत्र यह स्पष्ट करता है कि भारत में संगीत शिक्षा के विभिन्न प्रकार एक-दूसरे के पूरक हैं तथा संगीत के संरक्षण, विकास एवं प्रसार में समान रूप से योगदान देते हैं।

मुख्य शब्द :

1. भारतीय संगीत शिक्षा
2. शास्त्रीय संगीत
3. लोक संगीत
4. अकादमिक संगीत शिक्षा
5. ऑनलाइन संगीत शिक्षा

भारत में संगीत शिक्षा के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन

संगीत भारतीय संस्कृति और सभ्यता का अभिन्न अंग रहा है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक संगीत न

केवल मनोरंजन का साधन रहा है, बल्कि यह आध्यात्मिक साधना, सामाजिक अभिव्यक्ति तथा शिक्षा का महत्वपूर्ण माध्यम भी रहा है। सामवेद को संगीत का मूल आधार माना जाता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि भारत में संगीत शिक्षा की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। समय के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक एवं तकनीकी परिवर्तनों ने संगीत शिक्षा के स्वरूप को भी प्रभावित किया है।

प्राचीन काल में संगीत शिक्षा का स्वरूप अनौपचारिक था, जहाँ गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से ज्ञान का हस्तांतरण होता था। यह शिक्षा मौखिक परंपरा पर आधारित थी, जिसमें श्रवण, अनुकरण एवं निरंतर अभ्यास का विशेष महत्व था। मध्यकाल में दरबारी संगीत, मंदिर परंपरा तथा लोक परंपराओं के माध्यम से संगीत शिक्षा का विस्तार हुआ। आधुनिक युग में शिक्षा के संस्थागत स्वरूप के विकास के साथ-साथ संगीत शिक्षा भी विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों तक पहुँची।

वर्तमान समय में भारत में संगीत शिक्षा विभिन्न रूपों में विद्यमान है, जैसे- शास्त्रीय संगीत शिक्षा, लोक संगीत शिक्षा, सुगम एवं फिल्म संगीत शिक्षा, अकादमिक संगीत शिक्षा, तकनीकी संगीत शिक्षा तथा ऑनलाइन संगीत शिक्षा। इन सभी प्रकारों ने अपने-अपने स्तर पर संगीत के संरक्षण, संवर्धन और प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य भारत में प्रचलित संगीत शिक्षा के विभिन्न प्रकारों का विस्तृत अध्ययन करना तथा उनके महत्व, विशेषताओं और वर्तमान प्रासंगिकता का विश्लेषण करना है।

भारत में संगीत शिक्षा की परंपरा अत्यंत प्राचीन और समृद्ध रही है। भारतीय सभ्यता में संगीत को केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि आत्मिक साधना, सांस्कृतिक अभिव्यक्ति और सामाजिक समरसता का माध्यम माना गया है। वैदिक काल से ही संगीत शिक्षा का उल्लेख मिलता है, जहाँ सामवेद को संगीत का मूल आधार स्वीकार किया गया। उस समय संगीत शिक्षा मौखिक परंपरा पर आधारित थी, जिसमें गुरु द्वारा शिष्य को श्रवण और अभ्यास के माध्यम से ज्ञान प्रदान किया जाता था। यह परंपरा आगे चलकर गुरु-शिष्य परंपरा के रूप में विकसित हुई, जिसने भारतीय संगीत शिक्षा की नींव को मजबूत किया।

भारतीय संगीत शिक्षा का एक प्रमुख स्वरूप शास्त्रीय संगीत शिक्षा है, जिसे मुख्यतः हिन्दुस्तानी और कर्नाटक संगीत में विभाजित किया जाता है। इस प्रकार की शिक्षा में राग, ताल, लय, स्वर और भाव की सूक्ष्म समझ विकसित की जाती है। उदाहरण के रूप में, हिन्दुस्तानी संगीत में राग यमन, राग भैरव या राग दरबारी का अभ्यास वर्षों तक कराया जाता है, जबकि कर्नाटक संगीत में राग तोड़ी या कल्याणी जैसे रागों पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इस शिक्षा प्रणाली में विद्यार्थी नियमित रियाज़ करता है और धीरे-धीरे संगीत की गहराइयों को समझता है। यह शिक्षा धैर्य, अनुशासन और मानसिक एकाग्रता को विकसित करने में सहायक होती है।

शास्त्रीय संगीत के साथ-साथ लोक संगीत शिक्षा भी भारतीय संगीत परंपरा का महत्वपूर्ण हिस्सा है। लोक संगीत सीधे जनजीवन से जुड़ा हुआ होता है और यह शिक्षा प्रायः अनौपचारिक रूप से परिवार या समुदाय के माध्यम से प्राप्त होती है। उदाहरण के रूप में, राजस्थान के मांगणियार और लंगा समुदाय के बच्चे बचपन से ही लोक गीत गाते हुए बड़े होते हैं। इसी प्रकार पंजाब में भांगड़ा और गिद्धा, बंगाल में बाउल गीत, असम में बिहू गीत और महाराष्ट्र में लावणी लोक संगीत शिक्षा के उदाहरण हैं। इस प्रकार की शिक्षा में लिखित नियमों की अपेक्षा अनुभव, भावना और सामाजिक संदर्भ को अधिक महत्व दिया जाता है। लोक संगीत शिक्षा भारतीय सांस्कृतिक विविधता को जीवित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सुगम संगीत शिक्षा भारतीय संगीत शिक्षा का एक ऐसा स्वरूप है, जो शास्त्रीय और लोक संगीत के तत्वों को सरल रूप में प्रस्तुत करता है। इसमें भजन, कीर्तन, ग़ज़ल, देशभक्ति गीत और भावप्रधान गीत सम्मिलित होते हैं। उदाहरण के रूप में, मीरा के भजन या कबीर के पद सुगम संगीत शिक्षा के अंतर्गत सिखाए जाते हैं। इस प्रकार की शिक्षा रेडियो, दूरदर्शन, सांस्कृतिक कार्यक्रमों और प्रतियोगिताओं में अत्यंत लोकप्रिय है। सुगम संगीत शिक्षा आम जनमानस को संगीत से जोड़ने का कार्य करती है और संगीत को सामाजिक स्तर पर सुलभ बनाती है।

आधुनिक युग में फिल्म संगीत शिक्षा का विशेष महत्व बढ़ गया है। भारतीय सिनेमा के विस्तार के साथ-साथ फिल्म संगीत ने संगीत शिक्षा के एक नए आयाम को जन्म दिया है। इस प्रकार की शिक्षा में स्टूडियो गायन, माइक्रोफोन तकनीक, भाव अभिव्यक्ति और प्रस्तुति कौशल पर ध्यान दिया जाता है। उदाहरण के रूप में, प्लेबैक सिंगिंग सीखने वाले विद्यार्थी फिल्मी गीतों की रिकॉर्डिंग प्रक्रिया को समझते हैं और विभिन्न शैलियों में गायन का अभ्यास करते हैं। यह शिक्षा उन विद्यार्थियों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है जो संगीत को व्यावसायिक करियर के रूप में अपनाना चाहते हैं।

भारत में संगीत शिक्षा का एक महत्वपूर्ण स्वरूप अकादमिक संगीत शिक्षा भी है। विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में संगीत को एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता है। इसमें संगीत का इतिहास, सिद्धांत, सौंदर्यशास्त्र और संगीतशास्त्र का अध्ययन कराया जाता है। उदाहरण के रूप में, स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर पर विद्यार्थियों को रागों का सैद्धांतिक अध्ययन, ताल प्रणाली और विभिन्न घरानों की जानकारी दी जाती है। इस प्रकार की शिक्षा ने संगीत शिक्षकों, शोधकर्ताओं और विद्वानों को तैयार करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

तकनीकी विकास के साथ-साथ संगीत प्रौद्योगिकी शिक्षा का भी तेजी से विकास हुआ है। इस शिक्षा में संगीत निर्माण, रिकॉर्डिंग, मिक्सिंग और डिजिटल सॉफ्टवेयर के उपयोग का प्रशिक्षण दिया जाता है। उदाहरण के रूप में, आज के विद्यार्थी कंप्यूटर और डिजिटल उपकरणों की सहायता से स्वयं संगीत तैयार कर सकते हैं। यह शिक्षा फिल्म, विज्ञापन, ओटीटी प्लेटफॉर्म और गेमिंग उद्योग में रोजगार के नए अवसर प्रदान करती है। संगीत प्रौद्योगिकी शिक्षा ने पारंपरिक संगीत शिक्षा को आधुनिक उद्योग से जोड़ने का कार्य किया है।

डिजिटल युग में ऑनलाइन संगीत शिक्षा एक प्रभावी माध्यम के रूप में उभरकर सामने आई है। इंटरनेट और वीडियो संचार तकनीक के माध्यम से विद्यार्थी घर बैठे संगीत सीख सकते हैं। उदाहरण के रूप में, कोई विद्यार्थी ऑनलाइन माध्यम से तबला, हारमोनियम या गायन की कक्षा ले सकता है और रिकॉर्डेड अभ्यास के माध्यम से अपनी प्रगति को सुधार सकता है। ऑनलाइन संगीत शिक्षा ने दूरदराज़ के क्षेत्रों में रहने वाले विद्यार्थियों को भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अवसर प्रदान किया है। यद्यपि इसमें तकनीकी समस्याएँ और प्रत्यक्ष संपर्क की कमी जैसी चुनौतियाँ हैं, फिर भी यह शिक्षा भविष्य की आवश्यकता बनती जा रही है।

वर्तमान समय में संगीत शिक्षा के सामने कई चुनौतियाँ भी हैं। परंपरागत और आधुनिक शिक्षा के बीच संतुलन बनाना, प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी, तकनीकी संसाधनों की असमान उपलब्धता और लोक संगीत परंपराओं का लुप्त होना प्रमुख समस्याएँ हैं। उदाहरण के रूप में, कई लोक कलाकारों के पास औपचारिक मंच या संस्थागत सहयोग नहीं होता, जिसके कारण उनकी कला धीरे-धीरे समाप्त हो रही है। इन चुनौतियों का समाधान समन्वित शिक्षा प्रणाली द्वारा किया जा सकता है।

समग्र रूप से देखा जाए तो भारत में संगीत शिक्षा बहुआयामी और विविध स्वरूपों में विद्यमान है। शास्त्रीय, लोक, सुगम, फिल्म, अकादमिक, तकनीकी और ऑनलाइन संगीत शिक्षा सभी का अपना-अपना महत्व है। उदाहरण के रूप में, जहाँ शास्त्रीय संगीत गहन साधना सिखाता है, वहीं लोक संगीत सामाजिक जुड़ाव प्रदान करता है और ऑनलाइन शिक्षा आधुनिक सुविधा। इन सभी प्रणालियों का संतुलित विकास ही भारतीय संगीत परंपरा के संरक्षण और भविष्य के विस्तार के लिए आवश्यक है। संगीत शिक्षा न केवल कला को जीवित रखती है, बल्कि व्यक्ति के मानसिक, भावनात्मक और सांस्कृतिक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारत में संगीत शिक्षा एक अत्यंत समृद्ध, बहुआयामी और विकसित होती हुई प्रणाली है। प्राचीन काल की गुरु-शिष्य परंपरा से लेकर आधुनिक तकनीकी एवं ऑनलाइन माध्यमों तक, संगीत शिक्षा ने समय के साथ स्वयं को निरंतर परिवर्तित किया है। शास्त्रीय संगीत शिक्षा ने भारतीय संगीत

की गहनता, अनुशासन और साधना को संरक्षित रखा है, वहीं लोक संगीत शिक्षा ने क्षेत्रीय संस्कृति, सामाजिक मूल्यों और जनजीवन को जीवंत बनाए रखा है। सुगम और फिल्म संगीत शिक्षा ने संगीत को व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और इसे आधुनिक समाज से जोड़ा है।

अकादमिक संगीत शिक्षा ने संगीत को एक व्यवस्थित, शोधपरक और बौद्धिक विषय के रूप में स्थापित किया है, जिससे शिक्षण और अनुसंधान के नए मार्ग खुले हैं। इसके साथ ही संगीत प्रौद्योगिकी और ऑनलाइन संगीत शिक्षा ने सीखने की प्रक्रिया को अधिक सुलभ, व्यावहारिक और आधुनिक बनाया है। उदाहरणस्वरूप, आज विद्यार्थी घर बैठे ही शास्त्रीय गायन, वाद्य संगीत या संगीत निर्माण का प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं, जो पहले संभव नहीं था। यद्यपि तकनीकी संसाधनों की असमानता, प्रत्यक्ष संपर्क की कमी और परंपरागत मूल्यों के क्षरण जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं, फिर भी इनका समाधान संतुलित एवं समन्वित शिक्षा प्रणाली द्वारा संभव है।

अतः यह कहा जा सकता है कि भारत में संगीत शिक्षा के विभिन्न प्रकार एक-दूसरे के पूरक हैं, न कि प्रतिस्पर्धी। इन सभी का समन्वित विकास भारतीय संगीत की सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण, प्रसार और भविष्य के निर्माण के लिए अनिवार्य है। संगीत शिक्षा न केवल कलाकार तैयार करती है, बल्कि व्यक्ति के मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। इसी कारण भारत में संगीत शिक्षा का भविष्य उज्ज्वल है और यह आने वाले समय में और अधिक व्यापक एवं प्रभावशाली रूप ग्रहण करेगी।

संदर्भ सूची

1. शर्मा, ओ. पी. : भारतीय संगीत का इतिहास; संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. ठाकुर, लक्ष्मीनारायण : भारतीय संगीत की परंपरा एवं विकास; संगीत सदन प्रकाशन, दिल्ली।
3. सेन, अरुण कुमार : लोक संगीत और भारतीय संस्कृति; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. भातखंडे, पं. विष्णु नारायण : हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति; संगीत कार्यालय, लखनऊ।
5. राणे, अशोक : भारतीय सुगम एवं फिल्म संगीत; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. भारत सरकार : भारतीय सांस्कृतिक शिक्षा एवं कला नीति; संस्कृति मंत्रालय, नई दिल्ली।
7. वर्मा, सविता : आधुनिक भारत में संगीत शिक्षा के बदलते आयाम; विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से संबंधित प्रकाशन।
8. त्रिपाठी, शैलजा : संगीत शिक्षणरू सिद्धांत और व्यवहार; ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली।

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

पत्रकारिता, विज्ञापन और गांधी

डॉ. मोहित कुमार नागर
मो. नं. 7503945939

स्वतंत्रता से पूर्व पत्रकारिता का मुख्य लक्ष्य था देश की आजादी किंतु स्वतंत्र भारत में पत्रकारिता का लक्ष्य देश के सामाजिक आर्थिक विकास में जनता की सक्रिय भागीदारी को सक्रिय कर प्रदर्शित करना हो गया था। देश की आजादी एवं नागरिकों के लिए संघर्षरत तथा सामाजिक उत्थान, समाज सुधार एवं पिछड़ेपन एवं रूढ़िवादी-मंद सोच से लोगों को मुक्त कराने का माहौल बनने में मीडिया की भूमिका उल्लेखनीय रही है। आजादी के बाद पत्रकारिता की प्राथमिकता बदलकर राष्ट्र निर्माण अर्थात् विकसित एवं गौरवशाली भारत हो गया। पत्रकार और पत्रकारिता विकास के प्रति प्रतिबद्ध हो गए। पत्रकारिता ने लोकतंत्र के सजग प्रहरी का दायित्व निभाना शुरू किया। राष्ट्र में सरकारों द्वारा सामाजिक स्तरों पर होने वाली गलतियों को सामने लाने तथा राष्ट्र की सामूहिक शक्ति को विकास एवं समान अवसर की गारंटी पर ध्यान केन्द्रित किया गया। राष्ट्र निर्माण के लिए अनेक प्रकार की योजनाएं, नीतियों, रणनीतियों एवं विचारधाराओं को जनता के समक्ष प्रस्तुत किया गया ताकि सभी सामाजिक वर्गों को सही जानकारी देकर योजनाओं और नीतियों का क्रियान्वयन समानता आधारित लक्ष्य के अनुसार किया जा सके। विकास के रास्ते में आने वाली कठिनाइयों, विफलताओं, सरकारी या गैर सरकारी समाचारों, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक प्रचार और सत्य, क्षेत्रीय स्तर पर मौजूद टकरावों और उनके परिणामों के प्रति भी पत्रकारिता ने सामूहिक जागरूकता का प्रचार-प्रसार किया। विज्ञान एवं प्रौद्योगिक के क्षेत्र में आई तरक्की ने अख़बारों की छपाई, अखबारों के कलेवर, साज-सज्जा एवं रंग-रूप तक को प्रभावित किया। सूचना क्रांति, संचार क्रांति, कम्प्यूटर, सेलेलाइट, टीवी चौनेल, वेबसाइट इत्यादि ने आज मानव समाज की जीवन शैली को बहुत हद तक प्रभावित किया है। 15 सितंबर 1959 को दिल्ली में दूरदर्शन का प्रारंभ हुआ। इस समय दूरदर्शन का प्रारंभ भारत के दूरस्थ क्षेत्रों में समाज - शिक्षा के विकास की दृष्टि से किया गया। दूरदर्शन का विकास इस उद्देश्य से भी किया गया था कि वह सामाजिक, आर्थिक विकास के कार्यक्रमों और उपायों को सहारा देने का उचित साधन सिद्ध हो। मुख्य रूप से इस बात पर जोर दिया गया था कि टेलीविजन का इस्तेमाल समाज एवं लोगों में व्याप्त अज्ञानता और निरक्षरता से लड़ने के लिए एक हथियार के रूप में किया जाएगा। वह लोगों को सोचने-समझने एवं व्याप्त समस्याओं पर चिंतन के लिए नया चिंतन देकर उन्हें जागरूक एवं उन्हें लक्ष्यों के प्रति आबद्ध करेगा। नागरिक चेतना जागृत करने तथा कानून-व्यवस्था व सार्वजनिक नैतिकता के प्रति सम्मान पैदा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

समय के बदलाव के साथ-साथ समाचार माध्यमों में भी बदलाव आना कोई नई बात नहीं है। "पत्रकारिता से राजनीति प्रगाढ़ होने लगे। हालांकि इससे पहले भी राजनीति और पत्रकारिता के संबंध थे लेकिन ये संबंध स्वाधीनता आंदोलन में एक-दूसरे के सहायक संबंध थे। आजादी के बाद इन संबंधों में परिवर्तन आया। हिन्दी पत्रकारिता पर राजनीति हावी होने लगी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी पत्र राजनीतिक हलचल से भरे रहे।"[1]

अब हिन्दी पत्रकारिता पर राजनीति का असर इस स्तर का था कि गाँव और दूरदराज की खबरें उनके लिए विशेष महत्त्व नहीं रखती हैं। वस्तुतः हिन्दी पत्रकारिता में आजादी के बाद एकांगीपन आने लगा जोकि आजादी से पहले नहीं था

क्योंकि इससे पूर्व की पत्रकारिता समाज के सभी क्षेत्रों पर तीक्ष्ण दृष्टि रखती थी किंतु आजादी के बाद उसमें सनसनी खेज तत्त्वों एवं सामग्री का बोलबाला अधिक हो गया। जिस पत्रकारिता के आदर्श में समाज के सभी वर्गों के उत्थान का जूनून था, वह अब ठंडा पड़ने लगा था। अब समाचार पत्रों में दूर-दराज एवं गाँवों की खबरें तब तक नहीं छपती थी जबतक कि वहाँ कोई बड़ी घटना न घट जाए, किसी महिला के साथ बलात्कार न हो जाए या किसी गाँव पर कोई प्राकृतिक आपदा न आ जाए। "गाँव में जो सामाजिक परिवर्तन आ रहे हैं, दलित चेतना उत्पन्न हो रही है या जातीय संघर्ष चल रहा है, उसके बारे में ठीक से खबरे नहीं छपती।"[2]

यह सब हिन्दी पत्रकारिता में बड़ी पूंजी के प्रवेश के कारण ही था क्योंकि अब अख़बार भी उसी प्रकार की खबरे देने लगे थे जो उनके पाठक समुदाय के हितों को पूरा करती थी। गाँव या दूरदराज के क्षेत्रों में पूँजी एवं संसाधनों का अभी अभाव बना हुआ था जिस कारण उन क्षेत्रों में अभी पाठक वर्ग नहीं बना था और न ही अभी उस क्षेत्र में बाजार बनने की ही संभावना थी ताकि वहाँ के विज्ञापन प्रकाशित कर उनसे कुछ आय ही मिल सके। साक्षरता का अभी अभाव था जिस कारण अख़बारों की पाठक व प्रसार संख्या अभी शहरों व कस्बों तक ही सीमित थी ओर वही की खबरों को अख़बारों में स्थान मिलता था। स्वाधीनता की इस नवीन बेला में पत्रकारिता जगत में व्यवसाय की वृत्ति का उत्तरोत्तर विकास हुआ। पत्र प्रकाशन के लिए अब अधिक धन की आवश्यकता महसूस की गई, जिसे न तो क्षेत्रीय लोग ही समाचार पत्र के पाठक बनकर पूरा कर सकते थे और न ही ग्रामीण लोग ही, अतः धन की पूर्ति उद्योगपति जगत ही कर सकता था। मीडिया समाज की आँख, नाक एवं कान हैं जो सामाजिक गतिविधियों के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित करता है. उसके अन्दर नये विचारों के लिए भावबोध का निर्माण करता है तथा व्यक्ति एवं राष्ट्र के भीतर संगठन शक्ति का विकास करता है। लोकतंत्र में जनता का जागरूक होना आवश्यक है तभी वह लोकतंत्र के विभिन्न आयामों से अपने आप को जोड़ सकती है एवं राष्ट्र निर्माण में अपना समूचित योगदान दे सकती है। समाचार पत्र सामाजिक चेतना का दर्पण है, जो समाज की वस्तुस्थिति का यथार्थ चित्रण करता है। पत्रकार अपनी कलम का उपयोग सामाजिक सरोकार एवं जनक्रांति लाने में करता है। पत्रकारों ने इस देश में सामाजिक चेतना फैलाकर इस देश को विकसित किया है, जिस कारण समय के साथ-साथ प्रेस का दायित्व भी बढ़ गया है। स्वतंत्रता किसी भी राष्ट्र की प्राणधारा होती है। 19वीं शताब्दी का काल राष्ट्रीय नवजागरण और सुसंगठित जनमत के अंकुरण का काल था। यहाँ पत्रकारिता का सम्यक विकास हुआ। नवजागरण कालीन पत्रकारिता न केवल राजनैतिक क्षेत्रों में जागृति फैला रही थी, बल्कि सामाजिक क्षेत्रों में भी हिन्दी पत्रकारिता ने इसे फैलाया। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में हिन्दी पत्रकारिता ने अपने अभूतपूर्व दायित्वों का निर्वहन करते हुए श्राष्ट्रवादश को प्रखर स्वर प्रदान किया।

संपादकों व पत्रकारों ने पत्रकारिता का कार्य और स्वतंत्रता के धर्म को बखूबी निभाया। कठिन से कठिन संघर्षों का सामना किया, अनेक प्रकार की यातनाओं को झेला, किंतु अपने फर्ज को उन्होंने निरंतर अदा किया। सामाजिक सुधार, स्वदेशी राजनीतिक चेतना, सामाजिक चेतना और आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से समाज को जोड़ना भी एक कला है जिसे समय-समय पर युगीन पत्रकारों ने दूरदर्शिता के माध्यम से पत्रकारिता करते समय बखूबी निभाया है। "प्रेस के आविष्कार ने समाचार-पत्र को संभव बनाया और समाचारों का प्रसार तथा संचार कागज पर मुद्रित करके उन्हें विश्व के कोने-काने तक पहुँचाया।"[3]

बदलते दौर के साथ-साथ जैसे-जैसे परिवहन व्यवस्था में सुधार होता गया वैसे ही पत्र-पत्रिकाओं के प्रसार को भी बढ़ावा मिला और उनके प्रकाशन के बाद उन्हें दूर-दराज के क्षेत्रों में पहुँचाना भी आसान हो गया। विभिन्न प्रकार के संचार संसाधन जैसे टेलीग्राफ, टेलीफोन, सागरों महासागरों के अंदर टेलीग्राफ की लाइनें बिछाने, मुद्रण की प्रणाली में क्रांतिकारी परिवर्तन आने के बाद एवं डाक व्यवस्था में प्रगति आदि ने प्रेस के स्वरूप में नए आयामों को जोड़ा। पिछले बीस वर्षों के दौरान भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में तेजी आयी है जिस कारण से मीडिया के स्वरूप और चरित्र में भी परिवर्तन आए है। पहले-पहल मीडिया का स्वामित्व राष्ट्रीय हाथों में होता था किंतु अब राष्ट्र की सीमाएं छोटी पड़कर टूट गयी हैं। ऐसा इसलिए हुआ है क्योंकि विश्वभर में मास मीडिया पर कुछ नियंत्रण और प्रतिबंध स्थापित किए गये थे, जिन्हें अब समाप्त कर दिया गया। "विश्वभर में अवविनियमन और निजीकरण की प्रवृत्ति जोर पकड़ने से जनसंचार के साधनों के स्वामित्व का संकेंद्रण थोड़े

से हाथों में होने लगा है। इससे समाचारों के संग्रहण और प्रस्तुतीकरण पर निश्चित रूप से प्रभाव पड़ा है। यही हाल जनसंचार के माध्यमों द्वारा सांस्कृतिक उत्पादों के निर्माण और पेश किए जाने का है। इस प्रकार कह सकते हैं कि समाचार और अन्य संबद्ध उत्पादों का वाणिज्यीकरण हो गया है।"[4]

अब समाचार पत्रों को स्थानीय समस्याओं के लिए अलग से पृष्ठ निकालने पड़ रहे हैं, और उन्हें अखबार में भी ज्यादा स्पेस देना पड़ रहा है। हिन्दी अख़बारों के ग्लोबल और लोकल होने के पीछे भूमंडलीकरण का व्यावसायिक दबाव कार्य कर रहा है। नये पाठकों की तलाश व बड़ी कंपनियों के निहितार्थ विज्ञापन के दबाव ने उन्हें स्थानीय होने के लिए विवश किया है। सन् 1980 के बाद का दौर भारत के लिए आर्थिक और राजनीतिक रूप से महत्त्वपूर्ण रहा है। इस समय अर्थव्यवस्था के क्षेत्र से नियंत्रणों की समाप्ति प्रारंभ होती है और देश की अर्थव्यवस्था को भी विश्व की अर्थव्यवस्था से जोड़ने की एक नई पहल प्रारंभ होती है। 24 जुलाई 1991 में भारत ने अंतर्राष्ट्रीय दबाव और आर्थिक संकट की विवशता के कारण नई उदारवादी नीतियों को लागू करने की औपचारिक घोषणा कर दी और भारतीय अर्थव्यवस्था की गाड़ी अब भूमंडलीकरण की पटरी पर दौड़ने लगी। हिन्दी पत्रकारिता ने भी मुक्त व्यापार की इन नीतियों को अपना भरपूर समर्थन दिया। भूमंडलीकरण में हिन्दी पत्रकारिता में विज्ञापन राजस्व, मुनाफे और प्रचार संख्या में अपार वृद्धि हुई। अब हिन्दी पत्रकारिता आधुनिक प्रबंध और कॉरपोरेट व्यवस्था के माध्यम से चलने लगी जहाँ अख़बार को एक उत्पाद और पत्रकारिता को एक उद्योग माना जाने लगा। यह उद्योग भी अब बाजारवादी नियमों के अनुसार ही चलने की नीति अपना रहा है। अमेरिकी तर्ज पर फलता फूलता व्यवसायिक बाजार इनके लिए जीवंत आदर्श है जो जब पाठक को पाठक नहीं बल्कि एक उपभोक्ता के नजरिए से ही देखता है। अब अखबारों में समाचार कम होते हैं जबकि मनोरंजन और रोजमर्रा की जरूरतों को पूरा करने वाले समाचार अधिक। विज्ञापन के चलते अब खबरगीरों की बोलती बंद हो जाती है, क्योंकि आज के समय में विज्ञापनदाता का अर्थ और तंत्र अलग है जिस कारण वह नागरिकों को सुरूचि सम्पन्न और विवेक सम्मान बनाने में दिलचस्पी कतई नहीं है। पूँजी के अपने तर्क होते हैं और वह लाभ हानि के समीकरण को केन्द्रीय मानकर चलती है और आज उसका उद्देश्य मात्र यही है कि अपने उत्पादों के लिए अधिक संख्या में उपभोक्ताओं की एक लंबी सूची तैयार करना। पत्रकारिता 21वीं शताब्दी के दौर में दर्शकों एवं पाठकों के दिल-दिमाग को अनुकूलित करने का प्रयास करती है। इस संदर्भ में प्रसिद्ध अर्थशास्त्री अरूण कुमार जी का कहना है कि "बाजार एक ऐसी संस्था है जो लोकतांत्रिक हो ही नहीं सकती उसमें वर्चस्व उसका ही होगा जिसके पास अधिकतम पूँजी होगी। सम्मानता जैसी बात उसकी आचार संहिता में कहीं नहीं होती।"[5]

पत्रकारिता की दृष्टि से जनता ही एक वास्तविक जीवन्त है और उनकी इच्छाओं, आकांक्षाओं के साथ उनके कष्टों, संकटों तथा आवश्यकताओं के साथ सीधा संबंध स्थापित कर उनमें स्वतंत्रता, स्वाभिमान एवं आत्म बोध का भाव जागृत कर उन्हें आगामी परिवर्तन के लिए तैयार करना है। जिस प्रकार सत्ता, समाज, शासन-प्रशासन की दृष्टि से सर्वप्रमुख अंग जनता होती है उसी प्रकार प्रेस के केन्द्र में भी जनता और जनता से जुड़े क्रियाकलाप ही होते हैं। प्रेस की जिम्मेदारी एवं जवाबदेही जनता के प्रति होती है और जनता को अपने समय के सत्य को जानने का अधिकार होता है। गांधी के लिए भी जनता ही सबसे महत्त्वपूर्ण थी और उन्होंने सदैव इसका ध्यान रखा है कि उनके पाठकों को सत्य की सही जानकारी मिले, उसे वे समझें और जनता के व्यापक हित के लिए सक्रिय हों। गांधी ने अपनी पत्रकारिता को मानव-सेवा के प्रति समर्पित रखा। गांधी ने माना है कि पत्रकारिता सेवा और शिक्षा का माध्यम है और इससे मनुष्य के रंग-बिरंगे स्वभाव का बहुत ज्ञान भी मिलता है। एक अच्छे समाचार पत्र का यह गुण धर्म होता है कि उसके संपादक और ग्राहक के बीच निकट और स्वच्छ संबंध स्थापित होते हैं जिस कारण से पाठक अपने सुख दुःख, हर्ष उल्लास, अपनी समस्याओं, सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में सहज रूप में अपनी अभिव्यक्ति दर्ज कर पाने में सक्षम होता है। इस प्रकार के सहज विचारों के आदान-प्रदान से संपादक भी समाज की गतिविधियों में स्वयं को हमेशा जीवंत पाता है। संपादक स्वयं को समाज का एक सामान्य नागरिक समझता है किंतु ऐसा जीवंत वर्णन पिछले दो दशकों की पत्रकारिता में दुर्लभ ही देखने को मिला हो। यहाँ जनता की समस्याएँ अनेक है, किंतु संपादक के पास उन्हें दर्ज करना तो दूर सुनने तक का समय नहीं है। गाँधी की पत्रकारिता का यह मूलधर्म था

कि जब तक समस्या का कोई हल न निकला हो, समाज के सभी वर्गों में सर्व सम्मति न बनी हो, तब तक उस पर लिखना बंद न किया। सेठ अब्दुल्ला के मुकदमें की पैरवी के बाद जब भोज समापन कर गाँधी ने अख़बार का छोटा से कोने में नेटाल सभा में भारतीयों के अधिकारों के वांच्छन की खबर पढ़ने के बाद से लेकर और अधिकार दिलाने तक गाँधी वहीं डटे रहे। वर्तमान समय में हिन्दी पत्रकारिता अपने आप को उद्योग के स्वरूप में ढाल चुकी है। वे सभी माध्यम जिन्होंने समाज में नयी चेतना जागृत की और तमाम उतार-चढ़ावों से गुजरकर देश की पुनर्जागरण की दिशा की ओर मोड़ा, उन्होंने स्वयं को एक उद्योग में बदल लिया। इस दौर में स्कूल-कॉलेजों से लेकर अस्पतालों एवं सेवा-संगठनों तक का व्यवसायीकरण बड़े पैमाने पर किया गया। आजादी के बाद प्रकाशन घर भी उद्योगों की शक्ल लेने लगे, जिस कारण पुस्तकालय का दम घुटता गया क्योंकि उसमें उद्योग बनने और व्यवसाय करने की क्षमता नहीं थी। हिन्दी पत्रकारिता उद्योग की ओर तब अग्रसर हुई जब समाज और भारतीय पत्रकारिता ने इंदरा गांधी और संजय गांधी के दौर को झेला और राजीव गांधी को अस्वीकार करने की ताकत उसमें शेष न बची थी। मूलतः आज की पत्रकारिता में भी यह प्रवृत्ति देखी जाती है कि वह सरकार और उसके नेताओं के चूल्हें- चौके तथा बेडरूम तक की खबर जनता को परोस देती है। आजादी के बाद के वर्षों में शब्द और वाणी का व्यापक स्तर पर क्षय हुआ है।गांधी ने अपनी पत्रकारिता के माध्यम से भारत की जनता के स्वाभिमान और अधिकार की लड़ाई लड़ी थी और पूरे विश्व विश्व के सामने अपनी आदर्श पत्रकारिता की एक मिसाल पेश की थी कि समाचारों के माध्यम से अहिंसात्मक ढंग से भी दमनात्मक अन्याय और शोषण से एकजुट होकर लड़ा जा सकता है। गांधी ने पत्रकारिता के भटकते लक्ष्यों को इंगित करते हुए लिखा कि “आधुनिक पत्रकार कला में गहराई का अभाव है, विषय का कोई एक ही पक्ष पेश करना, तथ्यों के वर्णन में भूले और अकसर बेईमानी आदि जो दोष आ गए हैं, वे उन ईमानदार व्यक्तियों को लगातार गुमराह करते हैं- जो शुद्ध न्याय होते देखना चाहते है।”[6]

संदर्भ

1. कुमार, विजेन्द्र, हिंदी पत्रकारिता और भूमंडलीकरण, नटराजन प्रकाशन-2007, पृष्ठ 63
2. मीडिया के पचास वर्ष, डॉ. प्रेमचंद पातंजलि, पृष्ठ 26
3. गोयनका, कमल किशोर, गांधी पत्रकारिता के प्रतिमान, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन-2018, पृष्ठ 249
4. बुधवार, जयनारायण, प्रेमिला, भूमंडलीकरण बाजार और मीडिया, स्वराज प्रकाशन-2008, पृष्ठ 53
5. बुधवार, जयनारायण, प्रेमिला, भूमंडलीकरण बाजार और मीडिया, स्वराज प्रकाशन-2008, पृष्ठ 102
6. यंग इंडिया, 12-05 -1920

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

"*Divyavânî* to Digital Screens" highlights Sanskrit's journey from sacred speech to popular visual narrative

Dr. Gurbasppa Neelkanth Karpe
Assistant Professor
School of Languages and Literature,
Punyashlok Ahilyadevi Holkar Solapur University, Solapur, Maharashtra.

Abstract:

The Sanskrit language, as the Divyavana (divine language), has historically held a religious and intellectual niche in the Indian system of civilization, which is mostly linked with Vedic worship and classical philosophy and ancient knowledge systems. In the modern world, though, the future of Sanskrit and its continued existence relies more and more on how it is able to interact with the new forms of communication. In this paper, I will look at how the Indian film industry has played a transformative role in rebranding the Sanskrit language as a source of sacred books to visual stories hence spreading its culture and communication. The study applies the methodological framework of qualitative approach, which incorporates content analysis, thematic interpretation and case studies of various Sanskrit movies and documentaries to examine the role of cinema in reviving language as a medium of communication and transmitting culture to the younger generation.

The article examines full-length Sanskrit movies like Adi Shankaracharya, Priyamanasam, and Ishti and the innovative works like the Sanskrit science documentary Yaanam to showcase the different functional features of Sanskrit in the process of film-making. It states that not only does the cinema maintain the purity of the language, it also re-contextualises the Sanskrit in modern themes such as social reform, education, and scientific success. Moreover, the paper contextualizes the Sanskrit cinema as part of the wider debates on cultural identity, national pride and soft power, and its role in the Indian Knowledge Systems (IKS) of India. Indian cinema can be seen as a way of balancing between tradition and modernity because it enables Sanskrit to be heard and seen on the screens of digital mediums, meaning that the DivyavâGî will be heard and seen as relevant in the 21st century.

Keywords: Sanskrit Cinema, Indian Knowledge Systems (IKS), Language Revival, Cultural Identity, Soft Power, DivyavâGî, Indian Film Studies

Introduction:

Sanskrit, a language that is venerated as देवभाषा, is one of the oldest and systematically developed languages in the world, and has been used over centuries as the main language of the large body of Vedic text, दर्शन, विज्ञान, गणित, आयुर्वेद और कला। Sanskrit is not just a ritualistic language, traditionally

used in veda-mantra वर्णनाय, but a repository of Indian intellectual tradition since ancient times up to date. Its grammar accuracy which was codified by Panaini as well as the philosophy of Sanskrit have made it well known all over the world as the language of knowledge (ज्ञानभाषा). However, nowadays it has been seen as alien to daily life used in classrooms, temples, or academic world.

There is, however, cinema that is among the most dominant tools of mass communication in modern India. Cinema has the exclusive capacity to render the specific ideas, feelings, and practices in an easy to follow visual form, forming the work of mass perception. Whereas filmmakers in India have intermittently involved Sanskrit literally, with films in their entirety scripted and enacted in Sanskrit, and symbolically, with the inclusion of shlokas, chants, philosophical dialogues, titles and narrative topics which refer to classics, Indian cinema has included the Sanskrit language, both as a medium of the script, and as a signifier. These acts of cinema make Sanskrit a living, breathing and emotionally connecting language.

This paper suggests that Indian cinema, with its creative and experimental work with Sanskrit, contributes an important part to the revival, awareness, of the language in the 21 st century. Treating Sanskrit in the context of issues of philosophy, mythology, social issues, and even modern science, the cinema refutes the idea of Sanskrit as outdated and reinterprets it as a moving agent of the Indian Knowledge Systems (IKS). Through this, not only is linguistic preservation enhanced through films but also, so is the empowerment of cultural self-confidence and national identity by giving Sanskrit the relevance it had always had in India in the present day.

The literature review/ background:

An extensive survey of the available literature indicates that there are multiple overlapping lines of investigation that can be useful in the context of studying language embodiment in cinema, Sanskrit preservation movements, and theoretical frameworks that connect language, identity and cultural soft-power. To begin with, linguistic studies outline that cinema is not merely an entertaining activity, but rather a potent instrument of cultural expression and identity formation, which predetermines the way linguistic communities perceive themselves and are perceived by other people. In film studies and cultural communication, the process of reconfiguration of linguistic identities in the cinema is observed to take place through narrative, dialogue, symbolism, and visual representation, and, as such, language has become the primary medium of cultural meaning in filmic texts.

In the narrower sense of Sanskrit, the Sanskrit revival movement of linguistic and educational studies is one which writes about overall attempts to revive interest in the language in schools, universities, and community programs in India. Through formal education, conversational learning movements and through mass discourse that focuses on the cultural heritage and constitutional status, Sanskrit has received institutional recognition.

Though the academic literature particularly on the representation of Sanskrit in the cinema is scarce to that of the major modern languages, there exists an evident direction towards recognition of the cultural subtext of films that either indulge Sanskrit or foreground Sanskrit. This covers Sanskrit-language movies, reinterpretation of classical works, and integration of mantras, shlokas and classical themes which are all used as the areas of linguistic affirmation in film texts. Moreover, the studies of the contribution of cinema to cultural soft power highlight the fact that linguistic aspects in film, both

old and new, demonstrate a national culture in other countries and foster transnational attitudes towards the ancient languages.

Together, the above strands, namely: film-language interaction, the Sanskrit revival movement, and communication theory on linguistic identity and soft-power, constitute the theoretical and empirical rationale of the analysis of the role of Indian cinema in the re-established cultural relevance and awareness of Sanskrit.

Methodology:

This research will be qualitative to investigate the usage of Indian cinema in encouraging and rejuvenating the Sanskrit language. The interpretation of the representation, the role, and the symbolic meaning of the Sanskrit language in chosen films and documentaries utilize qualitative content analysis. Such an approach will enable a detailed comprehension of the role of Sanskrit as a tool of the trade as well as the cultural and ideological icon in the films.

The study also applies the thematic analysis to find common patterns and themes regarding the use of the Sanskrit language in the cinema. These themes are the emergence of Sanskrit in the titles of the films, dialogues, chants, background music, the story lines and the allusions to philosophical and mythological matters. The study allows examining the role of Sanskrit in creating a cultural meaning and the national identity in the cinematic texts by classifying them.

Moreover, the case study approach is used to the chosen representative films, especially full-length Sanskrit films and mainstream films that involve the use of Sanskrit. These case studies give contextual and comparative answers to various forms of linguistic representations, including pure Sanskrit dialogue, use in symbols and rituals.

The information that will be used in this research is based on various resources, such as feature films and documentaries, film festival screenings, press coverage, interviews with directors and actors, subtitles, film scripts, and secondary scholarly articles. It is a triangulation of sources and guarantees the authenticity and increases the reliability of findings. In this methodological approach, the study considers the cinematic process as a linguistic revival/cultural transmission in modern India.

Case Studies — Pure Sanskrit Films:

Adi Shankaracharya (1983): Adi Shankaracharya (1983), which was directed by G.V. Iyer, is considered a historic film in India as the first full-length feature film to be made in Sanskrit. It is a documentary on the life and philosophy of Adi Shankaracharya, the follower of Advaita Vedânta, with convoluted metaphysical concepts like ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या coming out simpler through visual narration. The conscious decision to use Sanskrit is not rhetorical, as it supports the authenticity of the intellectual world of Shankaracharya. Cinema in this case acts as & दर्शन प्रसारक, which translates abstract philosophical speech into experience. The movie shows that Sanskrit has the power to transmit a story, a feeling, and a discussion, defying the assumption that it is not a fitting medium to convey a story in the contemporary world. Combining the classical language and the cinematic realism, Adi Shankaracharya turns into the icon of the linguistic restoration, and Sanskrit is a living philosophical language, which enhances the civilizational self-conception of India.

Priyamanasam (2015): The film Priyamanasam (2015) by director Vinod Mankara is an important step in the development of modern Sanskrit cinema, which tells the creative story of the 17 th -century poet Unnayi Variyar as he is writing Nala -Damayanti Kathakrti. The whole movie is in Sanskrit and uses lyrical dialogue, verses of the classical tradition, and cultural atmosphere to keep the audience plunged into the pre-modern culture. The fact that Priyamanasam has managed to portray the fluidity of Sanskrit, the language of romance, conflict, devotion, and artistic struggle, is what makes it unique. The fact that the film was very popular in other countries, where it won several awards at international film festivals, points to the possibility of Sanskrit to be used as a global culture communicator. It is a paradigm of भाषिक पुनर्जागरण in which the cinema plays a leading role in restoring interest in classical literature and the importance of Sanskrit in non-ritual or academic contexts.

Ishti (2016): Ishti (2016) is a groundbreaking Sanskrit movie, a change in language as it does not focus on mythological or philosophical issues, but rather, a modern social story. Raising such issues as patriarchy, rights of inheritance and social justice, the film shows that the Sanskrit language is not losing its topicality when addressing modern social reality. Even the title Ishti, which refers to a Vedic ritual, is a symbolic contradiction between tradition and the changing social ethics. The film contests the stereotype of Sanskrit as the language of the elite or of religious discourse by the fact that it is spoken in day-to-day conversations. Ishti is therefore a essential development of Sanskrit films in that it harmonized the language tradition with social change. It demonstrates the concept of how the language must not be stagnant, but alive and evolving; something that essentially happens only via cinema.

Bhagavadajjukam (2021): Bhagavadajjukam (2021) is a film based on a 7th-century Sanskrit prahasana (farce) of Bhodhayana. The movie is a creative mixture of humor, philosophy and satire, whereby Sanskrit is not a strict and dull subject, but a joki and mentally sharp one. The story features illusion (माया), identity and spiritual awakening through comic dialogues and metaphysical irony. Its screening at film festivals around the world shows the universal values of the Sanskrit dramaturgy when performed on the basis of the modern cinematographic means. The performative tradition of Sanskrit theatre is revived in Bhagavadajjukam, which ought to remind readers that in the past, classical literature was intended to be performed in front of people rather than preserved through texts. The movie plays a great role in redefining Sanskrit as a creative, entertaining and philosophical language in modern visual society.

Sakuntalam (2023): Sakuntalam (2023) is a film based on the Abhijnanasakuntalam, a work by Kâlidada, which is one of the brightest works of Sanskrit lit. Although adjusted to the present-day audience, the film manages to preserve the emotional and aesthetic essence of the original text श्रृंगार, विरह और करुणा. The themes of love, memory, duty and responsibility of the royalty are also foregrounded in the narrative and it shows how Sanskrit epics are relevant today. As a classical Sanskrit drama being taken to the mainstream cinematic productions, Sakuntalam fills the gap between the ancient and the modern visual narration of stories. It strengthens the influence of Sanskrit as a practice of developing the narrative traditions and culture of imagination in India. The movie is one of the examples of how cinema can be used as a cultural transmitter that not only preserves the literary heritage but also makes it open to the new generations.

Yaanam (2022): Yaanam (2022) is an innovative documentary that was the first science documentary produced in a pure form of Sanskrit, devoted to the Mars Orbiter Mission in India (मंगलयान). This documentary is a radical extension of the functional field of the Sanskrit language in the sense that it uses it to describe space science, technology and the national scientific success. Through technical terminology of Sanskrit and historical exposition of the story, Yaanam breaks down the idea that Sanskrit and modern science cannot coexist. It is symbolically an epic bringing together विज्ञान और संस्कृति, and India is showing the world its triumph in science using a traditional language. The cultural soft power of India is enhanced in the documentary as it introduces the Sanskrit as a language that can interact with sophisticated systems of knowledge. Thus, Yaanam is a brash statement of the flexibility and the viability of Sanskrit in the present.

Madhurasmitam (2020): Madhurasmitam (2020) is a Sanskrit children movie that is instrumental in socialization of the language and the exposure to culture at a tender age. The film presents Sanskrit to the young generation in an interesting and not threatening way through music, telling stories and through simple conversations. It focuses on language learning and emotion connection as its narrative approach focuses on joy (आनन्द), moral values and creativity. Madhurasmitam focuses on children, which is an important part of language revival, the intergenerational transmission. The movie shows that Sanskrit does not necessarily have to be a language of formal teaching but play, imagination and childhood wonder. Being a cultural project, it helps to standardize the use of the Sanskrit language and raise familiarity since childhood, and thus ensure that the language roots remain intact in a fast-modernizing society.

The usage of Sanskrit in cinema:

Linguistic Purity vs. Functional Use: Indian cinema shows two different, complementary ways of Sanskrit use: linguistic purity and functional integration. Movies like Adi Shankaracharya (1983) and Priyamanasam (2015) use Sanskrit as the entire means of dialogue and narration and abide by grammatical correctness, classical diction, and conventional prosody. This strategy helps to support the truth of Sanskrit as a complete narrative language and its ability to go beyond the narrow requirements of ritual. Conversely, most mainstream and local cinema uses Sanskrit in a functional mode, incorporating shlokas, mantras and classical phrases into scripts that are largely in the modern language. This is used in introduction invocations, background chants, title cards, and philosophical discussions. Such discriminating inclusion does not weaken Sanskrit, but, on the contrary, adds cinematic symbolism and naturalness. These two modes, combined, represent a cinema approach of striking the right balance- retaining the sanctity of the language and giving it wider accessibility by the audience thus resulting in the continuity of the Sanskrit culture in the visual media.

Symbolism and Cultural Identity: Sanskrit in cinema serves as an effective medium of cultural identity and moral philosophy. The Sanskrit chants, shlokas and aphorisms make one think of such concepts like धर्म (dharma), न्याय (justice), कर्तव्य (duty), and सत्य (truth), that are ingrained in the Indian civilization. The Sanskrit utterances, even a short line of the language used in mainstream cinema, usually produce an instant emotional and spiritual impact, imbuing scenes with seriousness and naturalness. This symbolic usage links ancient moral codes and modern stories, which serve to support the linkage of the past and the present. Sanskrit is now a cultural abbreviation - that is,

convention, holiness, and righteousness. The appeal to Sanskrit in pivotal moments of the storyline enables the filmmakers to evoke the collective memory of the culture and enhance the viewer interest as well as confirm the national identity. This means that cinema reinvigorates Sanskrit as living symbol of भारत की सांस्कृतिक आत्मा, and not dead relic of the classical.

Beyond Mythology -Modern Uses: The shift of Sanskrit cinema out of mythological and historical storytelling to the modern realm is one of the most notable developments in contemporary Sanskrit cinema. Yaanam (2022), a documentary about the Mars Orbiter Mission (मंगलयान) of India, is an example of such transformation, with the use of Sanskrit as a scientific discourse and contemporary success. Such new application raises a question to the common belief that Sanskrit is not able to be used to convey ideas about technology or science. Rather, Yaanam shows the conceptual malleability of Sanskrit and the richness of its terms in place of both making the language potentially able to interact with contemporary ज्ञान-विज्ञान. The relevance of Sanskrit in the 21 st century is reestablished through such cinematic experimentation to fit the national scientific pride and discourse on the future. The connection between ancient language roots and modern innovation makes cinema a knowledge-changing activity that broadens the functional horizon of Sanskrit and strengthens its position in the changing system of knowledge in India.

Analysis -Why These Films Matter:

The introduction and acceptance of the Sanskrit films in the Indian movie industry is not only important as a form of experiment in the arts; it has long term cultural implications; the implication of the language, identity as well as the perception of the world.

Linguistic Heritage:

Cinema makes Sanskrit & दृश्यमान and श्रव्य free once again, and the confined academic or ritual space is broken. Viewing the Sanskrit dialogues, chants and stories on the screen, the viewers rediscover & देवभाषा, the language that used to express the science of India (विज्ञान), its aesthetics (कला), and its spirituality (अध्यात्म). This aural-visual presence assists in balancing Sanskrit as a language of communication and not a symbolic treasure.

Cultural Pride:

Cinema like Sakuntalam and Priyamanasam revives the stories based on राष्ट्र-परंपरा which date way back before the time of the colonial influence. They confirm self-written Indian civilizational history, the belief in their own culture, and the intellectual self-respect. Cinema hence becomes a cultural reclaiming medium.

Soft Power:

A movie such as Yaanam, which depicts the space accomplishments in India in Sanskrit, tactfully integrates culture with modernity of science. These images portray India as a culture where ancient knowledge systems, and modern innovation do not contradict each other, which improves the cultural soft power and global reputation of India on the international stage.

Interpretation In terms of its applicability:

In Education and Media:

Sanskrit cinema has a huge potential as an educator especially in times when the visual media has a potent effect on the learning preferences. Similarly to how the global cinema and streaming sites have triggered the desire to learn languages like Spanish, Korean, or Portuguese, Sanskrit films may do the same and inspire viewers, particularly students, to learn in the language outside their textbooks. The presentation of Sanskrit in the form of interesting stories, music, emotions, and characters with whom people can relate to decrease the sense of difficulty and make the learning experience cultural. This is evidenced in films such as Madhurasmitam which attempt to show how with children watching the movies, the Sanskrit language can become normalized in real-life situations, and by documentaries such as Yaanam which have shown how Sanskrit can be used even in scientific circles. Films of this sort may also be used as audio-visual pedagogical devices in the educational establishment (as an addition to the classroom learning process) and as a means to foster the conversational acquaintance. Besides, the digital platforms and film festivals create a wider accessibility which enables the Sanskrit contents to be accessed by national and international viewers. In this way, the cinema is one of the intermediaries between the classical language education and modern media culture that promotes the maintenance of language revival.

Identity & Nationhood:

Sanskrit in a fast growing globalizing world that is homogenized culturally is a civilizational attachment point of the collective identity of India. This भारत -IDENTITY is reinvented through cinema as Sanskrit is originated as a living identity with continuity, wisdom and ethical principles. Cinematic representation of the Sanskrit as opposed to political or ideological statements evokes an emotional appeal that creates pride and not exclusion. Notably, even though the revival of Sanskrit in movies does not compromise the linguistic diversity in India, on the contrary, it enriches it by accentuating the common cultural understratum, which exists alongside local languages. Cinema that is based on Sanskrit literature and philosophy reminds people of the pluralistic tradition in which a number of languages were developed together with a shared intellectual tradition. Through offering Sanskrit in non-exclusive and imaginative shapes, the movies strengthen the national cohesion and preserve diversity. In this regard, Sanskrit cinema helps in the process of cultural integration as opposed to uniformity and can be seen as a non-coercive method of reinforcing national consciousness. Cinema is one of the ways through which Sanskrit is able to re-establish itself as a cultural reference point in the contemporary India through the use of storytelling, visuals and sound.

Conclusion:

The activity of Indian film industry with Sanskrit is much more than symbolic or ornamental use. Cinema has been involved in the restoration and reinterpretation of this ancient language through full-length Sanskrit feature films, socially significant films, and children films and even science documentaries. The movies like Adi Shankaracharya, Priyamanasam, Ishti, and Yaanam show that Sanskrit does not merely tell mythical tales but can also be used to convey philosophy, social commentary, imagination, and even scientific advances and inventions of our time (विज्ञान). Cinema restores audiences to listening and seeing Sanskrit on the screen and Sanskrit ceases to be seen as

a cultural artifact of a bygone era, but a living breathing expression of the culture.

In addition, Sanskrit films also promote self-confidence in the culture, the continuation of civilization, and the increased cultural soft power of India in the international arena. Significantly, linguistic diversity is not incompatible with this revival, but it augers well with the multilingual spirit in India since it anticipates a common culture and intellectual tradition. In the digital and visual era, cinema becomes a potent instrument that will see that Sanskrit will still stand out- not only in books and classrooms, but also in the hearts, minds and screens of both the current and future generations.

Bibliography:

Crystal, D. (2000). Language death. Cambridge University Press.

Gunasekhar. (Director). (2023). Sakuntalam [Film]. Gunaa Teamworks.

Iyer, G. V. (Director). (1983). Adi Shankaracharya [Film]. National Film Development Corporation of India.

Iyer, G. V. (Director). (2016). Ishti [Film]. NFDC India.

Mankara, V. (Director). (2015). Priyamanasam [Film]. Kerala State Film Development Corporation.

Nair, S. (Director). (2020). Madhurasmitam [Film]. Kerala State Children's Film Development Corporation.

Narayanan, V. (Director). (2022). Yaanam [Documentary Film]. Vigyan Prasar, Government of India.

Nye, J. S. (2004). Soft power: The means to success in world politics. PublicAffairs.

Pollock, S. (2006). The language of the gods in the world of men: Sanskrit, culture, and power in premodern India. University of California Press.

Raghavan, M. (Director). (2021). Bhagavadajjukam [Film]. Indian Cinema Company.

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

कैलास बबन माने

शोध-छात्र

बलवंत कॉलेज, विटा

डॉ. राजेंद्र पी. भोसले

शोध-निर्देशक

for the paper titled

'नृपशम्भु' के हिंदी काव्य का व्याकरण-विचार परक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2025, Vol. 12, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

अमरनाथ साकेत

शोधार्थी

डॉ. संगीता मुखर्जी

निर्देशक, राजनीति विज्ञान विभाग,

पं. दीनदयाल उपध्याय शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जिला-सागर (म0प्र0)

for the paper titled

धर्म और राजनीति का सम्बन्ध

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Monjoy Das
Department of Mathematics,
Sona Devi University, Ghatshila, Jharkhand

for the paper titled

Mathematical Modeling and Computational Approaches in Biological Systems: A Biomathematical Exploration

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

रश्मि नामदेव

शोधार्थी (शिक्षा), भारती विश्वविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)

डॉ. सुनील कुमार

शोध निर्देशक (शिक्षा), भारती विश्वविद्यालय दुर्ग (छ.ग.)

for the paper titled

माध्यमिक विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रेरणा के मध्य संबंधः एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. चन्द्र भूषण गुप्त

असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग

रानी दुर्गावती शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय

मण्डला, मध्य प्रदेश

for the paper titled

मण्डला जिले से प्राप्त प्रागैतिहासिक कालीन अवशेष

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Radha
Research Scholar, Department of Management, Shri Khushal Das University, Hanumangarh
Prof.(Dr.) Sandeep Shandilya
Research Supervisor

for the paper titled

Employer-sponsored Skill Development And Workforce Outcomes In Indian Public Sector Enterprises: A Critical Review With Special Reference To National Fertilisers Limited

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

सुनील

(प्राथमिक अध्यापक),

राजकीय प्राथमिक पाठशाला,

मांडी-16299 पानीपत (हरियाणा)

for the paper titled

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और हिंदी भाषा का भविष्य

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Sangeeta Shrivastava
Bharti Vishwavidyaly
Durg, Chhattisgarh

for the paper titled

Shiva's Communication Style and Its Relevance in Today's Scenario

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. प्रीती ग्रोवर

शोध निर्देशिका, प्रोफेसर, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर

गगनदीप कौर

शोधार्थी - टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर

for the paper titled

श्री गुरुनानक देव जी के विचारों की वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता का अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. चंद्रकांता कुमावत

डॉ. अलकनंदा शर्मा

विभाग अध्यक्ष ज्योतिष एवं वास्तु संस्थान,
माणिक्य लाल वर्मा श्रमजीवी कॉलेज,
टाउन हॉल परिसर राजस्थान विद्यापीठ उदयपुर राजस्थान

for the paper titled

बाल विकास में ज्योतिष का महत्व

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

श्रीरेषा टी. ए.
शोधार्थी,
श्री शंकराचार्य संस्कृत सर्वकलाशाला, कालटी, केरल

for the paper titled

यात्रा साहित्य में सामाजिक यथार्थ : बादलों में बारूद के संदर्भ में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Sanyukta Thorat
Department Head and Associate Professor Department of Fine Arts and Chhand Mandir
Rashtrasant Tukdoji Maharaj Nagpur University

for the paper titled

Play Lower Depths - A Study

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. प्रीति ग्रोवर

आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

कृष्णा कुमारी

एम.एड, एम.ए. (संस्कृत) UGC, NET/JRF, Ph.D. (Sanskrit)

शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

for the paper titled

उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की तर्क योग्यता का समय नियोजन एवं आत्मविश्वास का तुलनात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. सुमन रानी

शोध निर्देशिका -सह आचार्य, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

पवनप्रीत कौर

शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

for the paper titled

शिक्षा स्नातक संस्थानों में अध्ययनरत प्रशिक्षणार्थियों की साम्प्रदायिकता तथा जातिवाद के प्रति अभिवृत्ति : एक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Jagdish Rai
(Research Scholar)
Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala University, Jhunjhunu, Rajasthan

Dr. Aman Gupta
(Assistant Professor)
Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala University, Jhunjhunu, Rajasthan

for the paper titled

Financial Inclusion 2.0: Bridging the Access-to-Usage Gap Through Digital Infrastructure and Policy Convergence in India and Africa

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Vaishali Singh
Assistant Professor
Education Department
Smt- Anar Devi T.T. College, Bakharana (Kotputli) Jaipur Rajasthan

for the paper titled

डिजिटल युग में स्मार्ट क्लासरूम और प्रभावी शिक्षक के गुण : शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Mahesh Chand Gurjar
Education department
Assistant professor
Smt. Anar Devi Teacher's Training College Bakharana (Kotputli) Jaipur Rajasthan

for the paper titled

शिक्षा और बेरोज़गारी की समस्या : शिक्षकों के व्यावसायिक विकास की भूमिका

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Vaishali Singh
Assistant Professor
Education Department
Smt- Anar Devi T.T. College, Bakharana (Kotputli) Jaipur Rajasthan

for the paper titled

ग्रामीण भारत में हिंदी का विकास और शुद्ध लेखन की आवश्यकता : व्याकरण, शिक्षा और भाषा के दृष्टिकोण से

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Suresh Kumar
Ph.D. Scholar, Department of Social Work, Central University of Himachal Pradesh

Teiborlang Dkhar
Assistant Professor, Ri War College, Meghalaya

for the paper titled

A Comparative Study of Two Different Cultures: The Gaddi and the Khasi Tribes

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अर्चना

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग,

भक्त फूल सिंह महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलाँ, सोनीपत, हरियाणा

for the paper titled

समुदायों की राजनीतिक सहभागिता और प्रतिनिधित्व : लोकतांत्रिक भारत में समावेश की दिशा में एक विश्लेषण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Ravi Kumar

(Research scholar), Faculty ofArts, Craft & Social Science, Tantia University, Sri Ganganagar.(Raj)

Dr. Mukesh Kumar

Supervisor - Assistant professor, Tantia University, Sri Ganganagar.(Raj)

for the paper titled

अंतरिक्ष एवं खगोल विज्ञान अनुसंधान में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) भारतीय वेधशालाओं पर विशेष दृष्टि

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Shivendra Srivastava
Asst. Professor, GDC Sugh-Bhatoli
Dist. Kangra, Himachal Pradesh

for the paper titled

Imperial Perceptions of Nature and Animals: Study of Hunting Culture During Mughal Emperor Jahangir (r. 1605-27)

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

सीमा देवी

शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,

जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू

for the paper titled

वैदिक युग में यज्ञ पर्यावरण संरक्षण का प्राचीन उपाय

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डिम्पल अग्रवाल

सहायक प्राध्यापक वाणिज्य

नवीन शासकीय महाविद्यालय, चपले जिला रायगढ़ (छ.ग.)

for the paper titled

नई शिक्षा नीति की समस्याएं एवं चुनौतियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. अलका शर्मा

सह प्रवक्ता, किशन लाल पब्लिक कॉलेज,

रेवाड़ी 123401 (हरियाणा)

for the paper titled

कबीर की सामाजिक प्रासंगिकता

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)

UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

रंजना

शोधार्थी- के०जी०के०पी०जी० कॉलेज मुरादाबाद

प्रो. चंद्रभान सिंह यादव

शोध पर्यवेक्षक- हिंदी विभाग, के०जी०के०पी०जी० कॉलेज मुरादाबाद

for the paper titled

स्त्री चेतना के विकास में हिंदी की साहित्यिक पत्रिकाओं का योगदान

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Ravi Shankar Kumar

Assistant Prof. in French

Arignar Anna Govt. Arts & Science College, Karaikal

for the paper titled

Ecological Memory in Contemporary French Literature

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

प्रमोद कुमार गोंड

शोधार्थी

डॉ. रश्मि जैन

प्राध्यापक, निर्देशक

for the paper titled

आदिवासी साहित्य में लोकजीवन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. राखी क्लेमन्ट

सहायक आचार्य एवं विभाग अध्यक्षा

हिन्दी विभाग, सेन्ट.पॉल्स कॉलेज, कळमश्शेरी, एरणाकुलम, केरल

for the paper titled

अरुण कमल की कविताओं में अभिव्यक्त पारिस्थितिक संकट की पहचान

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor
6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Savita Gill
Research scholar
Music Vocal
PGGCG – 11, CHD

for the paper titled

भारत में संगीत शिक्षा के विभिन्न प्रकारों का अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. मोहित कुमार नागर

for the paper titled

पत्रकारिता, विज्ञापन और गांधी

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

https://doi.org/10.5281/zenodo.18432959 ISSN:2348-5639

शोध समालोचन

Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Gurbasppa Neelkanth Karpe
Assistant Professor
School of Languages and Literature,
Punyashlok Ahilyadevi Holkar Solapur University, Solapur, Maharashtra

for the paper titled

"*Divyavânî* to Digital Screens" highlights Sanskrit's journey from sacred speech to popular visual narrative

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

January - March 2026, Vol. 13, Issue-1

Executive Editor
Dr. Varsha Rani
M. Ed. , MA (sanskrit)
UGC NET/JRF, Ph. D

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

*This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152